सकारात्मक स्पंदन पुष्टि - बैठकजी

Vibrant Pushti

' जय श्री कृष्ण "

बैठक–1

गोविन्दघाट:श्रीमद् गोकुल

यहां पर श्रावण शुक्ल 11 की अर्ध रात्रि में प्रभुजी को दैवी जीवों के उद्धारार्थ ब्रह्म सम्बन्धकी आज्ञा की है। " ब्रह्म सम्बन्ध करणात् सर्वेषां देह जीवयोः" । श्री महाप्रभुजी ने श्रीजी को पवित्रा धरा कर मिश्री भोग धराया है, श्री की आज्ञानुसार सर्व प्रथम ब्रह्म सम्बन्ध प.भ. दामोदरदासजी हरसानी को हुआ है। श्री यमुना तट पर छोंकर वृक्ष के नीचे प्रभु श्रीवल्लभ विराजित है।

प्रथम बैठकजी - " ब्रह्म संबंध कर्णात " अर्थात ब्रह्म से संबंध जोड़ने का, बांधने का - करने का - संबंध कभी लेना नहीं होता। श्रीवल्लभाचार्यजी ने ब्रह्म से संबंध करने की पुष्टिमार्ग सिद्धांत संस्कार पद्धति हमारे जैसे सामान्य जीव के लिए, यही मुख्य स्थली से प्रस्थापित किया है। जिससे जीव को ज्ञान हो - जीव में भक्ति भाव जागे - मैं कौन हूँ? क्यूँ हूँ? जीवन और जगत के समय काल में सेवा - दिशा और पुरुषार्थ से सृष्टि को सर्व श्रेष्ठता से सिंचित और प्रदान करूँ। जो उन्होने अपने जीवन चरित्र से प्रमाणित किया। प्रथम बैठकजी की सार्थकता ही हमें प्रेरित करती है। **"स्वरूपस्थ: यदा जीव: कृतार्थ: स निगध्यते " " दंडवत प्रणाम श्रीआचार्य " " जय श्री कृष्ण "** **" Vibrant Pushti "**
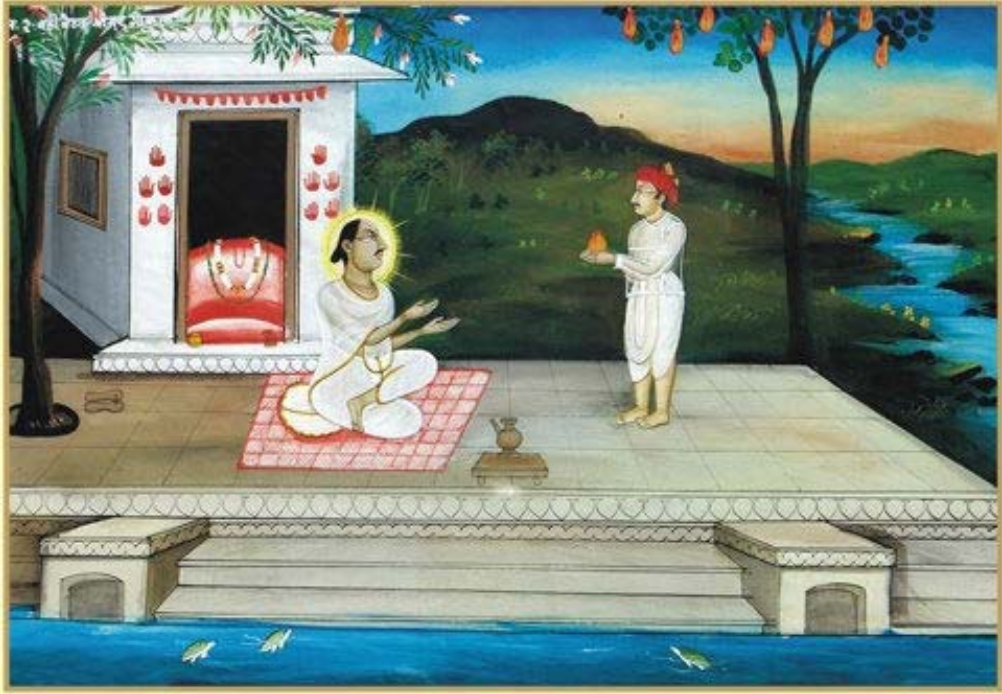
द्वितीय बैठकजी - श्रीवल्लभाचार्यजी यही स्थली से पुष्टिमार्ग सिद्धांत श्रीसुबोधिनिजी आधारित नित्य वचनामृत रसपान करते थे, जिससे सृष्टि के अनेक प्रकारके जीवों में पुष्टि संस्कार सिंचन और योग्य परिवर्तन होता था। ऐसे परिवर्तनों से उनकी आसपास के वृक्ष, वनस्पति, पंखी, कीटक और मानव जीवों में आनंदित श्रेष्ठता जागृत होती थी। वृक्षने अपने रस से ऐसे बटुबे उगाये की कहीं जीवों ने अचंबित हो कर श्रीवल्लभाचार्यजी के शरण में रख्खे, बटुबे खोलने से आश्चर्य - ओहह शालिग्रामजी! साक्षात पधारे हमारे आँगन। कितना अदभूत!
" अलौकिकता: तु वेद: उक्ता: साध्य साधन संयुता: " श्रेष्ठ सिद्धांत - **" स्वे स्वे कर्माणी अभिरथा "** जो खुद जागे - सर्व को जगाये - सर्वथा जागे तो ब्रहम जागे। **" Vibrant Pushti "**
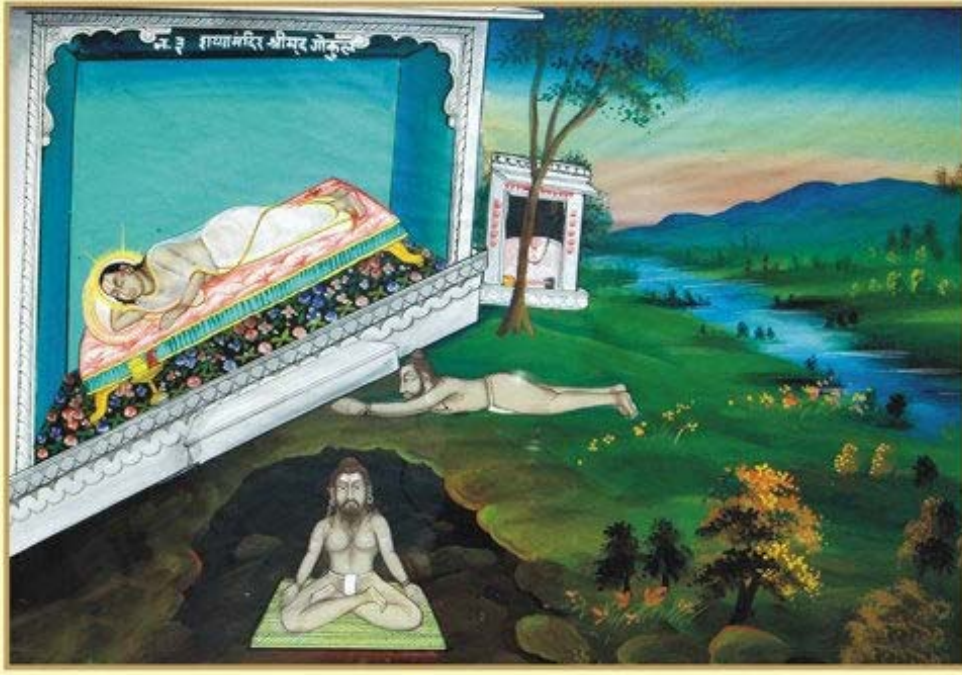
बैठक–3

शय्या मंदिर; श्रीमद् गोकुल

तपस्यारत योगेश्वर ने गोकुल फिर से बसने और सात मंदिर निर्मित होने विषयक भविष्यवाणी की थी। शय्या मंदिर श्री द्वारिकानाथजी के मंदिर का ही एक भाग है, यहा वंल्लभ प्रभु शयन करते थे।

तृतीय बैठकजी - दैवी जीवों के लिए एक एक सिद्धांत - एक एक द्रष्टि अपने पुरुषार्थ से सिद्ध करते करते पुष्टिमार्ग को श्रेष्ठतम धर्म स्वीकार करने अपने आपको हर प्रणाली में समर्पित करते थे **" समर्पणेन आत्मन: हि तदियत्वं भवेद् ध्रुवम्।"** जो जो स्थली पर बिराजते थे, संकल्प ले कर - ध्येय ले कर। वहीं रहना - वहीं जागना - वहीं शयनना - वहीं अध्ययनना - अर्थात स्थिरता से खुदको जगाना - सर्वत्रको जगाना । दैवी जीव - जो जीव सकारात्मक से जिये है वह दैवी जीव है, जो नकारात्मक्ता से जिये वह असुरी जीव है। पुष्टिमार्ग सिद्धांत संस्कार का यही सिद्धांत है।

तृतीय बैठकजी का स्पर्श, दर्शन और दंडवत हमें यही हि आज्ञा करती है **" भक्तिमार्गीय सन्यास: तु साक्षात् पुष्टि पुष्टि श्रुतिरूपाणां रासमण्डल मण्डनानाम् स्वयम् एव उक्तम् "।** **" Vibrant Pushti "**
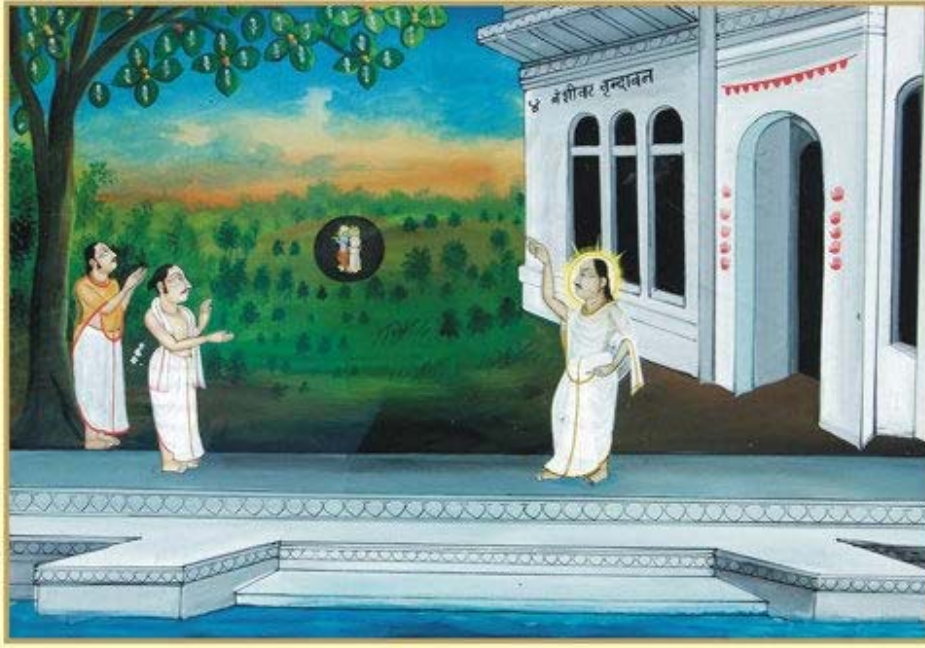
बैठक–4

बंशीवट; वृन्दावन

वृन्दावन बिहारी श्यामसुन्दर के चरण स्पर्श से पुनीत हुए वृन्दावन का दिव्य स्वरुप श्री महा प्रभुजी ने यहां प.भ. प्रभुदास जलोटा को दिखलाया था। " वृक्षे वृक्षे वेणुधारी, पत्रे पत्रे चतुर्भुज" इसी स्थल पर प.भ. गोपालदासजी गोड़िया को आचार्य चरण ने श्री शालिग्रामजी के स्वरुप में ही श्री राधारमणजी के दर्शन कराये थे।

चतुर्थ बैठकजी - श्रीआचार्य चरण जहां जहां पधारते थे, वहां वहां अपने सामर्थ्य से दैवी जीवों को स्पष्ट संकेत होते थे की पुष्टिमार्ग सिद्धांत संस्कार की अनोखी लीला हमें स्पर्श होनी है। चतुर्थ बैठकजी में जो जीवों को जो दर्शन में आशक्ति थी उसी प्रकार से लीला प्रकट भई। जैसे श्रीवल्लभाचार्यजी वृंदावन स्थली पधारे वृंद के वृक्ष के हर पत्ते पर **श्री वृंदावन बिहारी और श्रीराधारमणजी** प्रकट भए।

" भगवान् यदा येन रुपेण कार्यम् कर्तुम् इच्छति, तद् रूपम् एव व्यापारयति, तत्र ज्ञानेन मोक्ष: देय इति यदा विचारयति तदा अक्षरम् एव ब्रह्म स्वरूपम् पुरुषोत्तमस्य आधार भाग: चरण स्थानीय: तम आदौ चतुमूर्तिम् करोति। अक्षर रूपम् ब्रह्मरूपम् कालरूपम् स्वभावरूपम् च। "

मनुष्य जीवन की सार्थकता सिद्ध होती है - जहां ज्ञान + भाव (भक्ति) और श्रेष्ठ परम भगवदीय जीवों का एकात्मता परम श्रेष्ठ आचार्य से समन्वय हो, उन्हें सदा ब्रह्म स्वरूप के दर्शन होते ही है। **" Vibrant Pushti "**
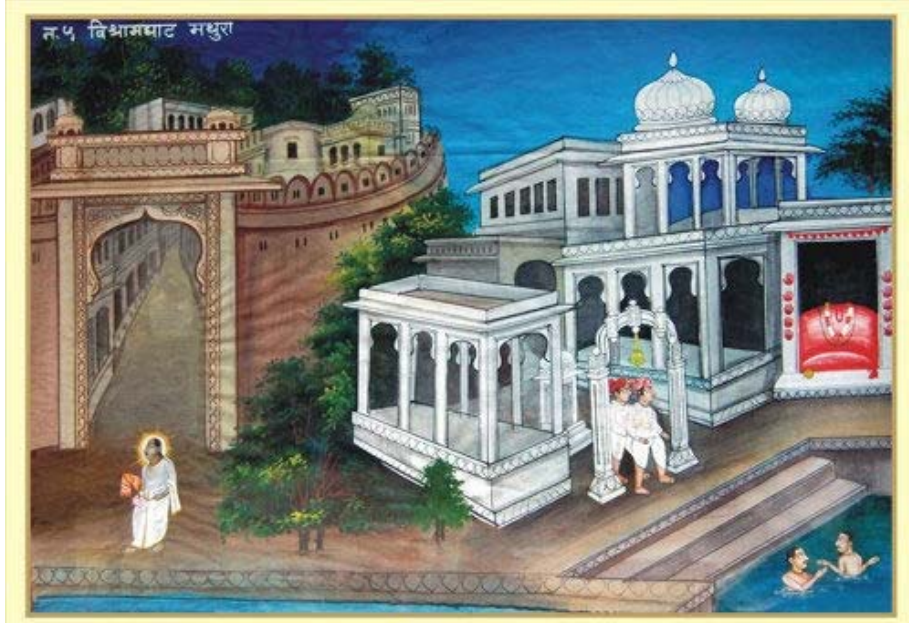
पंचम बैठकजी - पुष्टिमार्ग सिद्धांत संस्कार की पद्धति को अपनाने से अज्ञान, अहंकार का नष्ट होता है। सिद्धांत लीला में अपनी मंत्रात्मक विध्या से अविध्या, अंधश्रद्धा, तांत्रिक विध्या का प्रभाव को नष्ट किया। मलेच्छ तंत्र यंत्र को श्रीवल्लभाचार्यजीने अपने शिष्यों को षोडस रचनाओ से पुष्टि बल ऐसा प्रदान किया की उन्हें कोई तांत्रिकता - यांत्रिकता की असर ही नहीं होती थी। न कोई अविध्या, अंधश्रद्धा, मान्यता कोई स्पर्श होता था **" न जातु यम यातना भवति ते पय: पानत: "** यही तो श्रेष्ठता है श्रीयमुनाजी के स्मरण से, दर्शन से, पान से।

" व्यावृत: अपि हरौ चितम् श्रवण आदौ यतेत् सदा। तत: प्रेम तथा आसक्ति: व्यसनम च यदा भवेत् " कितना अदभूत ! श्रीवल्लभाचार्यजी हमें इतनी सूक्ष्मता से तैयार करते है, जिससे हम सदा पुष्टिमार्ग सिद्धांत से जीवन व्यवहार व्यतीत करें और जन्म सफल हो जाय। **" दंडवत प्रणाम आचार्यावर "** **" Vibrant Pushti "**

बैठक–6

श्री मधुवन

कदम्ब वृक्ष के नीचे बिराजकर यहाँ श्री महाप्रभुजी ने श्रीमद् भागवत पारायण किया था। उस समय श्रीमहाप्रभुजी के साथ 6 वैष्णव थे, जिनके नाम है :– 1 श्री वासुदेवदास छकड़ा 2 श्री यादवेन्द्रदास कुम्भार 3 श्री गोविन्द दुबे 4 श्री माधव भट्ट काश्मीरी 5 श्री सूरदास 6 श्री परमानन्ददास मधुवन में सूर्य कुण्ड है और श्री मधुवनिया ठाकुर जी बिराजते है।

षष्ठी बैठकजी - " सेवायां वा कथायां वा यस्य आसक्ति: द्रढ़ा भवेत " अपने हर चिंतन, ज्ञान, भाव को द्रढ़ता भरा आसक्त करके एक एक डग ऐसे भरते थे, जिससे हर वचन, हर कार्य, हर रीति, हर निधि वैष्णवता उत्स करती थी। खुद आचार्य थे इसीलिए उनके आसपास सदा पुष्टि संस्कार का ही सिंचन हो - जो जो उनकी ओर आकर्षित होता था या उनकी द्रष्टि जहां जहां पहुंचती थी वहां वहां पुष्टि पंकज खिलता था। हर जीव मधुरस का पान करके माधुर्य पाता था। **" वरणीयं सुंदरम् इति स्वत: दोष अभाव उक्त:, भजनीयगुणान् वदन् सेवक उद्धारम् आह "** यही तो स्पंदनता है श्रीवल्लभाचार्यजी की बैठकजी का रहस्य। अदभूत ! **हे वल्लभ ! सदा मुझे आपके शरणमें रखना।**

" साष्टांग दंडवत प्रणाम " " Vibrant Pushti "
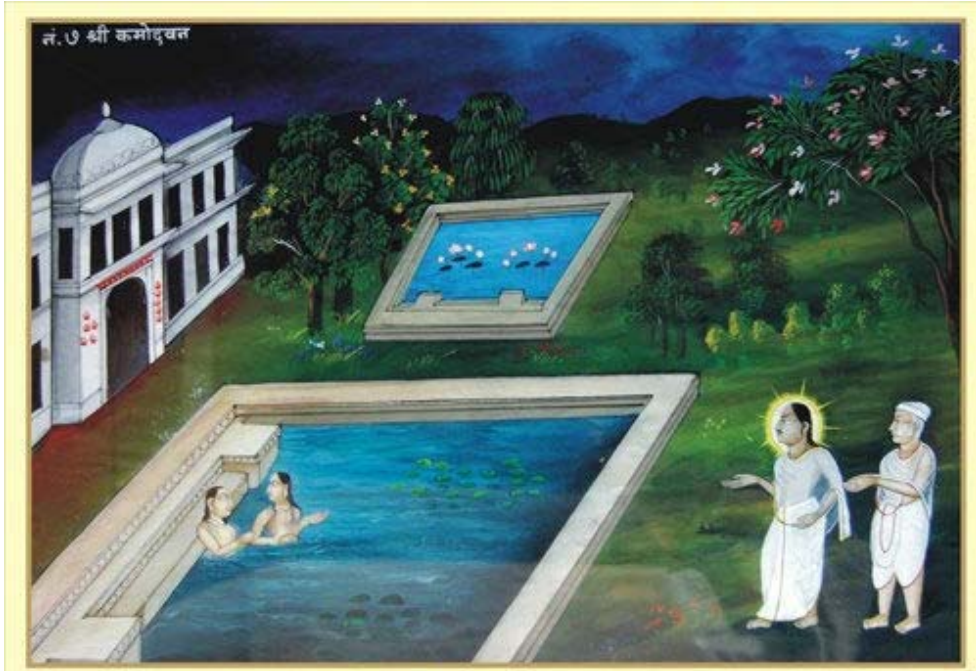
सप्तम बैठकजी - **" वैष्णवता से वैष्णव भए - शिष्य से वैष्णवता बिखराए "** वाह आचार्य श्री वल्लभ ! यह तो केवल आपके सामर्थ्यता का ही पंचम है। स्त्री को सन्मानीत करने की आचार्यता के लिए आपको नमन। आपका शिष्ट वांचन से दो सहचरियों ***कुमुदा - कुमुदिनी*** को जो उत्कंठा जागी जिससे उनके आसपास के सारे वन और जलाशयों को अलौकिक कर दिया - **वैष्णवता ही वैष्णवता** !

" एतेन परस्पर वरणम् उक्तम्, वरणत्व उक्त्या यथा कन्या स्व अभिमतम् एव स्व पतित्वेन वृणुते वरो वा, तादशीम् एव कन्या स्व स्त्रीत्वेन तथा च भगवान् स्व दासत्वेन आत्मीयत्वेन अङी करोति इति उच्यते, तथा च यथा तद् अनंतरम् न अन्यत्र विनियोग: तस्या: तथा एव एतस्य अपि इति ज्ञापितं भवति " " मेरे श्री वल्लभ! स्वीकारो मेरे दंडवत - मुझे भी स्वीकारो अपने शरण " " Vibrant Pushti "

अस्ठ बैठकजी - गोकुल - गौ का कुल । हमारा कुल कोनसा? जो कुटुंब में जन्म धरे उनका कुल। पर शास्त्रोक्त और सत्य तो यही है की हमारा कुल हम खुद ही शिक्षित करते है। श्रीवल्लभाचार्यजी के चरित्र से ही सिद्ध होता है - वल्लभ कुल । क्यूँ श्रीवल्लभ के कौटुंबिक कुल को प्राधान्य नहीं है? क्यूँकी **हर एक जीव अपने पुरुषार्थ, कर्म, ज्ञान, भक्ति और शिक्षा से ही अपना कुल दिक्षित और शिक्षित करते है** - जैसे ***कर्ण - विदुर*** आदि।

श्रीवल्लभाचार्यजी ने जो स्थली पर अपना शिष्ट वांचन किया, वह हर स्थली का महात्मय सिद्ध किया - बहुलावन गौंए से अस्तित्वमें था, हर गौंए में सामर्थ्यता सिद्धि थी पवित्रता, शुद्धता और स्व समर्पण भाव की। हमारा शरीर भी गौं अर्थात इंद्रियों से भरा है - जिसकी इंद्रियाँ पवित्र, शुद्ध और स्व समर्पित होगी वह जीव वैष्णव है। एक एक इंद्रियों का महत्व श्रीवल्लभाचार्यजी ने ऐसा समजाया की हर इंद्रिय मधुर रस पीने लगी - हर इंद्रिय मधुर रस लूटाने लगी। यही महात्मय है इस बैठकजी का - बबुल को बहुल कर दे।

" स्वरुपस्फूर्ति एव सर्वेषा सर्व अविध्या नाशक इति अर्थ: स्वरूपम् एव अविध्यानाशकम्, प्रमयबलम् एतत् "

" दंडवत प्रणाम " **" Vibrant Pushti "**

नवम बैठकजी - गौर से द्रष्टि रखना श्रीवल्लभ के कोई भी चित्रजी पर - प्राथमिकता जागेगी दासत्व स्वामिनिजी की - स्वामिनिजी का दास स्वरूप से श्रीवल्लभ हमारी द्रष्टि में एकात्म होते है। ओहह ! अदभूत प्रगाढ़ता ! अदभूत एकात्मता ! अदभूत सेवकता !

व्रज रज की अनोखी बैठकजी जो दशे दिशाओं से प्रेमरंजीत, श्रीयुगल स्वरुप और श्रीवल्लभ यही पुष्टिरंजीत सखियों से प्रीत रस का रंग बिखरा कर पुरी सृष्टि को अलंकृत करती है। व्रज भूमि की श्रेष्ठ स्थली - जहां नीत नीत उत्सव, नीत नीत सत्संग, नीत नीत परमानंद लूटा जाता है। राधाकुंड बैठकजी की प्रीत लूभावनी स्थली।

" सर्व आनंदमयस्य अपि कृपा आनन्द: सुदुर्लभ: " पुष्टिमार्ग सिद्धांत संस्कार की यही रीति है - सदा समर्पण - सदा न्योछावर " तो " सदा कृपा आनन्द - परमानन्द " नमः श्रीवल्लभाचार्यजी चरण " **" Vibrant Pushti "**

बैठक–10

श्री मानसीगंगा (गोवर्द्धन)

यहां श्रीकृष्ण, चैतन्य और श्री महाप्रभुजी का मिलाप हुआ है, आचार्य श्री ने मानसीगंगा का आधिदैविक स्वरूप वैष्णवों को दर्शाया और श्रीमद् भागवत का पारायण किया था।

दशम बैठकजी - मानसी गंगा - अदभूत स्थली ! मन से मनुष्य या मानव अर्थात जो भी है - मन से। तन मन से, धन मन से, जीवन मन से, कर्म मन से, फल मन से, संबंध मन से, धर्म मन से, ज्ञान मन से, पुरुषार्थ मन से, विचार मन से, बंधन मन से, मुक्ति मन से, सेवा मन से, गति मन से, उपाधि मन से, संग मन से, रंग मन से, खेल मन से, प्रेम मन से.......... सर्वथा मन से - सर्वज्ञ मन से। श्रीवल्लभाचार्यजीने अपना सर्वस्व अपने मन से किया अर्थात मन को स्थितिप्रज्ञ करेंगे तो ही मन मानसी होगा। मन को मानसी करने पुष्टिमार्ग सिद्धांत संस्कार से ही स्थितिप्रज्ञ कर सकते है। श्रीवल्लभाचार्यजी की हर बैठकजी की संज्ञा ही यही है - स्थिरता। जो मन से स्थिर वो ज्ञान गंगा की स्थली पर अपने आप स्थान पाएगा - वहां चैतन्य अर्थात चित्त स्थिर होगा और आनन्द का प्राकट्य होगा। मानसी गंगा बैठकजी पर श्रीवल्लभाचार्यजी ने अनेक जीवों को ज्ञान गंगा से भिगोया। पुष्टिमार्ग सिद्धांत संस्कार से हमें भी खुदको भिगो कर प्रेम रस में तृप्त होना है।

" भगवत् कार्य: परमकाष्ठापन्न वस्तु कृति साध्य: । तादश: अपि भगवद् रूप: । यथा पुरुषस्य कर्म करण आदौ सामर्थ्यम् तेन स्व सामर्थ्येन अन्य अनुपजीवनेन स्व आत्मप्रपंचं कृतवान इति फलितम्। यथा घट आदिषु आमदशायाम् श्यामरूपेण आविर्भावे तथा व्यवहार:, पक्वे रक्तत्व व्यवहार: तद् रूपेण आविर्भावात् तथा इति। "

" दंडवत प्रणाम " " Vibrant Pushti "

ग्यारही बैठकजी - व्रज - निराला - अनोखा - अलौकिक - चिरस्मरणीय - चिदानंद प्रदेश। ब्रह्मांड का एक ही ऐसा प्रदेश जहां केवल आनन्द और आनन्द के हर प्रकार का स्पर्श होता है। **यशस्वी ऋषि मुनिओं, तपस्वीओं, भकतों और वैज्ञानिको का यह सिंचित प्रदेश की भूमि सर्वथा उत्तम है। यहां केवल और केवल प्रेम लहराता है, लूटाता है, बरसता है, बिखरता है, उत्सता है, जागता है, खेलता है, नाचता है।** अदभूत ! न कोई संदेह, न कोई संशय, न कोई भय, न कोई डर, न कोई आपत्ति, न कोई संजोग, न कोई भ्रम, न कोई असमंजस केवल विशुद्धता, निर्मलता, विविधता, अभिन्नता। **श्रीवल्लभाचार्यजीने जो साक्षात्कार किया उनका हरेक अंश उन्होने अपने बैठकजी के माध्यम से जगत को श्रेष्ठ मार्ग सिद्धांत संस्कार जगाया।** जो जो जीव यही बैठकजी का स्पर्श पाया वह पुष्टि कृपा का अनुग्रही हो गया। **कण कण में लीला - रज रज में प्रेम - लहर लहर में श्याम रंग।** श्रीवल्लभाचार्यजी की हर बैठकजी पुष्टिमार्ग सिद्धांत संस्कार से हमें सदा उनके निकट रखते है।

" हरे सेवया सर्वम् इति, भगवद् शास्त्रम् भगवत: मुखम् अग्नि:, स्वस्य वाकइंद्रियम् अग्नि: चेद, भगवन् मुखत्वम् आपध्यते " " स्वीकारो मेरे दंडवत आत्मीय प्रभु श्री वल्लभ " " Vibrant Pushti "

द्वादश बैठकजी - अलौकिक - विश्वसनीय - अदभूत ! हर कोई समझता है - मान्यता का विश्वास नहीं होता है पर श्रद्धा का विश्वास अवश्य है। हमने जो सूत्र अपनाए - हमने जो शास्त्र अध्ययन किए, हमने जो अनुभव पाया जिसमें केवल योग्यता आधारित और ब्रह्मांड परिवर्तन आधारित जो सिद्धांत पाये उन्हींके अनुसार तो अवश्य अपनाएँगे की कितनी सातत्यता है हमारी श्रद्धा में - हमारी द्रडता में। जैसे परिवर्तन पाते पाते हमारा अस्तित्व है वैसे ये विग्रह का भी अस्तित्व है, चाहे वो कोई भी पदार्थ का हो !। **श्रीनाथजी का प्राकट्य और श्रीवल्लभाचार्यजी प्रथम मिलन एक ऐसा साक्षात्कार है जो परिस्कृत करता है**, जो परम श्रेष्ठ आत्म तत्व है उन्हें अवश्य भगवदीय कृपानिधि की अनुभूति होगी ही। ये **काल लीला सदा धर्म संस्थापन** के लिए ही है।

" साक्षात्कार: तु ब्रह्म आधीन: । प्रसन्न तद् आविर्भवति इति लोकरीति अवगम्यते। आविर्भावर्थम् प्रेम सेवाम् निरुपयंती । " श्रीवल्ल्भाचार्यजी के हर शिष्ट वांचन से और जीव तत्वों की भक्ति से जो आमूल परिवर्तन से श्रेष्ठता का प्राकट्य होता है, यही प्राकट्य से ही सृष्टि में आनन्द का आविष्कार होता है। आन्योर एक ऐसी ही स्थली है जहां श्रीनाथजी का प्राकट्य और आचार्य श्रीवल्लभ का प्रथम मिलन - जो सारी वैष्णव सृष्टि में श्रद्धानंद स्थापित हो गया। **" नवपल्लित नवसर्जन नवदर्शन द्वादशांग प्रणाम "** **" Vibrant Pushti "**

त्रिदर्शी बैठकजी - पुष्टिमार्ग सिद्धांत संस्कार शैली की ज्योत जगाते जगाते श्रीवल्लभाचार्यजी व्रज प्रदेश की कहीं स्थलिओ पर अपने आपको प्रेमामृत किया, रज रज का स्पर्श करके अपने आपको व्रजेश कर दिया। पत्ते पत्ते, बूँद बूँद, पौधे पौधे, कीटक कीटक, पंखी पंखी, पशु पशु, जीव जीव और मनुष्य मनुष्य पुष्टि प्रेमत्व की ऐसी अनुभूति करने लगे की हर एक से एक गूँज उठने लगी - **राधे! राधे! कृष्ण! कृष्ण!**। हर कोई पुष्टि प्रेम रस में डूबने लगे। जो कोई भी जीव तत्व व्रज की सीमा में प्रवेश पाये - बस अपने आप गाता चले - **राधे! राधे! कृष्ण! कृष्ण!** उनके समकक्ष कोई आचार्य, भक्त और ज्ञानी भी यही प्रेमामृत रस में एकात्म हो जाता था। चारों ओर पुष्टि पताका लहेराती और हर जीव धन्य धन्य हो जाता।

"साधनं भक्ति: मोक्ष: साध्य:। तत्र हेतु: य: विमुच्यते स संघातं परित्यज्य ब्रहमणि लीयते, ब्रहमभावम् वा प्राप्नोति। तस्य स्वरुप आनन्द: स्वरूपेण वा आनन्द अनुभव:। स्वतंत्र भकतानाम् तु गोपिका आदि तुल्यानां सर्वे इंद्रियै: तथा अन्त:करण: स्वरूपेण च आनन्द अनुभव:। अत: भकतानां जीवन्मुक्त अपेक्षया, भगवद् कृपा सहित गृह आश्रम एव विशिष्यते।" इतनी जीवन सरलता के साथ साथ श्रेष्ठ पुष्टिमार्ग सिद्धांत संस्कार से जीव को उच्चता पाना। श्री आचार्यकी शैली सर्वे जीवों के उत्थान के लिए मार्गद्रष्टा और मार्गदर्शक बनी थी। **" Vibrant Pushti "**
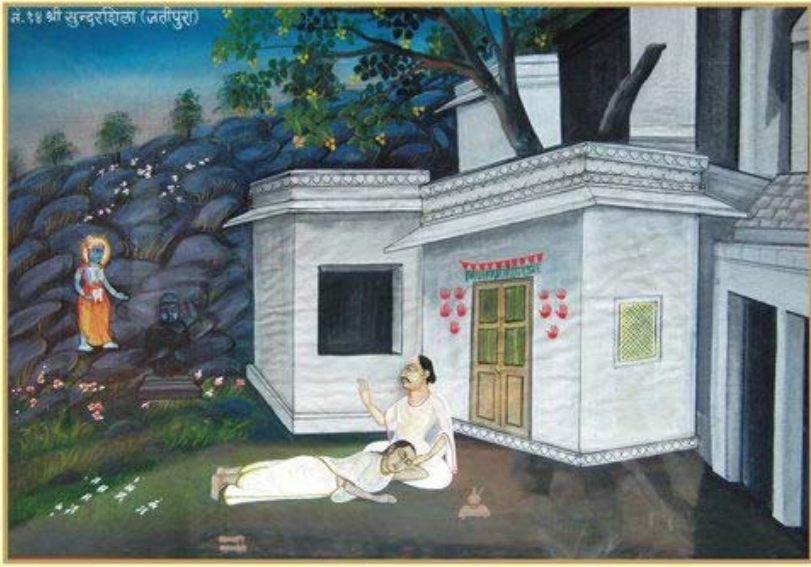
बैठक–14

श्री सुन्दर शिला (जतीपुरा)

श्री गिरिराजजी के मुखारविन्द के सन्मुख छोंकर वृक्ष के नीचे यह बैठक स्थित है, श्री महाप्रभुजी ने यहाँ ही श्री गोवर्द्धन पूजा कर '' सवा सेर भात '' का अन्नकूट किया था। यहाँ ही प. भ. श्री दामोदरदास हरसानी ने महाप्रभुजी को निंद्रित जानकर श्रीनाथजी को रूकवाने का संकेत दिया था।

चतुर्थदर्शी बैठकजी - श्री गिरिराजजी का मुखारविंद अनोखी और अलौकिक स्थली, जहां साक्षात श्री गिरिराजजी स्वयं मुख से भगवादियों को दर्शन देते है। निराली और भक्त विरह मिलन की अदभूत समन्वय स्थली। यही ही स्थली पर श्री दामोदर हरसानिजी ने श्रीगोवर्धननाथजी को रोका था - मेरे परम भगवदीय आचार्य गुरु अभी निद्रावश है - आप रुको जब तक वो उठे। **" गुरु गोविंद दोनों खड़े किसको प्रथम लागु पाय "** गोविंद से गुरु बड़े, जिसने गोविंद दिखाया, इसीलिए प्रथम लागु गुरु पाय। **" स्वयं तु स्पष्ट अर्थम् विभागं कुर्वन अवतारे भेदकम् आह। क्रियाशक्त्या बाह्य दु:ख निराकरण:, अर्थम् अवतार:। ज्ञानशक्त्या च आंतर दु:ख निराकरण अर्थम्। "** गोपालपुर - जतीपुरा और मुखारविंद के नाम स्मरण से प्रसिद्ध है। ***श्रीगिरिराजजी के मुखारविंद के सन्मुख सदा दासत्व हो कर श्रीवल्लभाचार्यजी और श्रीविट्ठलनाथजी (श्री गुसाइंजी) हर एक मनोरथ वैष्णवों के पूर्ण करते है।*** पुष्टिमार्गीय सिद्धांत संस्कार की यह प्राथमिक स्थली है। श्रीगोवर्धननाथजी (श्रीनाथजी) का प्राकट्य का महात्मय यह स्थली से मुख्यत्व आधारित है। **श्रीनाथजी सदा शयन लीला करने यही स्थली पर पधारते है।** यहां ही श्रीनाथजीने खुद को थाड़ा रहकर हवेली स्थापना की आज्ञा श्रीवल्लभाचार्यजी को की थी, जो शेठ पुरनमलजी ने पूर्णत की थी। आज भी वो प्राथमिक हवेली के मलवे का दर्शन करते है। पुष्टिमार्गी वैष्णव गिरिराज परिक्रमा - दूग्ध अभिषेक मनोरथ साथ दंडवत प्रणाम करके यहां से प्रारंभ करते है। " दंडवतति शीला - दंडवत प्रणाम " **" Vibrant Pushti "**

पंचदर्शी बैठकजी - गिरिराज तलेटी - गिरिराजजी - गोवर्धन - गोवर्धन तलेटी। हर स्थली रमणीय - हर स्थली पर लीला - हर स्थली पर भक्त वत्सला - कण कण में श्री कृष्ण - कण कण में श्री राधा - कण कण में राधा कृष्ण - कण कण में राधा वल्लभ - कण कण में राधे राधे ! कोई भी जीव - गिरिराजवासी - कोई भी जीव - व्रजवासी। इतनी मधुर स्थली से हर कोई जुड़े - इतनी मधुर जीवन शैली से हर कोई खुद को जगाए। श्रीवल्लभाचार्यजी ने अपने आपको इतनी तरह से निपुण किया की काल काल की तपस्या को पुष्टिमार्ग सिद्धांत संस्कार से उजागर कर दिया। हर स्थली का महात्मय अपनाकर - यहां जीवन जीते हर जीव की आत्मीयता पहचान कर **पुष्टिमार्ग निधि सेवा** के श्रेष्ठ पार्दुभाव जगाए। स्थली स्थली से हर एक को निकट रख कर हर जीव को पुष्टि जीव में परिवर्तित कर के परब्रह्म के सानिध्य से जोड़ा। **" अधिकारी देह व्यतिरेकेण स न भवति इति मोक्ष अर्थम् उत्पत्ति: अपि निरूप्यते । तत्र गृहस्थस्य एव मुक्ति: संदिग्धेति दंपत्यो: मुक्ति निरूपणम्। तत्र गृहस्थस्य मुक्तौ भगवत् संतोष: प्रयोजक:। तस्य अपि भक्तिज्ञानं योग: च आज्ञाकरणम् च। "** अदभूत श्रीआचार्य अदभूत ! श्री स्वामिनिजी साक्षात भोग थाल ले कर पधारे - ***अदभूत एवं अलौकिक कौटुंबिक गृहस्थ जीवन।*** **" दंडवत प्रणाम " " Vibrant Pushti "**

षष्ठदर्शी बैठकजी - समाज की मान्यता, अंधश्रद्धा को दूर करने के लिए श्रीवल्लभाचार्यजी ने ऐसे कदम उठाए, जो पुष्टिमार्ग सिद्धांत संस्कार में मनुष्य जीव को वैज्ञानिक संकेत और प्रेरणा संपादन कराई। पशुभोग - दैवी प्रसन्न - धागा - दोरा की मान्यता आदि को ऐसे ढंग से नाबूद किया की जो भी आंतर मन से - आत्मा से श्रीप्रभु स्मरण करे तो न कोई भूत - पिशाच, अंधश्रद्धा, धागा - दोरा आदि उनके निकट तो क्या - है ही नहीं ऐसा कोई तत्व यह सृष्टि में। जो स्मरण दिये - जो मंत्रात्मक सूत्र दिये - जो आध्यात्मिक चेतना प्रदान किए, जो शास्त्रोक्त और वेदोक्त श्रुति से रचे थे - जैसे ***- " जय श्री कृष्ण " " श्री कृष्ण शरण मम: "*** जिससे न कोई डर, भय और असमंजसता। निश्चयी और असर कारक प्रयोग सारे प्रदेश में पुष्टिमार्ग सिद्धांत संस्कार का सूर्य उगा दिया। हर एक निर्भयी हो कर जीने लगे, श्री प्रभु शरण में डूबने लगे। जैसे जैसे आत्म चिंतन व्याप होने लगा - कहीं कहीं स्थली से श्री परब्रहम का स्वरुप आविस्कार जागने लगे। ***श्रीगोकुलचंद्रमाजी - श्री मदनमोहनजी*** - कामवन की यह स्थली पर आज भी साक्षात्कार करते है। **" अन्य सेवा बहिर्मुखत्वेन श्रद्धाया: श्रवण अंगत्वम् । यथा दसविधलीलायुक्त अतिरिक्तस्य न श्रवणम्। " " भक्तिमार्गेण भजनम् मूल भक्ति: एव इति पुरुषोत्तम् भक्ति सिध्यर्थ प्राकट्य कथैव उक्ता सर्वत्र अवतारेषु । " " श्रेष्ठ मेरे श्री वल्लभ श्रेष्ठ " " Vibrant Pushti "**

बैठक–17

श्री गहवरवन

यह बैठक बरसाना गहवरवन में कुण्ड के ऊपर है। आपश्री ने यहाँ श्रीमद् भागवत पारायण किया था। मृत अजगर और चींटों के प्रसंग में श्री भागवत गूढार्थ के प्रकाशक श्रीमहाप्रभुजी ने यह उपदेश दिया था कि " संत महंतों को धर्म को जीवित रखना चाहिये, न कि स्वयं धर्म पर जीवित रहे। "

सप्तदर्शी बैठकजी - संत - भक्त - सेवक - दास - वैष्णव - तपस्वी - ऋषि - मुनि - सदगुरु - आचार्य यह शब्द का अर्थ सकारात्मक ही है। यह पद - सम्मान वो ही व्यक्तित्व पा सकता है, जो अति विशाल, श्रेष्ठ ज्ञानी, भगवदीय, आचरणीय और आदरणीय है। यह आत्मीय व्यक्तित्व केवल समाज का संस्कार उत्थापन और प्रेमानंद को संपादन और संस्थापन के लिए ही है। न कोई कुल से, न कोई उपाधि से की न कोई आगेवानी से यह पद हाशिल नहीं हो सकता। **पुष्टिमार्ग सिद्धांत संस्कार श्रेणीमें श्रीवल्लभाचार्यजीने कभी भी अपने कुल और अपने पूर्वजों को उपस्थित और प्रोत्साहित नहीं किया है।** **अष्टसखा और वैष्णव वार्ताए यह सिद्धांत संस्कार के मूल प्रमाण है।** आज भी श्री वल्लभ के कुल की मुख्य धारामें वो ही योग्य वैष्णव ही है जिससे पुष्टिमार्ग सिद्धांत संस्कार का संचालन करते है। गहरवन की गहराई भरा पुष्टि संस्कार यही ही है - जो श्रीवल्लभाचार्यजी बार बार संकेत करते है **- न कुल जानो -न कुल पहचानो - जानो पुष्टिमार्ग सिद्धांत संस्कार - जो अपनाए वो संत - भक्त - सेवक - दास - वैष्णव - तपस्वी - ऋषि - मुनि - सद्गुरु - आचार्य।**

" सर्व तिरोभाव: तु भगवद साक्षात्कारे । तदा न स्वप्न दर्शनम् । जागरणे अपि न देहादौ आत्मबुद्धि: किंतु सुषुप्तिवत सर्वदा ब्रह्म आनन्द अनुभव:। सर्वेषाम एव भगवद् गुणानुवादे परम आनन्द अनुभवात् । साधनम् च सुलभम् सर्वत्र सतां भगवद् गुण कीर्तनस्य नित्यत्वात । समीचीना भगवद चरित्र: उक्ति:, गूढ़ा गुप्ता । तेनैव हि भगवत प्रकाश: स च दुर्लभ इति न सर्व मुक्ति: । भगवत् सेवया द्वयम् अपि प्राप्यत इति। पश्चात भगवत् प्रसादे तद् उक्त प्रकारेण स्वेच्छया अपि सेवा भवति इति अर्थ " वाह! श्री आचार्य चरण वाह ! सरल - निखालस - सचोट और योग्य मार्गदर्शन । **" Vibrant Pushti "**
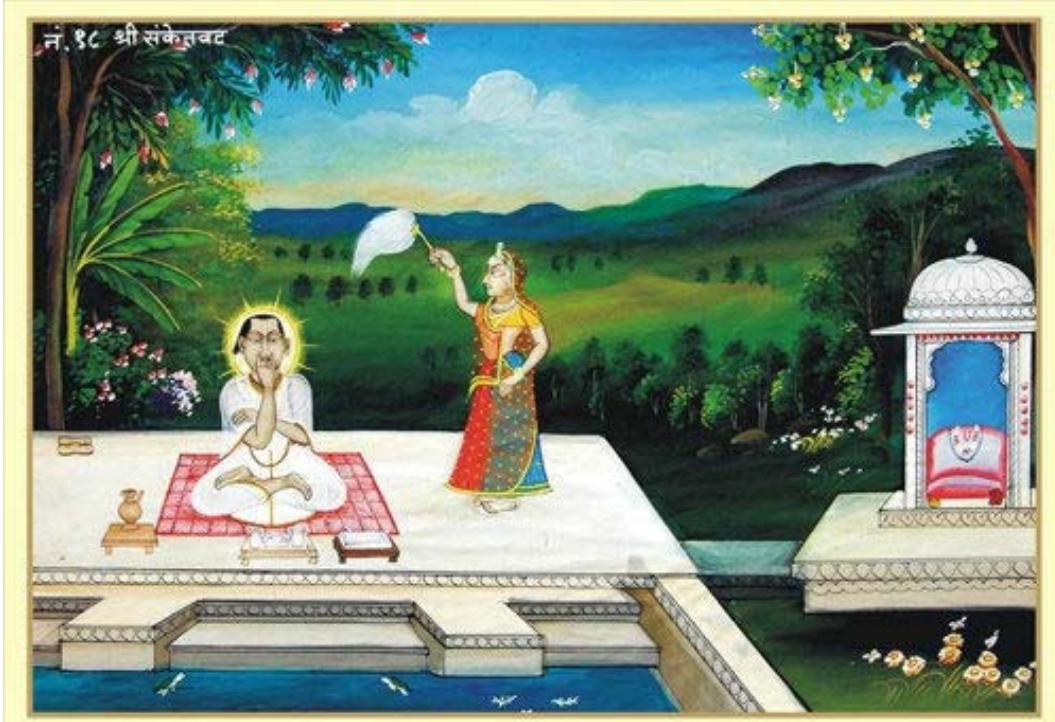
बैठक–18

श्री संकेतवट

कृष्ण कुण्ड के ऊपर छोंकर वृक्ष के नीचे श्रीमहाप्रभुजी की बैठक है। यहाँ आपश्री ने श्रीमद् भागवत पारायण किया था, यहाँ संकेत देवी का मन्दिर है। यहाँ की हरित वनराषि और सुन्दर पक्षियों का कलरव मन को आकर्शित करता है।

अष्टदर्शी बैठकजी - व्रज को इतना प्राधान्य श्रीवल्लभाचार्यजी की बैठकजी से क्या परिस्कृत होता है?

१. श्रीवल्लभाचार्यजी खुद अपने आपको व्रज लीला के जीव समझते थे।

२. श्रीवल्लभाचार्यजी दासत्व शिक्षा शिक्षित कर रहे थे।

३. पुष्टिमार्ग सिद्धांत संस्कार की नव चेतन ज्योत यहां से ही प्रकट हो सकती थी।

४. जो सृष्टि भूमि में केवल माधुर्य हो, वो भूमि से किया हुआ पुरुषार्थ उत्तमता और उच्चता प्रदान करता है।

५. व्रज सृष्टि के हर जीव केवल परमात्मा का सानिध्य से जुड़ा है, वो सृष्टि भूमि प्रेममय है।

६. जो विद्या, ज्ञान, भक्ति, शक्ति का सही व्यवहारिक पुरुषार्थ करने की स्थली।

" जीवस्य तत्व जिज्ञासा फलम् उक्तम् । तत् च साक्षात्कार इति पर्यबसितम् । तत्र विचार सहित प्रमाणेन् यद्यपि निर्विर्चिकित्सम् शाब्द ज्ञानम् भवति तथा अपि अन्त:करण दोषात् न साक्षात्कार: सिद्धयति। तद् अर्थम् प्रथमम् धर्म: । तत: अन्त:करणशुद्धधौ वेदादि सत् प्रमाणे श्रद्धा । तत: निदिध्यासनेन साक्षात्कार इव ज्ञानम् । तत: विपयेषु वैराग्यम् । तत: श्रवणादि साधन भक्ति:। तत: परम् भक्ति: । तत: सर्वत्र भगवद् साक्षात्कारों हृदि वहि: अपि इति अर्थ: । आत्मानम् तं भगवन्तम् आत्मरूपम् । " व्रज की धरा अदभूत है - अलौकिक है। जीव को अदभूत परिस्कृत करती है। ***ओ मेरे वल्लभ ! " प्रणाम प्रणाम प्रणाम "*** **" Vibrant Pushti "**

बैठक–19

श्री नन्दगाँव

नन्दगाँव श्री नन्दरायजी का वासस्थल है, पान सरोवर पर श्रीमहाप्रभुजी की बैठक है। यहाँ आचार्य श्री छः मास बिराजे थे। यहाँ भी श्रीमहाप्रभुजी ने भागवत पारायण किया था। घोड़े की मुक्ति वाला प्रसंग यहीं का है।

नवमदर्शी बैठकजी - स्थली आधारित बैठकजी की समय मर्यादा श्रीवल्लभाचार्यजी का एक अनोखा गुण था। **बैठकजी का महात्मय समांतर और एक निश्चयी ही था।** कोई बैठकजी पर क्षणिक बिराजे कोई बैठकजी पर अधिक समय बिराजे - तफ़ावत समय का था पर श्रेष्ठता सृष्टि आधारित समांतरता में थी। जो जो स्थली का जो जो महात्मय था, वो महात्मय को द्रढ़ करना आवश्यक था। **जो खुद सिंचित होना और अनेकोको सिंचित करके योग्य प्रस्थापित करके आगे गति करना यही तो पुष्टिमार्ग सिद्धांत संस्कार की मुख्यता है। जीवों को समांतर और सलामत करना ही धर्म संस्थापन पुरुषार्थ है।** सही में हर बैठकजी साक्षात्कार है पर कुल की विध्वंशता ने बैठकजी को निश्चेतन और निर्देशहीन कर दिया है। ऐसे व्यापारी संस्थानों को फिर से पुष्टिमार्ग सिद्धांत संस्कार निधि करने वो ही व्यक्तित्व कर सकते है - जिन्हे श्रीवल्लभाचार्यजी की कृपा - श्रीनाथजी का अनुग्रह - श्रीगिरिराजजी की तपश्चर्या और श्रीयमुनाजी की अनुकंपा पायी हो।

श्रीवल्लभाचार्यजी ही श्री वल्लभ है - न कोई कुल है - न कोई मूल है। कुल वैष्णव है - मूल अष्टसखा है।
श्रीनाथजी ही श्री गोवर्धननाथजी है - निधि स्वरुप है। जो श्रीगिरिराजजी से प्रकट भए है।
श्रीगिरिराजजी ही श्री गोवर्धन है - जो पुष्टिमार्ग का मूल गौत्र है।
श्रीयमुनाजी ही श्री चतुर्थप्रिया है - जो पुष्टिमार्ग की मूल अनुकंपा है।
" व्यापी वैकुंठे अक्षरात्मके प्रणवबीज: वेदतरु: अस्ति। अयम् अर्थ: गोप्य: अपि भक्त् चिन्तया परवशस्य भगवत: ह्रदयात् आगतम् इति गलितम् । तथा रसात्मकस्य भगवत: भागवतम् रस: । तत् स्पर्शनमात्र योग्यम् न भवति किन्तु पान योग्यम् इति अर्थ:। " **" Vibrant Pushti "**
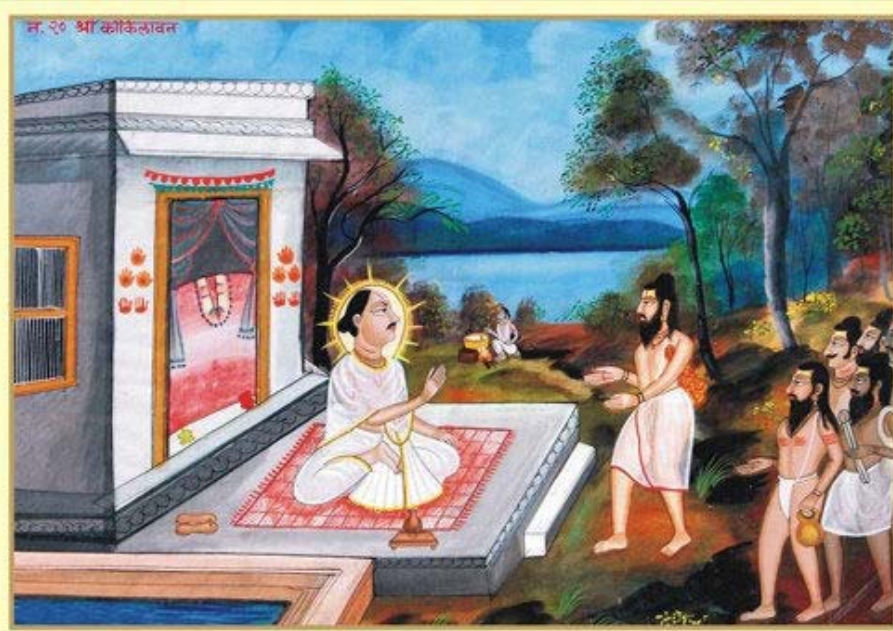
द्वा दर्शी बैठकजी - जीवन में ऐसे कितने प्रसंग और संजोग और परिस्तिथी घटती थी - जो कभी उत्साहित - जो कभी प्रेरणादायक - जो कभी संकेत ज्ञान आधारित उदभवती है। जो हम अपनी शिक्षा और पहचान से स्वीकार करते है। श्रीवल्लभाचार्यजी एक प्रमुख स्थली पर ऐसी ही अनुभूतिओं के साथ विचरते थे - परिभ्रमण करते थे और आसपास के जीवों को पुष्टिमार्ग सिद्धांत संस्कार से जागृत करते थे। कहीं जीवों के पास वो पहुँचते थे, कहींओ उनके पास आते थे। जो जो सत्संग शृंखला उठती थी उनमें जीवों के स्वभाव, गुण, ज्ञान, वृति आदि को पहचान कर सही मार्गदर्शन और संस्थापन करना आवश्यक होता है। यही मार्गदर्शन और संस्थापन का पालन जो जो के पास पहुँचे या पास आए उनके अनुकुल हो - यह महत्ता मुख्य है। तब ही सामर्थ्यता और कृतार्था योग्य है। जीव कहीं तरह से भटकता है, यही भटकना दूर करके स्थिर करना ही आवश्यक सेवा, तपश्चर्या है। श्रीवल्लभाचार्यजी ने गूढ़ता से निभाया और श्रेष्ठता प्रस्थापित किया - यही ही बैठकजी की विश्वनीयता है - सत्यता है - पवित्रता है। हे आचार्य! आपने कठिन परिश्रम करके यह पुष्टिमार्ग सिद्धांत संस्कार का संस्थापन किया, जिससे मैंने पाया है **" भगवद् धर्म स्फुरणे वा हेतु:। सर्वे हि जीवा: स्वभावत: बद्धा: कालपाशेन। तेषाम् बंधन निवृति: महान उपकार: । सा च कालनियामक भगवद् चरित्र आवेशाद एव भवति इति आहअखिल बंधमुक्त्य इति - भगवान एव स्वयं सर्व उद्धारक: स्फुरिष्यति। " " दंडवत प्रणाम मेरे प्रभु - दंडवत प्रणाम " " Vibrant Pushti "**

बैठक–21

श्री भाण्डीर वन

अदेयदानदक्ष श्रीमहाप्रभुजी ने यहाँ श्रीमद् भागवत पारायण किया था और श्री माध्व सम्प्रदाय के स्वामी व्यासतीर्थजी को त्याग की महत्ता बतलाते हुए लक्षावधि सम्पत्ति का त्याग किया था।

एकमद्वादर्शी बैठकजी - जगत में कहीं प्रकारों के जीव, स्वभाव, विचार, क्रिया, समझ, स्वीकार्य, प्रमाण, फल, जोग, संजोग, काल, रीत, श्रद्धा, मान्यता, निर्वाह, जीवन पद्धति, मात्रा, गुणो, शिक्षा, धर्म, जाती, संप्रदाय, अध्ययन, दिशा, मार्ग, कक्षा, और भाव आदि सम्मिलित है। भिन्न भिन्न में सकारात्मक अभिन्न करना वो कोई सामर्थ्यशील व्यक्तित्व ही करता है। **श्रीवल्लभाचार्यजी का बैठकजी पर बिराजना और भिन्न सूक्ष्मता को समझ कर अभिन्न साक्षात्कार साकार करना ही उनका श्रेष्ठ पुरुषार्थ था।** अनेक प्रकारों के संप्रदाय अनुयायी, गुरु, आचार्य, टीकाकार, अध्ययनकार आदि पधारे - मिले, हर एक को अपना ज्ञान - भाव से जो सर्वश्रेष्ठता जताई, यही सातत्य ऐसी स्थिर स्तिथिप्रज्ञ बैठकजी से ही प्रदान होता है। **बैठकजी एक ऐसी पुष्टिमार्ग सिद्धांत संस्कार की शृंखला है, जहां केवल पुष्टि ऊर्जा ही उठे और यही ऊर्जा से सारी सृष्टि ऊर्जावान हो।**

" देहादी धर्मम् तद् अधिकारेण वा प्रवृतम्। स्वस्य तु जीवस्य दासत्वाद भगवद् सेवैव स्वधर्म:। हरे: भगवत: परब्रह्मण: भक्तिमार्ग अनुसारेण चरणसेवा जीवानाम् स्वाभाविको धर्म: । अंशत्वे अपि अंशिन: सेवा मुख्या। भगवद् भजनम् तु न कालसाध्यम्। सर्वत्र भगवन् मार्गे भगवत् एव साधनत्वेन विधानात् च अन्तिम् च जन्मनि भगवद् भक्ति: भगवद् प्रसादैकलभ्यत्वात्। " " हे वल्लभाचार्यजी ! आपने सत् सत् वंदन - मेरा दंडवत स्वीकार्य हो ऐसी विनंती " " Vibrant Pushti "
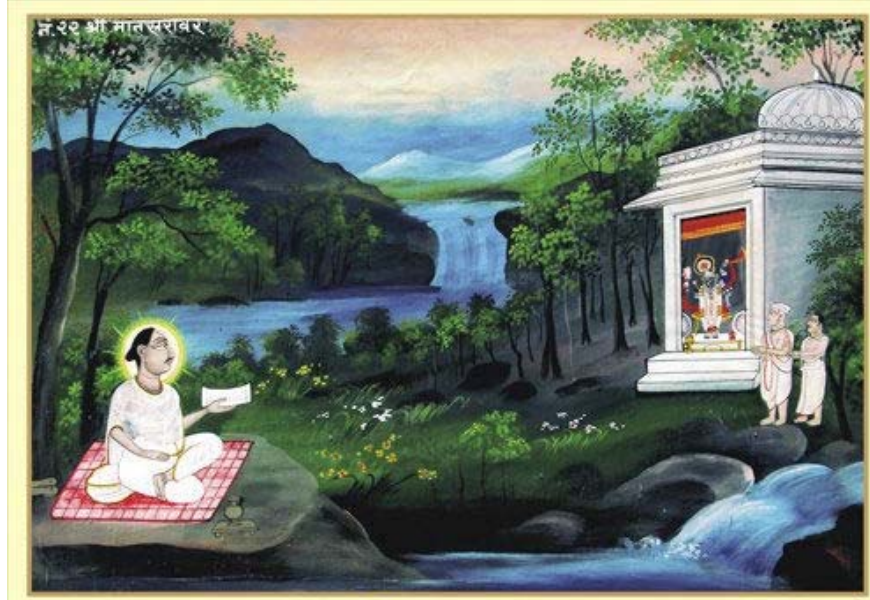
द्वाद्वादशी बैठकजी - बैठकजी अर्थात जो स्थली और स्थान पर से स्वयं कांति देदीप्यमान हो - आत्म ज्योत की ओरा तेजोमय हो - आसपास के अंधकार को नष्ट कर के स्व सूर्य की तरह प्रकाशित हो। श्रीवल्लभाचार्यजी ने स्वयं को उजागर करके ब्रह्मांड के श्रेष्ठ रहस्यो को पहचाना। वनस्पति वैष्णव है - अपनी स्थिरता से स्वयं में जो सिंचता है, रसमय करता है, एकरूप होता है, उत्पन्न करके, स्व को समर्पित करता है। " **वनस्पति तु वैष्णवः** "। श्रीवल्लभाचार्यजी स्वयं पाठी थे, उनकी हर क्रिया खुद में खुदको निरूपित करके वनस्पति की तरह एकरस - एकरूप हो कर स्व को जोड़ते थे। इसीलिए उनसे उत्स होते हर स्पंदन, स्वर, अक्षर, द्रष्टि, उच्छ्वास स्वच्छ, पवित्र और मधुर होते थे। **स्व दर्शन से आत्म दर्शन - आत्म दर्शन से परमात्मा दर्शन - परमात्मा दर्शन से प्रेम दर्शन और प्रेम दर्शन से पुष्टि दर्शन** करते थे और कराते थे।

" सर्वरस आस्वादनं भगवत् उत्तम्। ते च रसा उत्कृत्वा अपकृष्टाः स्वत् आधारतः अधिकारीभेदन च भवन्ति। "

" सेवा च पुष्टिमार्गे सस्नेहा। कृपाफलम् च एतत्। "

" ईश्वर धर्मः प्रमेयबल पोषक "

" यथा वेदान्त विज्ञाने पंचाग्नों देह संभवः। तथा भागवतज्ञाने ब्रहमाग्नौ बोधसं युते। "

" स्व स्व स्व स्व स्वयं सेवक सर्वज्ञ समांतर सलामत समर्पण सर्वश्रेष्ठ सर्वत्र संपूर्ण "

वल्लभ ! वल्लभ ! वल्लभ ! वल्लभ ! प्रणाम प्रणाम प्रणाम " Vibrant Pushti "
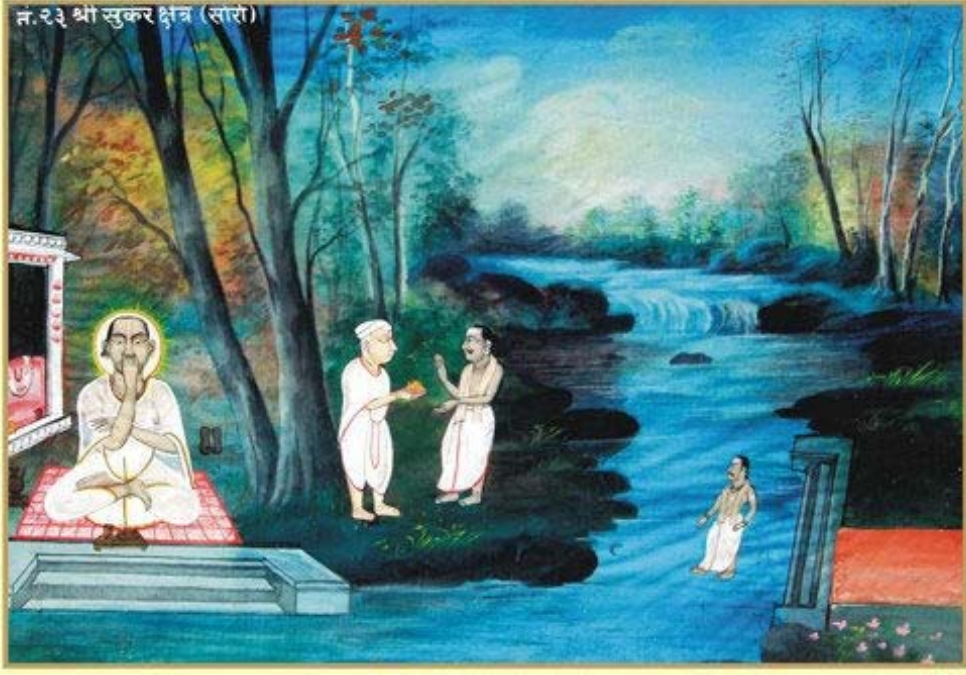
तृतीयद्वादशी बैठकजी - धरती की आध्यात्मिक स्थली हिंदुस्तान - हिंदुस्तान की प्रेम आध्यात्मिक की स्थली व्रज - व्रज भूमि - व्रज रज की स्थली - प्रेमामृत स्थली - अगणित ऋषि - मुनिओं - भकतों - आचार्यो की स्थली। यही रज, स्पंदन और पवित्र स्थली पर **वाक्पति श्रीवल्लभाचार्यजी के मुखारविंद से बहती पुष्टि ज्ञान गंगा - यमुना की पद यात्रा, स्वर यात्रा, पुष्टि यात्रा**। हर एक बैठकजी में अलौकिक रस पान अमृत, जीवकों पुष्टिमार्ग सिद्धांत संस्कार से मुग्ध - मधुर और सांस्कृत कर देती है। जो जो जीव श्रीवल्लभाचार्यजी से जुडते गए जुडते गए वो जीव अलौकिक आनन्द में डूबते गए डूबते गए। **कोई भी अनुयायी श्रीवल्लभाचार्यजीके लिए आत्म निर्भरता से विशुद्ध, पवित्र और पुष्टि प्रज्ञामें झूमते थे, नाचते थे, गाते थे और प्रतिज्ञा धरते थे - हमारे आचार्यश्री परम भगवदीय पुरुष श्रेष्ठ है, चाहे हमारी कैसी भी परीक्षा कर लो।** श्रीकृष्णदास मेघन जो एक प्रहर तक अपने हस्त में प्रजवल्लित अग्नि धारण करके परिस्कृत किया श्रीवल्लभाचार्य साक्षात अग्नि स्वरुप है। कितने द्रड विश्वसनीय थे अनुयायी ! **पुष्टिमार्ग सिद्धांत संस्कार में यही ही पुष्टि सिंचन जीवनकी साधारण असाधारण परिस्तिथि में आमूल परिवर्तन करके अनमोल आनन्द प्रदान करती है - यही तो फल है - यही तो मुख्यता है - यही तो सूत्रता है - पुष्टिमार्ग सिद्धांत संस्कार की। " सेवा तु रोग निवर्तिका । श्रवणेन् च अन्त: प्रविशती भगवान्। तत्र चित्तम् सेवाम् भावयति । योग सेवा अपेक्षया अपि योगेश सेवाया उत्तमत्वात। " हे वल्लभ ! दंडवत प्रणाम ! " Vibrant Pushti "**
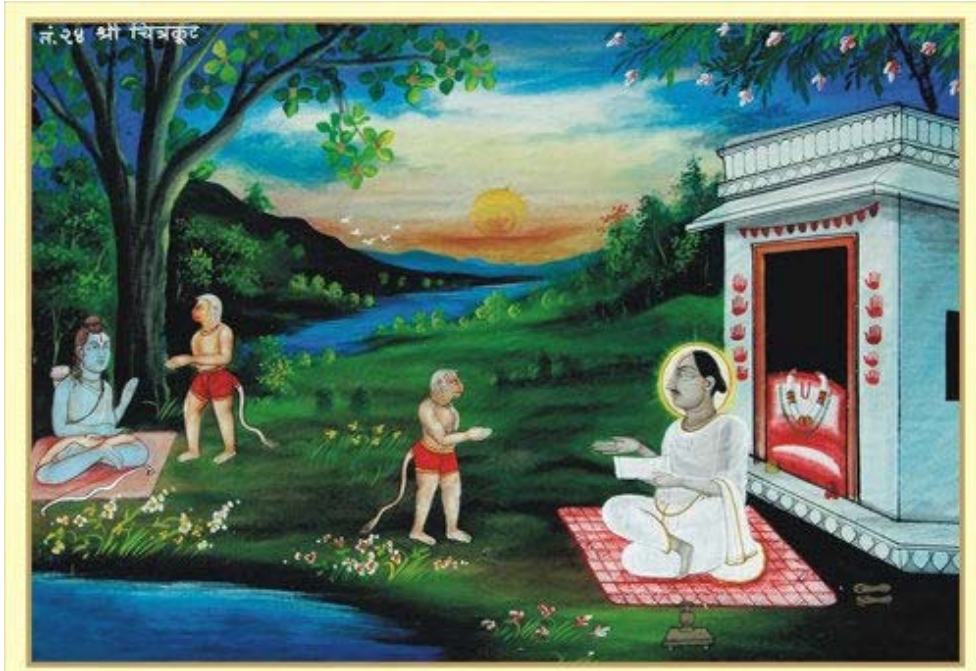
बैठक–24

श्री चित्रकूट

मर्यादा पुरूषोत्तम भगवान श्री राम के श्रीचरणों से पवित्र हुए इस दिव्य धाम में कान्तानाथ पर्वत के समीप श्रीमहाप्रभुजी बिराजे थे। यहां आपश्री ने भागवत पारायणोंपरान्त "रामायण" का पाठ किया था और " सेतू बन्धन मात्रेक चरितं हरि संमतं। दोषा भावाय नारीणां लंका स्थाने निरूपितमं ।।" इस श्लोक की कारिका कही थी। कान्तानाथ पर्वत श्री गिरिराजजी के भाई है।

चतुर्थद्वादशी बैठकजी - परिक्रमा - जगत की परिक्रमा जगत कों श्रेष्ठ - शिस्त - निखालस - सरल और विशुद्ध करने का प्रण वो ही कर सकते है जो अपने पुरुषार्थ में धन्यता हो, विश्वास हो, आचरण की पवित्रता हो। श्रीवल्लभाचार्यजी का संकल्प दिव्य और जीवों उद्धारक था। जीवों उद्धारक का अर्थ होता है - सही दिशा और दशा का निर्माण करके वो जीव कों अपने पुरुषार्थ से धन्य, श्रेष्ठ, सरल, निरहंकारि, और नि:संशयी शिक्षित करना। साथ साथ जो स्थली है उनकी भूमि की जो महत्ता है वो उजागर करना। **मिट्टी से सोना उगे - सोने से शुद्धता - शुद्धता से पवित्रता जागे यही ही है मिट्टी का सुहागा। जो मिट्टी से अन्न उगे, उगे सूरज संस्कार - संस्कार से सिद्धांत जागे जागे पुष्टि ज्ञान। बैठकजी की यही महिमा स्थली स्थली बढ़ाए - ऐसे आचार्य - ऐसे गुरु भूमि भूमि सजाए। न जाती - न भेद - न समाज - न वंश - न कुल - एक जाती मानव जाती - एक वंश श्री प्रभु अंश - पुष्टिमार्ग सिद्धांत संस्कार जगाए - यही जीवन संग्राम - यही जीवन संघर्ष - यही जीवन प्रण - परिभ्रमण में अवतार भूमि - संत भूमि - भक्त भूमि - भगवदीय भूमि - तपस्या भूमि - यज्ञ भूमि - व्रज भूमि - लीला भूमि - ज्ञान भूमि - भाव भूमि - शौर्य भूमि - वीर भूमि - वात्सल्य भूमि - रक्षक भूमि का स्पर्श अवश्य पूजना - स्पर्शना - प्रणाम धरना। ओहह! आचार्य चरण इतना योग - प्रयोग और सहयोग। " दंडवत स्वीकार्य हो "** **" Vibrant Pushti "**
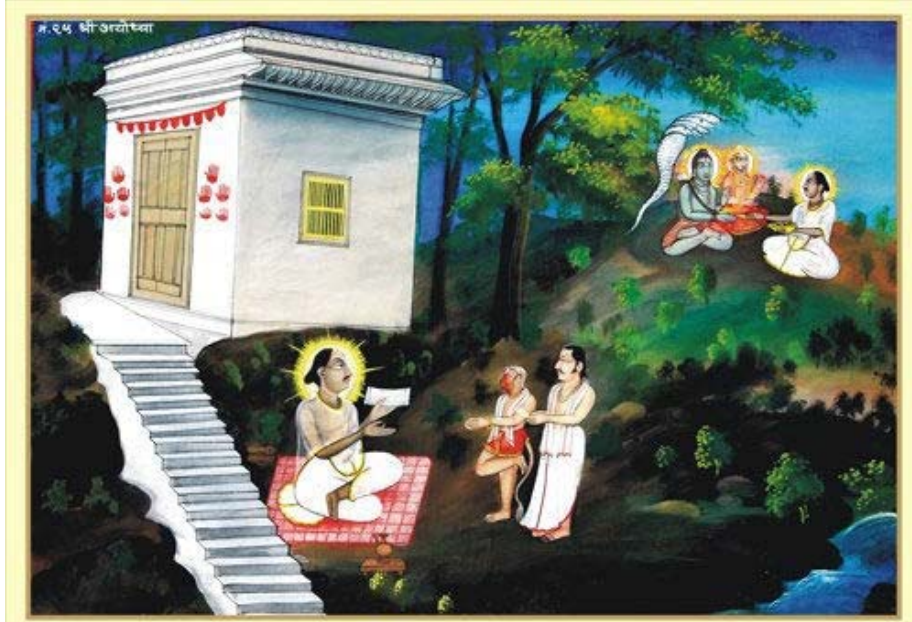
बैठक–25

श्री अयोध्या

मोक्षदायिनी अयोध्यापुरी में सरयू तट पर श्रीमहाप्रभुजी बिराजे थे। यहां आचार्यश्री ने भगवद्वदनानलावतार स्वरूप से निज जनों को दर्शन दिये थे। अयोध्या भगवान रागवेन्द्र की जन्मभूमि है।

पंचम द्‌वादशी बैठकजी - अदभूत स्थली न युद्‌ध - न अबुद्‌ध - न कपट - न संदेह । हर देह से सेवक, हर आत्म से दीपक, हर जीवन से प्रेम । रामराज्य - सेवक - दीपक और प्रेम। श्रीवल्लभाचार्यजी ऐसी स्थली से खुद के राम कों सिंचित किया और हर राममें पुष्टिमार्ग सिद्‌धांत संस्कार सिंचित किया - हर कोई पुकारे -

राम राम राम पुष्टि राम राम राम - सीताराम राम राम - अवध राम राम राम ! राम - सरल - शुद्‌ध - पवित्र। पुष्टिमार्ग सिद्‌धांत संस्कार का प्रथम डग - सरल, दूजा डग - शुद्‌ध, तृतीय डग - पवित्र तो पुष्टि राम। पुष्टि प्रेम। श्रीवल्लभाचार्यजी का पूरा चरित्र - सरल - शुद्‌ध - पवित्र - जहां बसे - पुष्टि राम - पुष्टि काम - पुष्टि धाम।

बैठकजी की हर लीला पुष्टि - बैठकजी की हर क्रिया पुष्टि - बैठकजी का हर स्पर्श पुष्टि। पुष्टि बिना कछु नहीं।

राम पधारे श्याम पधारे पधारे श्री वल्लभ ! वल्लभ संग सरयू (यमुना) पधारे - वल्लभ संग कान्तानाथ (गिरिराज) स्थली स्थली पुष्टि लीला - स्थली स्थली पुष्टि सत्संग - स्थली स्थली पुष्टि संस्कार।

" सेवार्थम् सत्संग इति प्रथम् साधनम् "

" भगवद् आविर्भाव व्यतिरेकण अपि भगवद् अंगै: मानसरूप नामभि: मुक्ति: भवति इति विशेष: "

" भगवद् सायुज्यं प्राप्तस्य सर्वत्र भगवान् एव स्फुरणात् एष इति निर्देश: "

जगत की कोई भी स्थली हो, अगर खुद सरल शुद्‌ध और पवित्र हो तो हर स्थली पुष्टिमार्ग सिद्‌धांत संस्कार स्थली।

" Vibrant Pushti "

षष्ठ द्वादशी बैठकजी - **" अध्यात्मयोगेन विविक्तसेवया, प्राणेन्द्रियात्मा विजयेन सघ्रयक । सच्छद्ध्या ब्रह्मचर्येण, शश्रवदसंप्रमादेन यमेन वाचा।** " सनकादि ऋषिओं की श्रेष्ठ साधना का स्पर्श श्री वल्लभाचार्याजीने अध्यात्म योगे खुदमें यह स्थली पर पाया, श्रीवल्लभाचार्यजी के प्राण - इंद्रियाँ और आत्मा पतित पावन हुए और सर्वोच्च पुष्टि बल पाया, यही बल से आसपास के जीवों में पुष्टिमार्ग सिद्धांत संस्कार सिंच कर कृत कृतार्थ किए। अदभूत ! निखालसता से जो भी सिंचते है, जो भी कृतार्थता पाते है - सर्वत्र योग्य सिद्धांत से सिंचते है। स्थली की यही तो महत्ता है। **आज व्रज - अयोध्या - जगन्नाथपुरी - अवंतिका - काशी - मथुरा - बद्रीनाथ - द्वारिका - नाथद्वारा आदि स्थली पर स्व सिंचन परिक्रमा स्व कृतार्थता के लिए ही करते है।** इसीलिए तो भक्त धारा गूँजती है -

" व्रज वहालु रे वैकुंठ नहीं आवुं - मने लाग्यु घेलु श्याम सुंदिरनुं रे "

" परम प्रेमणा भगवद् सेवायां भगवद् आवरणम् अपगच्छति । तदा निर्मल द्रष्टे: सवितृ प्रकाश साक्षात्कार एव भगवद् स्वरूपोयो: मनसा साक्षात्कारो भवति "

" श्रीवल्लभ ! आपने कोटी कोटी प्रणाम ! वंदन करूँ श्रीवल्लभने साचु चरण सुख आपजो " " Vibrant Pushti "
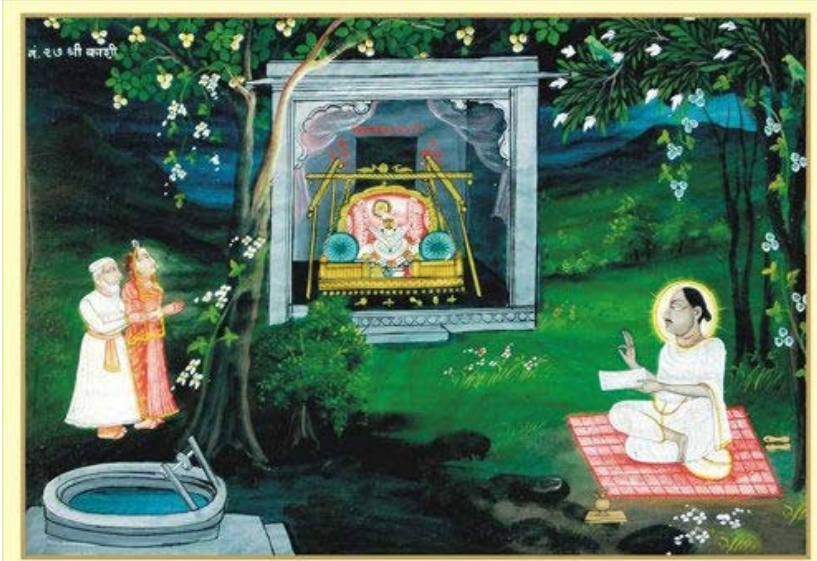
सप्तम द्वादशी बैठकजी - गहराई से सोचे बैठकजी की अहमियत - " वैष्णवाग्रगण्य विश्वनाथ की नगरी काशी में शेठ पुरुषोत्तमदासजी के घर में श्रीवल्लभाचार्यजी की बैठक " श्रेष्ठ श्रीवल्लभ श्रेष्ठ ! स्थली का महात्मय सर्वोच्च - सर्वोत्तम । **गहराई से अध्ययन करें तो स्थली और स्थली कों सिंचन करने के आधारित रहते व्यक्तित्व। एक अनोखा कुटुंब, जिसकी जीवन चरित्रता - वैष्णव ! श्रीवल्लभाचार्य बिराजे, तो अवश्य श्रीप्रभु भी पधारे ! अपनी वैष्णवतासे सिंच सिंच कर जो श्रीआचार्य चरण आकर्शाएं, स्थली कों सरल - शुद्ध और पवित्र किया - श्रीवैष्णवआचार्य स्पर्श पाने साक्षात बिराजे - ऐसी अलौकिकता केवल और केवल परम भगवदीय वैष्णव ही उजागर कर सकता है। स्थली का बंधारण मिट्टी - जल - वायु - आकाश और तेज से ही होता है जैसे हमारा अर्थात मूल तत्वों है। जो मूल तत्वों कों समांतर मात्रा से सिंचित करे अवश्य उच्चता और योग्यता का ही पार्दुभाव होता है। व्यक्ति और भूमि का समन्वय श्रीआचार्य चरणकों खींच लाए। यही स्थली से श्रीवल्लभाचार्यजी पुष्टिमार्ग सिद्धांत संस्कार पत्रावलम्बन की रचना का प्रारंभ भी ऐसे वैष्णव के स्पंदन और भूमि की फलद्रूपता - योग्यता से पार्दुभाव हुआ - जो सारी सृष्टि में - पुष्टिमार्ग सिद्धांत संस्कार का व्याप असीमित हो गया। चारों ओर पुष्टि पताका !**
" भगवदीयत्वम् हि साक्षाद् भगवद् अनुग्रहितानाम् पुष्टीमार्गीयाणाम् जन्मलाभरूपम् इति उच्यते "
हे! श्रीवल्लभ आप सर्वश्रेष्ठ हो ! सर्वज्ञ हो ! कृपालु हो ! " साष्टांग दंडवत प्रणाम " " Vibrant Pushti "

बैठक–28

श्री हनुमानघाट, काशी

हरिचरण विहारिणी श्रीगंगाजी के तट पर श्रीमहाप्रभुजी ने "सन्यास" ग्रहण किया था। आपश्री ने स्वात्मज श्री गोपीनाथजी तथा श्री विट्ठलनाथजी के शिक्षार्थ साढे तीन श्लोक :– "यदा बहिर्मुखा यूयं भविष्यथ कथंचन,
सेव्यः स एव गोपीशोविधास्यत्यखिलंहिनः।।"

भूमि पर लिखकर प्रभु श्रीनाथजी की सेवा से बहिर्मुख न होने सम्बन्ध में अन्तिम आज्ञा दी थी। 40 दिन तक निराहार रहकर आषाढ़ शुक्ल 2 संवत 1587 को अभिजितकाल में सदेह श्रीगंगाजी के प्रवाह में से प्रदीप्त अग्निपुंज में विलीन होकर स्वधाम पधारे थे।

अष्टद्वादशी बैठकजी - आपश्री का प्रचंड तेज और प्रखर ज्ञान भाव के साथ साथ बिलकुल व्यावहारिक और आध्यात्मिक थे। जगत में पधारे है, कौटुंबिक जवाबदारी संभलते हुए अपने कुटुंब के साथ साथ अपने अनुयायी कुटुंबको भी योग्यता से समांतर - बिना भेद भाव शिक्षा प्रदान करते थे। दोनों स्वात्मज गोपीनाथजी और विट्ठलनाथजी को शिस्त, सन्मान और आज्ञांकित होने की शिक्षा प्रदान करने में कोई साधारणता का स्थान नहीं था। नियमों का पालन, आंतर और बाह्य व्यवहार और ज्ञान की सैद्धान्तिक प्रमय बल शिक्षा का पठन सख्ताई से करना होता था। शिक्षा पढ़ते कोई भी तेजोमय बालक को योग्य परिस्कृत करते थे और अपने खुद के बालक को उन्हें सन्मान करने की आज्ञा करते थे।

" यदा बहिर्मुखा यूयं भविष्यथ कथंचन, सेव्य: स एव गोपीशोविद्यास्यत्यखिलंहिन: " अखूट प्रामाणिकता - अतूट शिस्त प्रणालिका, समांतर विद्या दान, बिना भेद भाव ज्ञान कक्षित सेवा धर्म । स्वयं पाठी जीवन निर्वाह। यह नियमवल्ली उनके जीवन का मूल स्वबद्ध चुस्त संचालन था।

" लोकव्यवहारेण आत्मा आरोपित एव दश्यते देहादिरूप: संवलित: वा । "

"महापुरुषस्य सम्बन्धी महापौरुषिक: तदीयत्वम् च गुण आस्वादन योग्यतयैव। अन्यथा तादृश धर्मवत: सम्बन्धी ण स्यात्। "

" चिते भगवद् प्रेम संपादनीयम । तत: प्रेम संवलितम् चितम् सर्वत्र विद्यमानम् भगवन्तम् विषयी करिष्यति। तथा भक्ति: आविष्टम् चितम् स्वयम् एव भगवन्तम् गृह्याति। "

श्रीआचार्य श्रेष्ठ! आचार्य की गरिमा, महात्मय, शिस्त, समांतर व्यवहार, योग्य शिक्षा, योग्य फल परिस्कृति, न भेद भाव द्रष्टि, स्वयं पाठी, आदि - आचार्य गुणातीत।

परम पूज्य आचार्य दंडवत प्रणाम स्वीकार्य हो ! " Vibrant Pushti "

<u>**नोध: यह बैठकजी का अन्य विवरण आखरी बैठकजी के अन्त भागमें अवश्य प्रस्तुत होगा।**</u>

नवमद्वादश बैठकजी - हे श्री वल्लभ आप कितने कृपालु हो, दयालु हो करुणामय हो। अपने जन्म और जीवन की सार्थकता और कृतार्था समझाने और जगाने के लिए अपनी हर एक सांस को पुष्टिमार्ग सिद्धांत संस्कार के सिद्ध कर दि। मनुष्य जीवन का जन्म जीवन की सफलता का रहस्य आपने आपना चरित्र से प्रमाणित कर दिया। वाह ! मेरे श्रीवल्लभ ! वाह! **आपके हर संकल्प - विचार - कार्य - शैली - नीति - निधि हमें कृत आकृत करती है, हमें प्रेरणा देती है, हमें सुद्रढ़ता के लिए सिंचती है - आकर्षित करती है।**

आपने अपने जीवनमें अपने अनुयायी को श्रेष्ठ बक्षता प्रदान की - जो केवल करुणामय शिक्षित ज्ञानी और निर्मोही आत्मीयता कर सकते है, जिसमें श्रेष्ठ भगवान की उपाधि के गुणों है, इसीलिए आप जगद्गुरू हो। आपने यही पुष्टिमार्ग सिद्धांत संस्कार से परिस्कृत किया है की **अपनी आंतरिक चेतना का पुष्टित्व से ही व्यक्ति पुष्टिमार्ग सिद्धांत संस्कार को विस्तृत और संस्थापन कर सकता है।** श्री परम भगवदीय भगवानदासजी एक उत्कृस्ट द्रष्टांत है। श्री वल्लभाचार्यजी की विशाल द्रष्टि और साक्षर प्रणालिका से आज भी यह पुष्टिमार्ग सिद्धांत संस्कार पर हर कोई विश्वास और श्रद्धा करते है।

न कुल - न कुलाग्नि - न वंश - न वंशावली - केवल पुष्टितत्व - पुष्टि सिद्धांत - पुष्टि संस्कार।

" पंचाध्यायी पंच: अग्नि न्यायेन् जनने शुद्धि हेतु:। शुद्धि: एव मूलम् इति ज्ञापयितुम कृष्ण कथा उद्यम् इति वचनम्। तस्मात् मूल एव अयम् अर्थ: सूचित इति न अस्मद् मते दूषण संभावना अपि इति अर्थ:। "

" पुष्टिमार्ग सिद्धांत संस्कार की सही रीत जो जो अपनाये पामे नर श्रीनाथजी पुष्टि प्रीत " **" Vibrant Pushti "**

त्रिदशी बैठकजी - डग भरते भरते, पद यात्रा चलते चलते, दैवी जीवों को स्पर्शते स्पर्शते, स्थली स्थली को सिंचते सिंचते, पुष्टिमार्ग सिद्धांत संस्कार जगाते जगाते, सृष्टि को विशुद्ध करते करते, भिन्न जीवों का पुष्टितत्व से बांधते बांधते श्री वल्लभ आगे बढ़ते जाते थे। नयन में आनन्द, मन में आनन्द, तन में आनन्द, जीवन में आनन्द स्फुरते स्फुरते अपनी तपश्चर्या को स्थिर करते करते हर एक जन्म जीवन को मधुर करते थे। श्रीवल्लभ काल मधुर से सभर था, क्यूंकी काल से भी पर संबंध, स्पर्श, ऊर्जा जगाते थे, जिससे उनसे काल दूर दूर भागता रहता था। **वाक्पति - वैश्वानर - महाप्रभु** - जैसा रंग से खुदकों रंगाये।

" भगवद् भक्त्वे अपि सेवकत्वम् विशेष:। भगवद् परिपाल्यानां भगवतांशावतारेण उत्पादितानां वा। तस्मिन् द्रष्टे स्वयमपि भगवद् सम्बन्धी जात इति, तदीयानाम् स्मरेणन् पंचभूतेषु वायु संस्कृत:। "

" अत्र मुख्य अपराध: भगवद् वाक्य उल्लंघनम्, तत् स्वभावत: जीवस्य न घटत इति दोषत्रय संनिपात: तद् हेतुत्वेन वकतव्य:। न हि संनिपात अभावे कश्चिद् भगवद् वाक्यम् न मन्यते। "

श्रीवल्लभचार्यजी ने अपने हर सत्संग में अवश्य यह सूचन किया है -

" भगवद वाक्य उल्लंघन - अत्र मुख्य अपराध " इतना सरल और सचोट और क्या हो सकता है?

श्रीवल्लभ - प्रणाम प्रणाम प्रणाम ! " Vibrant Pushti "
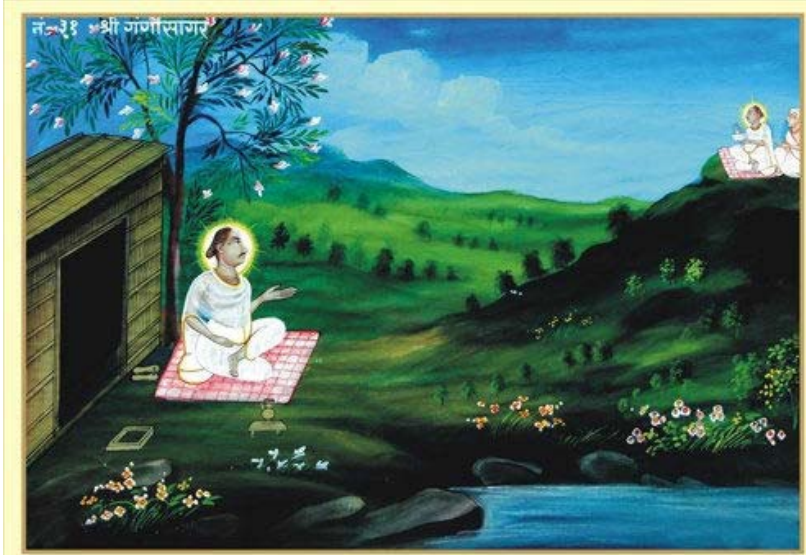
प्रथमत्रीदशी बैठकजी - गंगा - सागर मिलन स्थली अर्थात - गंगासागर। गंगा कौन - सागर कौन? कितनी उच्च संस्कृति ! गंगा अर्थात सर्व श्रेष्ठ भक्ति का तेजपूंज, जिसमें समाएँ - ज्ञान, भाव, श्रद्धा, विश्वास और प्रेम। जिसमें समाएँ - तपश्चर्या, समाधि, समर्पण, आत्म विरह अग्नि और सत्य। जिसमें समाएँ - भागीरथ, राम, श्रीवल्लभाचार्य, मीरा, श्री विट्ठलनाथजी, श्री गोविंददासजी (अष्टसखा) जो अपने आप समाएँ। कुंभ का हर एक स्नान में क्या क्या समाएँ ! **हमारी संस्कृति, हमारा आत्मपूंज, हमारी न्योछावरता, हमारा समर्पण, हमारा अहंकार, हमारी भक्ति, हमारी शक्ति, हमारा गर्व, हमारा साक्षात्कार, हमारा धर्म, हमारी पूजा, हमारा यज्ञ, हमारा कर्म, हमारा सर्वस्व इनमें समाएँ। जो हम है वो हम इनमें समाएँ। है हमारी गंगा - है हमारी यमुना - है हमारी सरस्वती !**

गंगा तेरी धारा अमृत हर हर में बहती जाय, जन्म जन्म की पीड़ा को क्षणमें अमृत करती जाय।

जो गंगा श्री शंकरजी (ज्ञानयज्ञ) की जटा से उठी और श्रीविष्णुजी (प्रेमसागर) के हृदयस्थ में समाएँ । **श्रीवल्लभाचार्यजी ने अपनी ज्ञानभक्ति गंगा यमुना को अपने प्रेमसागर करुणामयी पुष्टि सिद्धांत संस्कार से समन्वय करके श्री सुबोधिनिजी स्वरुप पुष्टि चित्रण करके सृष्टि के समस्त जीवों के दूरित तक्ष्यो को नष्ट करने की भक्ति बहाई।** अदभूत ! श्रेष्ठ स्थली, गंगा सागर भई - पुष्टि यमुना भई - श्रीवल्लभ पुष्टि तेज पूंज भए।

" स्वदीयम् एव वा चरण अंबुजम्। भगवदीयत्व संपादक शरीर हेतु भूतानि संस्कृतानि भूतानि चेत ते प्राप्नुयु: तदा अस्मिन् जन्मनि त्वदिया एव भवेयु:। "

हे मेरे परम प्रिये आचार्य ! आपको दंडवत स्व समर्पित प्रणाम ! " Vibrant Pushti "

द्विवत्रीदशी बैठकजी - श्रीवल्लभ प्राकट्य स्थली - प्राथमिक समय श्रीअग्निकुमार से श्रीवल्लभाचार्य उपाधि तक प्रथम समय जन्म स्थली स्पर्श पाया। **" जगत जगत घूमे, स्थली स्थली ठहरे सदा स्मरे अग्नि पूंज - स्व स्व तेज स्व स्व विवेक - स्व स्व पुष्टि संस्कार जगाया, न जगत मिथ्या न जीव मिथ्या जग जग भ्रम मिटाया। "** श्रीवल्लभ प्राकट्य हर एक के जन्म जीवन में आता ही है। **जन्म और प्राकट्य में तफ़ावत है पुरुषार्थ, समर्पण, सेवा, सिद्धांत और संस्कार। जो जीव तत्व अपने जन्म को अपने संस्कार, सिद्धांत, समर्पण, सेवा और पुरुषार्थ से अपना जन्म को प्राकट्य में परिवर्तित कर सकता है।** श्रीवल्लभ का जन्म जो भी काल, संजोग और मान्यता भरा व्यवहार से हुआ था - अपनी स्व प्राथमिक आत्मीय बल से वो जन्म को सुरक्षित और संस्कार संकेत से उनका पार्दुभाव किया। **श्रीवल्लभ जन्म हमारे लिए श्रेष्ठ शिक्षा संस्कार है जो हम हमारे गोत्र, कुटुंब और समाज के लिए कर सकते है।** श्रीवल्लभ प्राकट्य कोई कल्पनीय, अंधश्रद्धा भरेल, अविश्वनीय इतिहास, वार्ता या योग नहीं है। **हमारे गोत्र, हमारे पूर्वजों, हमारे कौटुंबीओ, हमारे स्नेहीओं जो श्रेष्ठता से अपने संस्कार, सिद्धांत, समर्पण, सेवा और पुरुषार्थ करें तो अचूक हमारे यहां भी श्रेष्ठता, सर्वोत्तमता, पुरुषोत्तमता का प्राकट्य अवश्य होगा ही होगा।**
" भगवत् उत्पन्न एव भगवद् आश्रयो भवति, आश्रित एव भगवदीय चरित्रे श्रद्धानो भवति। "
" निष्कपटेन् हृदयेन् माम आज्ञापयेति यद् आत्मना सह सर्वस्व निवेदनम् तद् एव शुश्रूषणम् । अनेन ऐहिकं पारलौकिकम् अपि आत्मगामि सर्वम् निवेदितम् इति ज्ञापितम्। एतद् एव आत्मसमर्पणम नाम। ण ततः अन्यत् प्रभोः शुश्रूषणम् अस्ति। " सरल, श्रद्धा सभर, विश्वनीय, सैद्धान्तिक विवरण श्रीवल्लभाचार्यजीने परिस्कृत किया।
" Vibrant Pushti "

त्रीत्रीदशी बैठकजी - लौकिक से अलौकिक ! माता पिताने खेद सह त्याग किया अपने मान्यता सभर मृत गर्भ। यही गर्भ ने अलौकिकता प्रकटायी और प्रोक्तं अग्निकुमार। **" लौकिके मया प्रोकतम् एव लोकस्य प्रमाणम्, यत: अहम् एव जगत कर्ता, पोषक: च मद् वाक्यम् एव च वेद: च। "** सैद्धांतिक जन्म, सैद्धांतिक पार्दुभाव, सैद्धांतिक प्राकट्य - जो वेद प्रमाणित करता है। आनन्द आनन्द परमानंद ! अलौकिक योग लौकिक संजोग - छट्टी पूजन। प्राथमिक पूजन के प्रश्चयात आचार्यता पा कर, यह स्थली का स्पर्श पा कर अनुभव किया **" वस्तुत: कृष्ण एव "** और सिद्ध किया अपने अनुयायी के साथ श्री व्रजलीला दर्शन। **" सर्वा भगवत: सामग्री निर्गुणा । जन्मान्तरेण व्यवधानात् पूर्वजन्मवृत्ति: यत् शब्देन परामृश्यते । फलरुपे जन्मनि सा अनिमित्ता भवति, स्वतंत्रा, भगवद् निमित्ता वा। भगवत: सकाशाद् फलानि निमित्तान। "** अपने पार्दुभाव से जो वेदोक्त, शास्त्रोक्त और वैज्ञानिक सिद्धांत परिणिर्मित किया। श्रीवल्लभ आप अपनी योग्यता को जीव तत्वों को सिंचित करने श्रेष्ठ पुष्टिमार्ग सिद्धांत संस्कार का भी जो पार्दुभाव किया - अनोखी, निराली और सैद्धांतिक शैली हमें अति दिगमूढ़ और आश्चर्य चकित करते है। सत्य सभर शैली अपनाने हमें बार बार प्रेरित और आज्ञा करते हो। **" साष्टांग दंडवत प्रणाम श्रीआचार्य "।**
" Vibrant Pushti "
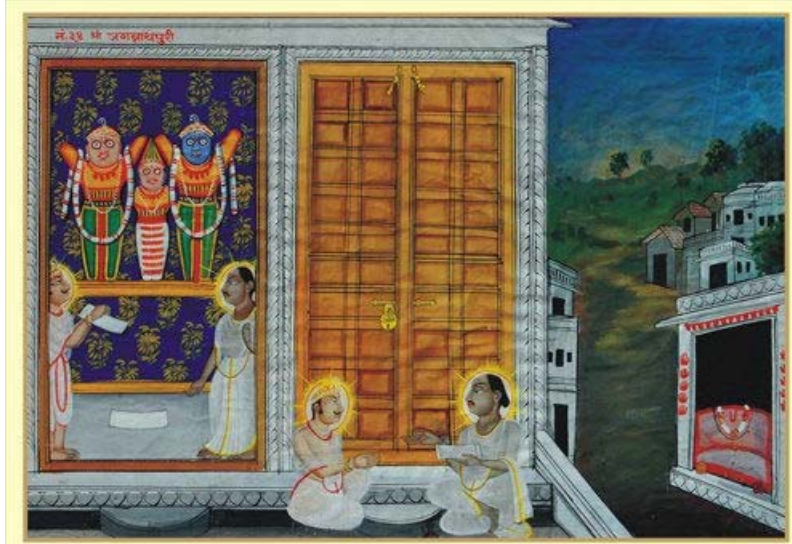
चतुर्थत्रीदशी बैठकजी - उत्तर से पूर्व और पूर्व से दक्षिण और दक्षिण से पश्चिम। पुष्टि संस्कार सिंचित परिक्रमा - जीवों के उद्धार परिक्रमा - **कृष्ण कृष्ण कृष्ण कृष्ण !** डग भरते भरते, पुष्टिमार्ग सिद्धांत संस्कार जगाते जगाते, स्थली स्थली यात्रा करते पहुँचे श्रीपुरुषोत्तम क्षेत्र - श्री जगन्नाथ रायजी के चरणों में - शरणों में। श्रीवल्लभाचार्यजी के हर डग, हर विचार, हर कर्म, हर स्वर, हर सूचन, हर आज्ञा पुष्टिमार्ग सिद्धांत संस्कारित है - अगियारस की तिथि थी और श्रीवल्लभ की विरह वेदना दर्शन के लिए लालायित थी, जैसे उन्होने अपने डग श्रीजगन्नाथजी के आँगन में रख्खे, एक पंडितजी ने श्रीप्रभु अधरामृत का प्रसाद उनके हस्तमें रख दिये - ओहह ! अगियारस का व्रत और प्रसाद का स्पर्श - श्रीवल्लभ पूरी रात स्थिर रह कर, श्रीप्रभु स्मरणमें लीन हो कर सुबह के मुखारविंद दर्शन पा कर खुद को धन्य पा कर श्रीजगन्नाथजी की आज्ञा स्वीकार कर प्रसाद ग्रहण किया। श्रेष्ठ और अलौकिक सिद्धांत - **श्रीप्रभु और श्रीप्रभु के परम भगवदीय आज्ञांकित आचार्य की एकात्मता।** यही रात श्रीप्रभु और श्रीवल्लभ का सानिध्य पुष्टिमार्ग सिद्धांत संस्कार का सूर्योदय प्रस्थापित कर दिया। गहराई से सोचे तो श्रीवल्लभजीवन चरित्र में ऐसी लीला पुष्टि जीवों के लिए साक्षात्कार समान है।

(१) प्रथम मिलन

(२) सुंदर शीला पर श्रीनाथजी आवागमन - दामोदर हरसानिजी का आदेश

(३) प्रथम रात श्रीजगन्नाथजी के आँगनमें स्थिर रहना

श्रेष्ठ, शुद्ध और पवित्र जीवन जीने के लिए पुष्टिमार्ग सिद्धांत संस्कारो का पर्चम लहेरा दिया है। **" ते भकता यावत् जीवन्ती च तावत् फलरुपाम् भक्तिम् कुर्वन्ति इति अर्थ:। फलरूपता तदैव भवति, यदा भजनाद् रसो अभिव्यक्त: भवति बहुधा। तस्या अभिव्यकते: निदर्शनम्, भगवत् एकात्मतां सायुज्यरूपं फलं न स्पृहयन्ति। प्रार्थना दूरे। ते भकतेषु विरला: प्रसङ्ग्गात् निरूप्यन्ते। केचिद् इति दुर्लभा:। तेषां कायवाड़ मनोवृत्ति: स्वभावत् एव भगवति भवति इति। मद् संबंधिनी एव ईहा चेष्टा येयाम्। "** ***श्रेष्ठ श्रीवल्लभ श्रेष्ठ ! दंडवंत स्वीकार्य हो।*** **" Vibrant Pushti "**
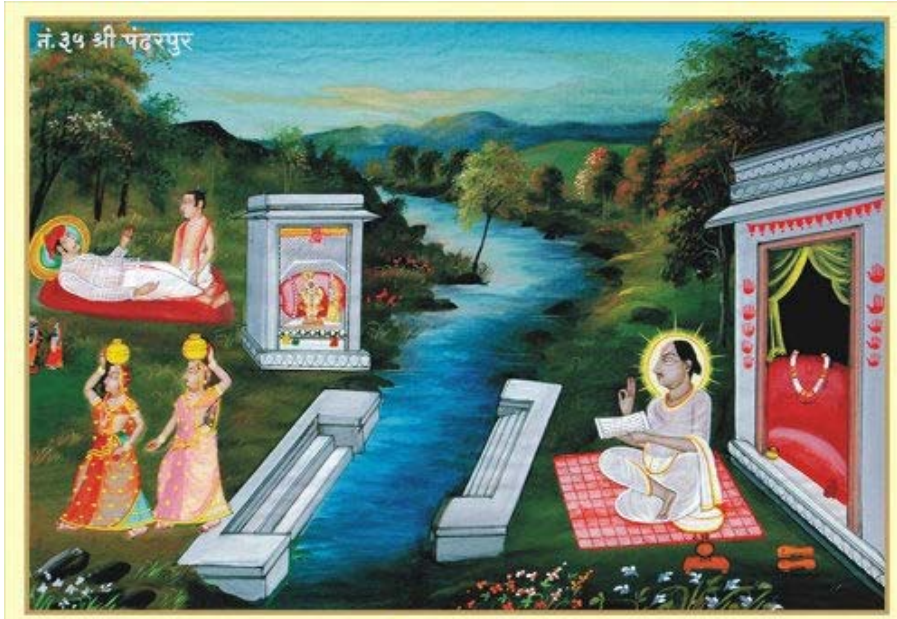
बैठक–35

श्री पंढरपुर

भक्त प्रवर श्री पुण्डरीक की महिमा से मंडित पंढरपुर में भीमरथी नदी के तट पर श्रीमहाप्रभुजी की बैठक है। प्रभु श्री विट्ठलनाथजी को आपश्री ने मिश्री भोग धराकर अबीर से खिलाये हैं और " कनकाभिषेक " अवसर पर प्राप्त सप्त स्वर्ण मुद्राओं से श्री चरणों के नूपुर सिद्ध करवा ।

पंचमत्रीदशी बैठकजी - सूक्ष्मता से, गृहस्थ जीवन की व्यवहारिकता से, ज्ञान भक्ति के वैज्ञानिक सिद्धांतो से और स्व आत्मीय अनुभूति से पुष्टिमार्ग सिद्धांत संस्कार को परिस्कृत करके जीवन के हर योग, संयोग, स्थिति, परिस्थिति, काल और समय की परिभाषा से सिद्ध करके पूर्णत चरितार्थ किया - **" कृष्ण एव गतिर्मम " " यदि भगवान् स्वह्रदये प्रकट एव, तदा स्वरुप मोहो न भवति इति सिद्धम। सिद्धे भगवति मुखये सख्य आत्मनिवेदने आह-आर्द्रया भक्त्या अर्पितं मनो:यस्य। "** अलौकिक भीमरथी तट स्थली श्रीक्षेत्र, संपूर्णत भक्त पिपाशा पुंडरिकजी मातापिताकी सुश्रुषा में मग्न, पधारे प्रभुश्री भक्त आँगन खड़े रहे आज्ञांकित सेवक की एक वींटपर **विट्ठल ! विट्ठल !**

सच मनुष्य जीवन की ये कैसी लीला है - न मान्यता से माने, न अंधश्रद्धा से स्वीकारे पर पुष्टिमार्ग सिद्धांत संस्कार से अपनाये - यह जीव इतना सामर्थ्यवान है - जो मूल अंश - परब्रह्म को भी वो अपनी पास बूला सकता है। श्रीवल्लभाचार्यजीने इतना अदभूत मार्ग बताया है **जिसमें हर जीव स्व को पहचान कर स्व से स्वराट हो सकता है।** पंढरपुर में श्रीवल्लभाचार्यजी ने आज्ञा पायी गृहस्थ जीवन से पुष्टिमार्ग सिद्धांत संस्कारको चेतन करके जीव और जीवन को धन्य करना है। अलौकिक संबंध परिस्कृत किया किया श्रीवल्लभाचार्यजी ने अपने परम श्रेष्ठ मूल परब्रह्म से और खुद स्वराट हो गए। **" भगवद् वाकयं निरंतरे अमृत उत्पत्ति रुपमिति वाक्य श्रवणेन अपि पुष्टि प्रतिपादनार्थम् अमृत फलत्वेन् निरुपितम्। "** जहां जहां पहुँचे श्रीवल्लभ वहां वहां पहुँचे पुष्टिमार्ग सिद्धांत संस्कार। भगवदीय, परम भगवदीय, भागवत, परम भागवत में जीवों का परिवर्तन - कृपा और कृपानिधि में प्रस्थापित हुए।

" Vibrant Pushti "
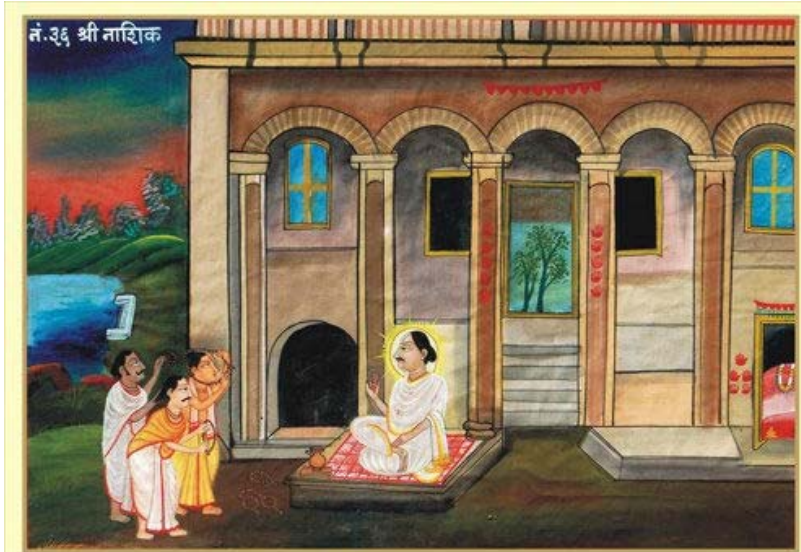
षष्ठीत्रीदशी बैठकजी - नदी तट, कुंड किनारा, सागर तट आदि स्थलीओं को श्रीवल्लभाचार्यजी को श्रेष्ठ लगती थी। वैसे भी जो जल, वायु, आकाश, धरती और अग्नि की शुद्धता और पवित्रता जहां हो वो श्रेष्ठ स्थली ही होती है, **ऐसी स्थली पर परम श्रेष्ठ - उत्तम अधिपति का बिराजना - सर्वत्र निराला, सर्वत्र आनोंदित, सर्वत्र महकता स्थल। जहांसे मधुर रचनाए जो जीव और जीवन की अभिवृद्धि करते करते आनंदोत्सव उड़ाए, सिंचे, उत्सवे। न भय, न डर, न संशय, न संदेह, न असमंजस, न द्विअर्थी शास्त्रोचार सदा पुष्टिमार्ग सिद्धांत संस्कारका सर्जन।** मंत्र, यंत्र और सूत्र यही मूल रचनाओ से सिद्धांत संस्कार को अपनाया जाता था। **स्थली स्थली से जो भी शुद्धता, दोष निवारण, पवित्रता के लिए अपनाना होता है, वह स्थली स्थली से उनका महात्मय और वैज्ञानिकता पुष्टिमार्ग सिद्धांत संस्कार में स्वीकार कर हर एक बैठकजी स्थली से संचालन होता था।** तुलसीजी का महात्मय यही स्थली से प्रस्थापित किया - आँगन आँगन तुलसीजी और तन के गले में तुलसीमाला को धारण करने का संस्कार यही स्थली से प्रतिपादित हुआ था। श्रीवल्लभाचार्यजी साधारण से असाधारण की ओर बढ़ते थे। यही लाक्षणिक्ता हर जीवोंको भाति थी। **" साक्षात् चरणस्पर्शो दुर्लभ: । सर्व दैव स्वप्ने त्वत् संबंध प्राप्नुम: " " सर्व एव भकता: त्वत चरणरजसैव संपादित देहवन्त:। तद् रज: प्राप्ति: येषाम्, ते त्वत सेवका एव भवनति । "** अदभूत महात्मय है तुलसीमाला जिसका स्पर्श से सर्व देवों से संबंध बंधते है, सर्वे योग्य श्रेष्ठ आत्मज का चरण रज पा सकते हो। **हे वल्लभ ! आप सर्वोत्तम हो - पुरुषोत्तम हो। " दंडवत प्रणाम " " Vibrant Pushti "**

सप्तमत्रीदशी बैठकजी - अवतार अर्थात परम भक्ति और शक्ति का धर्म संस्थापन के लिए प्राकट्य। २४ अवतार जो जो स्थली पर हुए हर स्थली का महात्मय भिन्न भिन्न है। भिन्न भिन्न महात्मय का निष्कर्ष केवल और केवल धर्म रक्षा, धर्म परिवर्तन, धर्म संस्थापन - इसीलिए तो -

" यदा यदा ही धर्मस्य ग्लानिर्भवति भारत अभ्युत्थानमधर्मस्य तदात्मानं सृजाम्यहम् ।
परित्राणाय साधूनां विनाशाय च दुष्कृताम् धर्मसंस्थापनार्थाय सम्भ्वामि युगे युगे ।। "

भक्त, वचन, सत्य, काल, समय, दिशा, पंच महातत्वों, विद्या, प्रेम और करुणा के लिए अवतार आवश्यक है। जिससे न्याय, फल, विश्वास, रक्षा, सलामती, ऊर्जा, वात्सल्य, धर्म, सिद्धांत, प्रेम और करुणा का संस्थापन हो। श्रीआचार्य का पार्दुभाव ऐसी हर स्थली पर स्थिर हुआ जहां अवतार का प्राकट्य था, जिससे जीवोंकी धर्म शिस्तता और शिक्षा में योग्यता, स्वीकार्य, श्रद्धा और विश्वास का संपादन सरलता से हो। श्रीपनानृसिंहजी की स्थली का महात्मय से आसपास के जीवों की शिक्षा - सांत्वना श्रीवल्लभाचार्यजी के भागवत सत्संग से योग्यता उजागर होता था जिससे पुष्टिमार्ग सिद्धांत संस्कार सरलता से स्वीकार्य होता था।

" स्व अवतार प्रयोजनं विचार्य अस्मासु कृपा कर्तव्या । यत्र स्वरुपम् एव अन्यथा करोति, तत्र वाचम् अन्यथा करोति, इति किंम् व्यक्त्व्यम। "

" सजातीयो हि सजातीयं मार्गस्थं द्रष्टा गच्छति । "

" भगवति हृदि समाविष्टे लीलाभि: सहिते "

अति सूक्ष्मता से भक्त की सामर्थ्यता और भक्त की कक्षा समझाई है। भक्त अर्थात साक्षात भगवद स्वरुप - भक्त अर्थात साक्षात भगवद लीला। " " श्रीवल्लभ पाय लागु " " Vibrant Pushti "

बैठक–38

श्री लक्ष्मण बालाजी

श्रीलक्ष्मणबालाजी के अति प्रसिद्ध देवालय के समीप छोंकर वृक्ष के नीचे श्रीमहाप्रभुजी की बैठक है। प्रभु श्रीलक्ष्मणबालाजी को आपश्री ने मनोहर की सामग्री अरोगाई थी। श्रीमहाप्रभुजी ने यहां श्रीमद् भागवत सप्ताह किया था।

अष्टत्रीदशी बैठकजी - पंखी कलरवे - कृष्ण कृष्ण, पशु दहाड़े - कृष्ण कृष्ण, वनस्पति झूले - कृष्ण कृष्ण, कीटक गुनगुने - कृष्ण कृष्ण, झरना कलकले - कृष्ण कृष्ण, नदी सरसरे - कृष्ण कृष्ण, सागर घूघवे - कृष्ण कृष्ण, फूल महके - कृष्ण कृष्ण, धरती रज करकरे - कृष्ण कृष्ण, वायु सन सने - कृष्ण कृष्ण, बादल गरजे - कृष्ण कृष्ण, तारें टिमटिमे - कृष्ण कृष्ण, सूर्य तेजे - कृष्ण कृष्ण, चंद्र शीतले - कृष्ण कृष्ण, रात निरवे - कृष्ण कृष्ण, दिन चहले - कृष्ण कृष्ण, दिशा संज्ञे - कृष्ण कृष्ण, नक्षत्र द्रवे - कृष्ण कृष्ण, यज्ञ प्रज्वले - कृष्ण कृष्ण, प्रेम उज्वले - कृष्ण कृष्ण, आनंद प्रक्टे - कृष्ण कृष्ण, देव स्तुते - कृष्ण कृष्ण, दानव याचे - कृष्ण कृष्ण, मानव पुकारे - कृष्ण कृष्ण, भक्त आंतर नादे - कृष्ण कृष्ण, मुनि मनसे - कृष्ण कृष्ण, ऋषि तपस्वे - कृष्ण कृष्ण, राजा संस्थापे - कृष्ण कृष्ण, ब्रह्म ॐकारे - कृष्ण कृष्ण, ब्रह्मांड गूँजे - कृष्ण कृष्ण ! कृष्ण कृष्ण कृष्ण कृष्ण !

श्रीवल्लभाचार्यजी आपके पुरुषार्थसंधान से - कृष्ण ! कृष्ण ! अदभूत मेरे वल्लभ ! अदभूत मेरे कृष्ण ! अदभूत मेरे परमानंद ! अदभूत मेरे स्वराटानंद ! अदभूत मेरे ब्रह्मानंद ! अदभूत मेरे विश्वानंद ! अदभूत मेरे प्रेमानंद ! अदभूत मेरे निजानंद ! अदभूत मेरे नित्यानंद !

श्रीवल्लभाचार्यजी की हर बैठकजी से ये गूँज उठती है और हर हर में स्पंदन जगाती हर हर में आनंद स्फूर्ति है।

" भगवद् आवेशे हि सर्वज्ञता भवति। तेषां च कार्यम् भगवद् पद दर्शनम् । "

स्थली स्थली - बैठक बैठक - सत्संग सत्संग - शास्त्र शास्त्र - पुष्टि पुष्टि को प्रणाम ! **" Vibrant Pushti "**
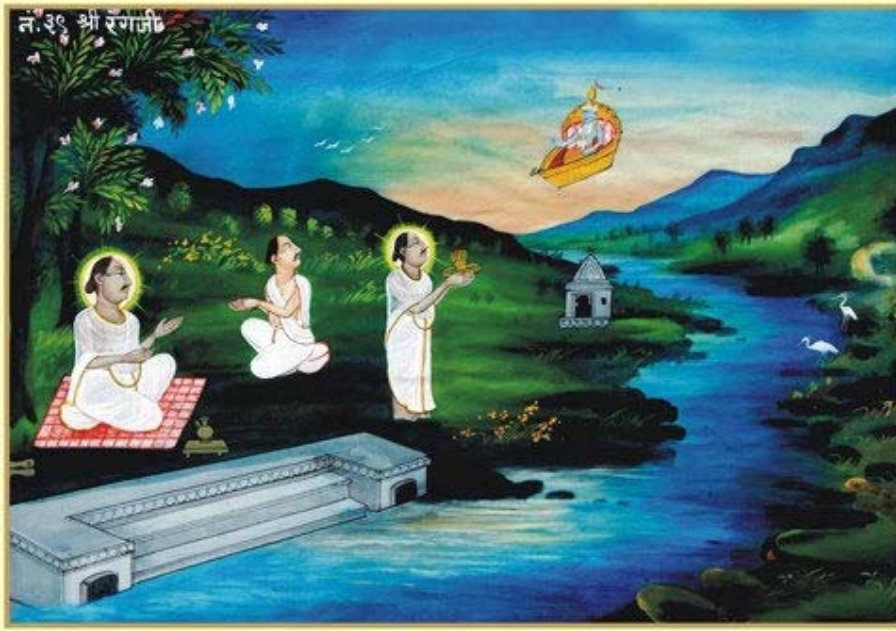
नवमत्रीदशी बैठकजी - बैठकजी जीवंत और साक्षात स्वरुप है - भक्त और भगवान का - शिष्य और आचार्य का, संग और सत्संग का, भक्ति और सेवा का, विश्वास और शुद्धता का, पवित्र और भाव का, ज्ञान और शिक्षा का, धर्म और संस्कार का, निधि और प्रतिनिधि का, संस्कृति और शिस्त का, करुणा और प्रेम का, समर्पण और दासत्व का। श्रीवल्लभाचार्यजी का उदेश्य बैठकजी से पुष्टिमार्ग सिद्धांत संस्कार का तेज ऐसा प्रकट हो जो संसार के, जगत के, ब्रह्मांड के सारे अवगुण नष्ट हो कर संस्कारमय सृष्टि का उत्स हो, जो **क्षण क्षण आनंद उत्सव - प्रेम उत्सव - विज्ञान उत्सव - प्रज्ञान उत्सव - माधुर्य उत्सव और सायुज्य उत्सव का निर्माण हो।** स्वार्थ, कपट, दोष, कलंक, संदेह, संशय, द्वंश, द्वेष, कलेश, विश्वासघात, अंधश्रद्धा, मान्यता, डर, भय, अज्ञान, अंधकार, निम्नता, घृणा, झूठ, असत्य, दुराग्रह, दुष्टता, कष्टता, भेद, क्रूरता आदि का नाश हो। जगत की रचना रसोत्सव के लिए है, इसीलिए तो श्रीप्रभु की " रसो - वै - स " कहते है। **बैठकजी का माध्यम जीवों और परब्रह्म से अनोखा है, सुद्रड है, सुयोजित है, संयोजन है, सायुज्य है।**

हर जीव पुकारे - **" बैठक बैठक यात्रा डंडू पाऊँ रज रज भक्ति रे - घड़ी घड़ी मूरत निहालु चित्र चित्र सूरत तेरी रे "**
"उत्सवो नाम मनस: सर्वविस्मारक आल्हाद:। उत्सवत्व संपादनाय सजातीय अनेक रस: उत्पादनार्थम् विशेषम् आह।"
श्रीवल्लभाचार्यजी का अथाग प्रयत्नो से बैठकजी पुष्टिमार्ग सिद्धांत संस्कार की उच्चतर माध्यम शिक्षा के लिए श्रेष्ठ स्थली है। **" हे आचार्य धन्य हो आपने जो क्षण क्षण जीवों के उद्धार के लिए शिक्षात्मक क्रिया करते रहते थे। "**

" Vibrant Pushti "
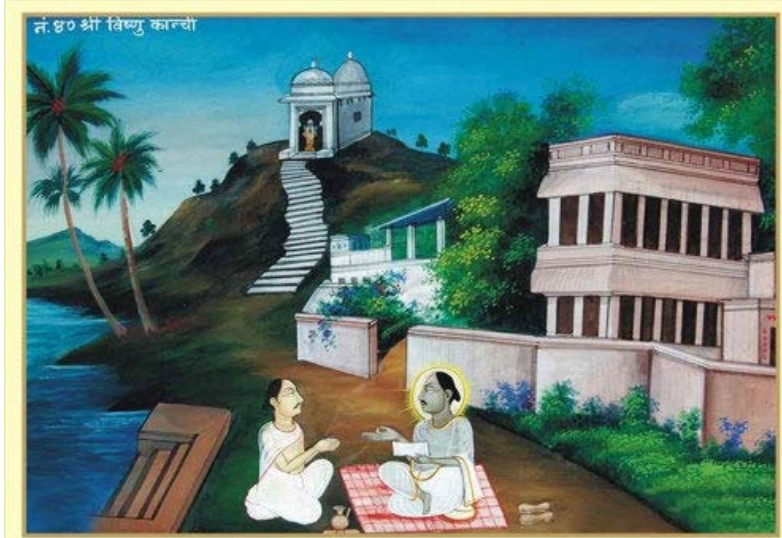
चतुर्थदशी बैठकजी - आध्यात्मिक पूंज की पुष्ट भूमि हिंदुस्थान के कहीं आचार्यो - ऋषिमुनिओं - तपस्वीओं ने आध्यात्म ऊर्जा से इतना सिंचा है की जीव जीव भूमि भूमि स्थली स्थली अवकाश अवकाश वैष्णवता से भरे है। रज रज बूँद बूँद लहर लहर महक महक पत्ते पत्ते कण कण रास्ते रास्ते पर आध्यामिकता स्फूर्ति है - शिक्षा है - संस्कार है। **श्रीवल्लभाचार्यजी की दासत्व निधि अनोखी थी, वो जो भी फल, फूल, अन्न सामग्री, कपड़े और कोई पदार्थ श्रीप्रभु के चरणामृत और अधरामृत बिना समर्पण नही अपनाते थे।** उनकी हर सेवा अपने आप से सिद्ध की होती थी। पुष्टिमार्ग सिद्धांत संस्कार का ये संस्कार सर्वोच्च है - ये संस्कार में खुद की शुद्धता, पवित्रता, दासत्वता, योग्यता सिद्ध होती है। जिससे स्व हूँ और स्व दोषित, अज्ञानी, अंधश्रध्येय, दुष्ट आदि हूँ तो स्व की योग्यता क्या? श्रीप्रभु तो सर्वश्रेष्ठ है, सर्वोत्तम है, सर्वोच्च है, पूर्ण पुरुषोत्तम है तो स्व को भी श्रेष्ठ, उत्तम, उच्च, पुरुषोत्तम होना ही होगा। **दासत्व की मुख्यता प्राथमिक है। स्व पाठी सेवक का मुख्य गुणधर्म है।** जो जो स्थली पर पहुँचे हर स्थली पर स्व पुरुषार्थ अर्थात " स्वे स्वे कर्माणी अभिरथा ।

" भगवद् सेवारथम् हि संसारे उत्पाध्यंते । ते सर्वे संसारगत मायया विपरीता एव भवन्ति। तथापि 'कृष्ण तवास्मि' इति उक्त: सर्वम् एव भयं दूरी करोति । शरणागतस्य सर्वे अपराधा निवृता भवन्ति इति। " सात्विक, विशुद्ध, श्रेष्ठ, आध्यात्मिक, सूक्ष्म, चेतन, योग्य संस्कार सिंचन - जीवकों केवल और केवल भक्त में ही परिवर्तित कर सकता है - केवल दासत्व ही हो सकता है। जो श्रीप्रभु के अति प्रिये होते है। **" Vibrant Pushti "**

बैठक–41

श्री सेतुबन्ध, रामेश्वर

निखिल विश्वविद्यायिका श्रीसीताजी द्वारा निर्मित तथा प्रभु श्रीरामचन्द्रजी के द्वारा स्थापित भगवान रामेश्वर के इस पावन तीर्थ में छोंकर वृक्ष के नीचे श्रीमहाप्रभुजी की बैठक है। यहां आपश्री ने श्रीमद् भागवत सप्ताह किया है। कृपार्णव आचार्यश्री ने यहां के तीर्थ क्षेत्र में विधिवत् स्नान किया है।

प्रथमचतुर्थदशी बैठकजी - **निधि स्वरुप - श्रीवल्लभाचार्यजी ने निधि स्वरुप का स्पर्श और पहचान अपनी जगत परिक्रमा में सिद्धता पायी थी। जो जो निधि स्थली पर उन्होने जो जो अनुभूति और स्पर्श पाया - यही स्पर्श और अनुभूति से उनमें निधि स्वरुपों के प्राकट्य हुए।** उनकी तपश्चर्या और उनका आंतरिक उत्थान और उनकी आध्यात्मिकता उनके डग डग से, उनकी नजर नजर से, उनकी साँस उच्छ्वास से, उनके स्वर स्वर से, उनके विचार विचार से, उनके स्पंदन स्पंदन से, उनके कर्म कर्म से, उनके व्यवहार व्यवहार से, उनके सत्संग सत्संग से जो जो क्षण, रज, बूँद, तेज, वनस्पति, वायु और अवकाश का समन्वय स्थली के वातावरण आधारित निधि का सर्जन होता था। **यह निधि अनेक अलग अलग पदार्थो से एकतत्व होते थे और कहीं प्रकार के आकार और साकार स्वरुप में प्रकट होते थे।** श्रीवल्लभाचार्यकी यह अनुभूति कहीं भगवदीय वैष्णव अनुयायीने भी पायी है और आज भी ऐसी अनुभूति स्पंदनीय है।

" यस्य पाद सेवया ऊर्जिता आत्मविद्या भवति। ब्रह्मविद चरण सेवया उत्पन्न भगवद् चरण सेवया पुष्टा भवति । तथा गुरो: भगवत: सकाशात् च जायमान ज्ञान विशेष: । "

" अत्र अयं साधन क्रमोपि निरूपित: मार्गान्तर अनुसारेणैव गुणोत्कीर्तन पर्यंतम् अधिकारे सिद्धे पश्चात् कीर्तनं भगवदीयानां प्रथमं साधनं, तत: सेवा रुच्या सेवा, ततो ज्ञान उदये सर्वत्र भगवद् अनुतत् साधक पुण्य कथा श्रवणम्, तत: सर्वत्र भगवद् साक्षात्कार:।"

" भगवद् भक्तै: सह साक्षात् परंपरया वा सर्वेषाम् आसक्ति: अस्ति इति सर्वे भगवदीया एवेति प्रमेयत्वं तेषाम् । "

श्रीआचार्य ! आप की ऊर्जात्मक वाणी, शिक्षात्मक उदेश्य, पुष्टात्मक सिद्धांत संस्कार हमें आकर्षित करते है और सदा श्रीप्रभुमय होने प्रेरित करते है। हम क्षण क्षण धन्य हो रहे है। **हे वल्लभ ! प्रणाम ।** **" Vibrant Pushti "**
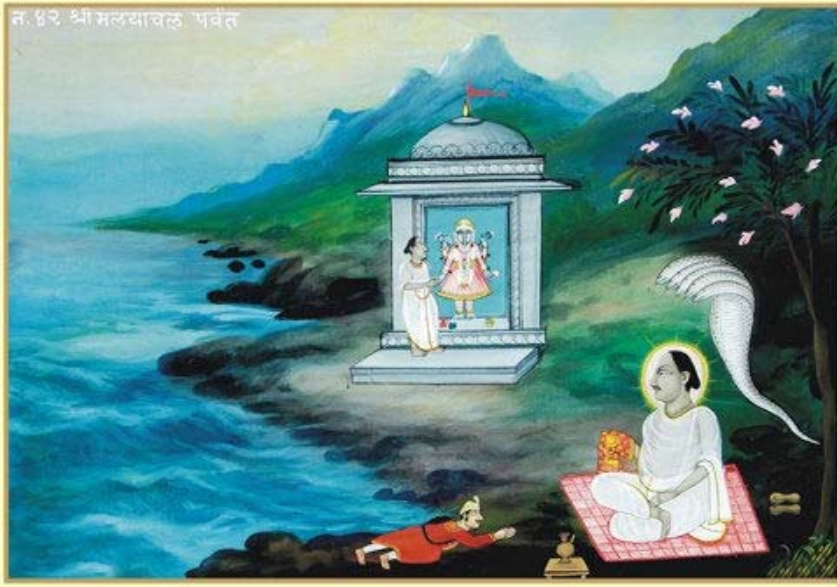
द्वितीय चतुर्थदशी बैठकजी - पर्वत - प्रकृति के जागतिक तपस्वी, ऋषि, मुनि है। तपस्वी, ऋषिमुनिओं के अध्ययन का प्रतिकात्मक स्वरुप है, इसीलिए पर्वत को समाधिस्थ स्थली समझा जाता है। हिमालय, गिरिराज, गिरनार, कैलाश आदि जो सदा पूजनीय, वंदनीय और स्थितिप्रज्ञ आत्मीय तत्व है। अपना आचल से सारी सृष्टि की रक्षा और जीवन निर्वाह करते है। श्रीवल्लभाचार्यजी का पुष्टिमार्ग सिद्धांत संस्कार प्रणाली में ऐसी स्थली का महात्मय विशेष रूप से है - नदी, पर्वत, कुंड, तालाब। ये सर्वे जीवननिर्वाह के ऐसे साधन है जो सदा अमृतमय है। यहां जीव अपने योग्य पुरुषार्थ, शिक्षा, अध्ययन, व्यवस्था, सुख संपति, धर्मआचरण सिंचन, सामाजिक सेवा, उत्थान और दिशासूचक जीवन जी सकता है। श्रीवल्लभाचार्यजी समझते थे की ऐसी स्थली पर ही जीव अपने स्वभाव, मन, शरीर को ऊर्जात्मक करके पुष्टिमार्ग सिद्धांत संस्कार स्वीकार कर अपने पुरुषार्थ से जोड़ कर स्व को योग्य, श्रेष्ठ, उत्तम बना कर आनंद, भजनानंद, परमानंद पा सकता है। आज भी श्रीवल्लभाचार्यजी की सर्वे बैठकजी से सदा आनंद, भजनानंद, परमानंद का उत्स वैष्णव लूटते ही रहते है। आपकी दीर्घद्रष्टि, संवेदना, पराकाष्ठा, उदेश्य, सूक्ष्मता, आचरण, संकल्प, पुरुषार्थ, स्व परमोत्तम है, जो हमें सिंचते सिंचते पुष्टिमार्ग सिद्धांत संस्कार से पुरुषोत्तमता प्रदान करते है। **" अमृतत्वं ब्रह्मभाव:, पुरुषोत्तम भावो मद् भाव: " " भगवद् चरण: स यदा भक्तिमार्गेण गृहितो भवति तदा भगवद् भकतानां कायवाङ्ग्न्मनोभि: दढं गृहीत: रसात्मकत्वाद् भकतानाम् आनन्दरुपं स्त्रवति। स भक्तिरस इति उच्यते । सोपि शब्द ब्रह्मणि भागवत आदौ उद्धृत: घटो उद्धृत जलमिव महंता श्रवण स्मरण कीर्तनादिभि: इंद्रिय आघातै: तद् छिद्र द्वारा स्वरस: हृत् हृदे विनिविशति। स तु भक्तिरस अपेक्षयापि पुन: भकते इंद्रियै: पावितत्वात् निर्गलित: ततो अपि अधिकरस:।"** अदभूत श्रीवल्लभ अदभूत! **" Vibrant Pushti "**
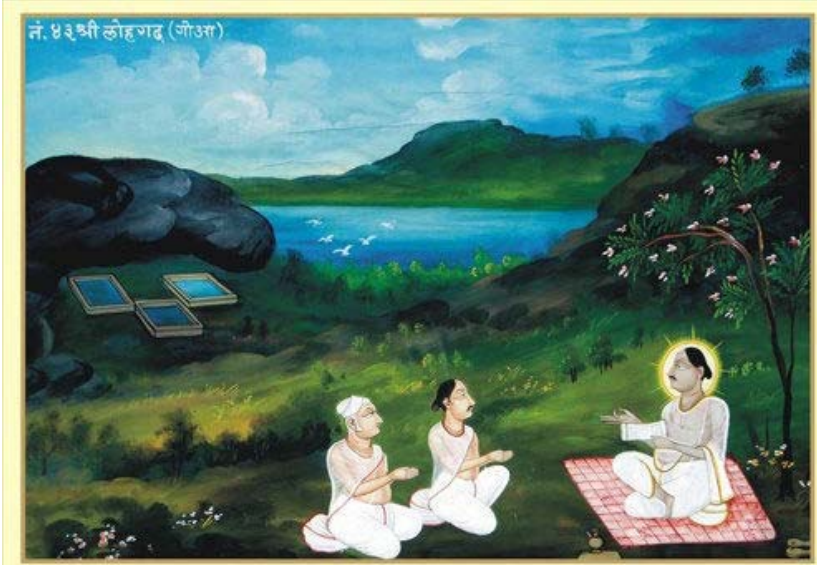
तृतीयचतुर्थदशी बैठकजी - बैठकजी का प्राधान्य श्रीवल्लभाचार्यजी की रीति और नीति से पुष्टिमार्ग सिद्धांत संस्कार के लिए श्रेष्ठ साधन परिस्कृत हुआ। जो जो स्थली पर यह निर्मित हुआ वो वो स्थली पुष्टिमार्ग सिद्धांत संस्कार का एक शिक्षण - सेवा - सिद्धांत और संस्कार संस्थापन का केंद्र हो गया। श्रीवल्लभाचार्यजी के कहीं अनुयायी श्रीवल्लभाचार्यजी का प्रतिकात्मक रूप प्रस्थापित कर वहां पुष्टिमार्ग सिद्धांत संस्कार की रीति, नीति और निधि शिक्षित कर एक पाठशाला, एक धर्म स्थली, एक पुष्टि सिंचन कड़ी, एक यात्रा स्थली, एक पुष्टि यज्ञ वेदी, एक श्रीवल्लभ साक्षात्कार स्पर्श रज और आदि कहीं चरित्र रूप में आविर्भाव होने लगी। जो जो लीला श्रीवल्लभाचार्यजीने अनुभूति पायी वो ही अनुभव का आनन्द स्व उत्स पाये ऐसी भावना से बैठकजी की यात्रा आयोजित करने लगे। बैठकजी की मूल प्राथमिकता का ख्याल रखते हुए, सत्संग, भागवत पारायण, पुष्टि संस्कार, पुष्टि सिद्धांत शिक्षा और पुष्टि मनोरथ उत्सवों का आनन्द उठाने लगे। जैसे पुष्टिमार्ग हवेली में जो पद्धति से सेवाक्रम व्यवस्था है वैसी ही व्यवस्था प्रणाली सर्व बैठकजी में संस्थापने लगे - जिससे कोई भी पुष्टिमार्गीय अनुयायी पुष्टि सिद्धांत संस्कार से अविचलित हो।

" सदा मन गोकुल में रखिए " " सदा मन गिरिराज में धरिए " " सदा मन श्रीवल्लभ से जोड़िए। " " भूमि: हि भगवद् चरणाविंदरूपा। तत: तीर्थ आश्रयणम् कर्तव्यं विशेषत: चरणारविंद स्फूर्ति अर्थम्। न केवलं तानि एव तीर्थानि सेव्यानि किन्तु गुरुरूपाणि अपि इति आह तीर्थ सदनानि इति। तीर्थानां गुरूणाम् सदनानि गृहाणि भुवि वर्तन्ते। अत: तानि सेव्यानि इति अर्थ:। तद् उद्धारक अलौकिक प्रकारं जानन्ति अत: तेषु गत्वा मंत्र आदि अलौकिकं भगवद् भजन साधनं शिक्षणीयम् इति अर्थ:। ये गुरु उपदेशादिना त्वयि सकृद् अपि मनो दधति। यथा कामिनां स्त्री विशेषे सकृद् चितम् तत् सर्वथा अननुभूय न निवर्तते। तथा स्नेहे जाते भगवद् रस अभिनिवेशे यदा भगवति चितं भवति। तादश: कदाचिद् अपि गृहम् न सेवते। अदष्टपूर्व: सेवेतापि दष्ट पूर्वस्तु न सेवत एव इति अर्थ:। " हे परम श्रेष्ठ आचार्य ! आपनी कृपा अपरंपार है। दंडवत प्रणाम ! " Vibrant Pushti "
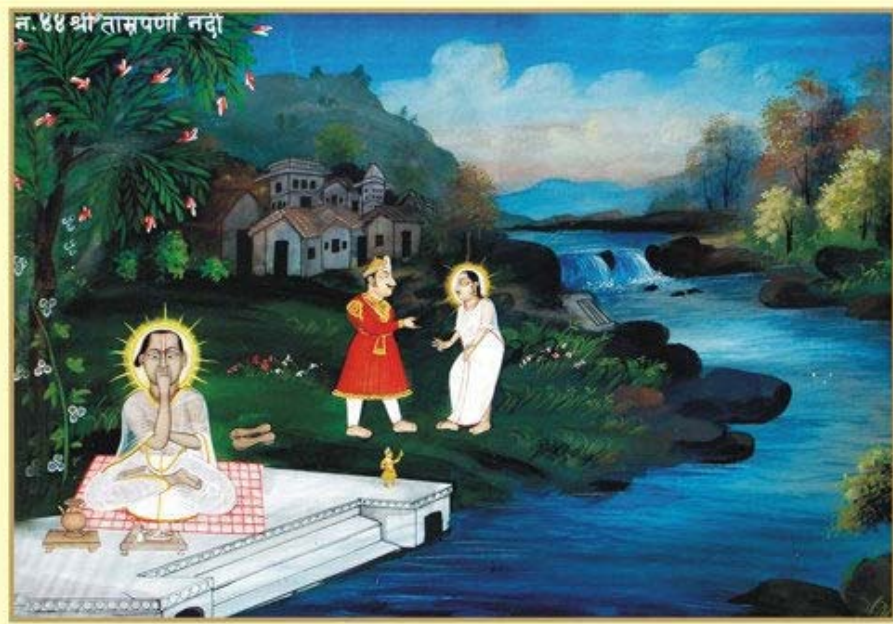
चतुर्थचतुर्थदशी बैठकजी - श्रीवल्लभाचार्यजीने जन्म से लेकर तृतीय लोक स्व गमन तक अपने को कहीं रूपो और स्वरूपोमें परिवर्तित किया - **लक्ष्मणभट्ट आत्मज - अग्निकुमार - वल्लभ - वाक्पति - वैशवानर - महाप्रभु - महालक्ष्मी पति - आचार्य - पुष्टि प्रणेता - स्व पूंज** । अर्थात जिसका भी जन्म होता है उनका परिवर्तन स्व से हि सिद्ध होता है, अगर कोई भी निकट हो, साथी हो, संस्कार हो, शिक्षा हो, जूथ हो, कबीला हो, समाज हो, वारसाई हो, पूर्वज हो, समन्वय हो, एकात्म हो, भिन्न हो, अभिन्न हो, संबंध हो, बंधन हो, प्रेम हो, भाग्य हो, नसीब हो, कृपा हो, आशीर्वाद हो, चमत्कार हो, मंत्र हो, तंत्र हो, यंत्र हो, सूत्र हो, शास्त्र हो, ज्ञान हो, विज्ञान हो, राग हो, योनि हो। **स्व से ही सर्व - स्व से ही परिवर्तन - स्व से ही चरितार्थ - स्व से ही कृतार्थ - स्व से ही सामर्थ्य।**

" स्वकीयं उपाधिरूपम् लिंग शरीरम् परित्यज्य तम एव अध्यगन् भगवद्रूपा जाता: यथा भगवान तेन अंत: पूर्णो भगवान एव जात। "

" मनोदोषेण जगद अन्यथा प्रतीयत इति। अन्यथा जगत् सच्चिदानंदरूपेण कथं न भासते। "

" भगवदीय शरीरं तेनैव भवति इति। भगवदीयत्वेन परिसमाप्त सर्व अर्था: इति। " श्रीवल्लभाचार्यजी ने अपने चरित्र से सर्व सिद्धांत संस्कार सिद्ध किए और स्व को विशुद्ध पुष्टि से शिक्षित करके जन्म जीवन को पार्दुभाव में परिवर्तित किया। श्रीवल्लभ आप महान हो, श्रेष्ठ हो। **" Vibrant Pushti "**
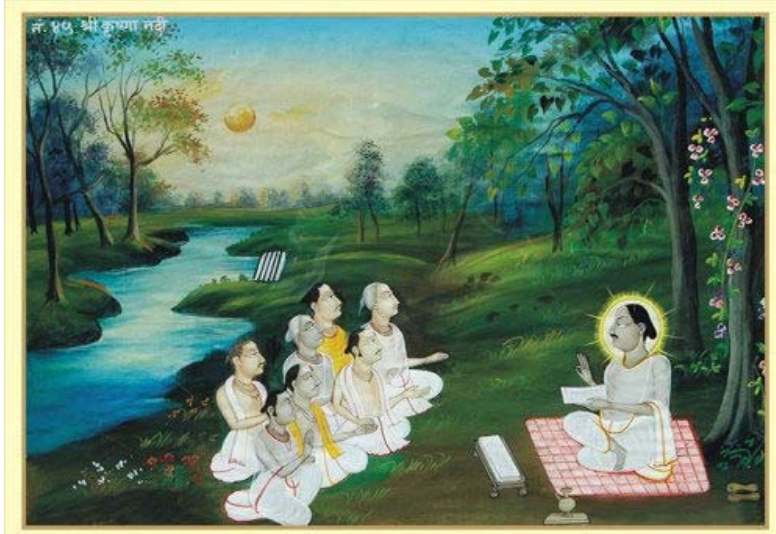
पंचमचतुर्थदशी बैठकजी - हमारी संस्कृति के कहीं आचार्यो है, पर मूलत है - **श्री आदिगुरु शंकराचार्य, श्री रामानुजाचार्य, श्री माध्वाचार्य, श्री निम्बाकाचार्य और श्री वल्लभाचार्य।** जिन्होने अथाग परिश्रम करके हिंदु संस्कृति को प्रस्थापित किया और जो मान्यता, अंधश्रद्धा, अनेक प्रकारके रीति रिवाज से बने धर्म संप्रदायों को सैद्धांतिक सूत्रो और व्यवहारिक ज्ञान विज्ञान से परिस्कृत करके सत्यता का शिक्षण सीखाया, समझाया और योग्यता ऊर्जित कराया। जगत के कोने कोने को उजागर कर के स्व चारित्र्य से हर एक जीवों के लिए श्रेष्ठ धर्म का पर्चम लहेराया। वेद - वेदान्त - उपनिषद - श्री मद् भागवत, गीता और अनेकों शास्त्रों का अध्ययन करके धर्मयुग का निर्माण किया। अनेक संतो, भकतों, तपस्वीओं, ऋषि मुनिओं का चारित्र्य को संपादित करके सिद्धांत संस्कारों को सिद्ध किया। **न कोई उंच नीच, न कोई भेद भाव, न कोई जाती ज्ञाति, न कोई गरीब तवंगर, न कोई वर्ण बंधन - अपने कर्म से जो सिंचा वैसा स्व को पाया - न कोई मान मर्यादा - न कोई धर्म वाड़ा - न कोई संप्रदाय - न कोई कुल वारसाई - स्वावलंबी स्व पाठी - सब है एक समान।**

" भक्तिमार्ग अनुसारिणि साधन शक्ति:। पुष्टिमार्ग अनुसारिणि फल शक्ति: इति सिद्धम् ।"

" जीव धर्म अपेक्षाया भगवद धर्मा उत्कृष्टा इति जीव धर्मा परित्यज्य भगवद् भाव प्राप्त इत्यर्थ। "

श्रेष्ठ ! श्री आचार्यो श्रेष्ठ ! आपका पुरुषार्थ अवश्य सिद्ध करेंगे। **आशीर्वाद वचनम् !** **" Vibrant Pushti "**
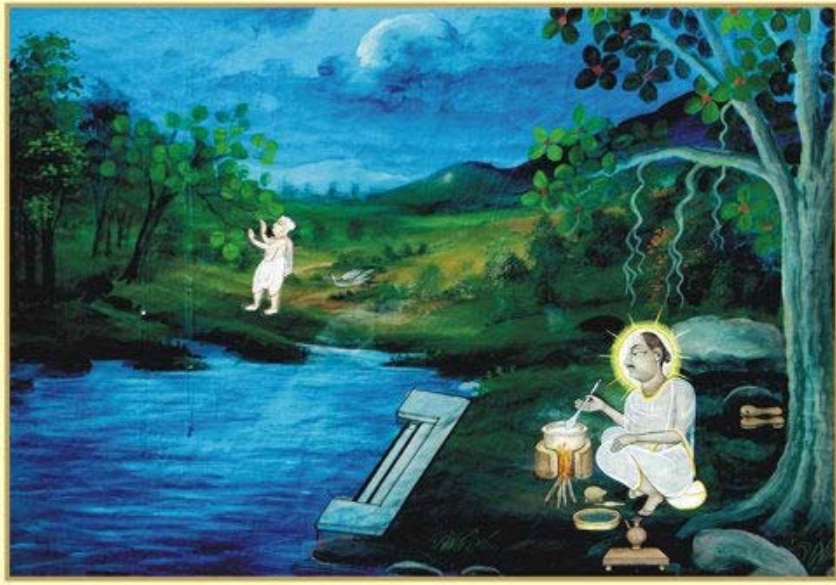
षष्टचतुर्थदशी बैठकजी - **बैठे बैठे श्रीवल्लभ ! पुष्टि स्पंदन गूँजे - रज रज गूँजे - कण कण गूँजे गूँजे पशु पंखी ।**
लहर लहर समीर गूँजे - नदी गूँजे सरोवर गूँजे - सूर्य गूँजे चंद्र गूँजे गूँजे सागर घनघोर ।
वनस्पति गूँजे हरियाली गूँजे, वसंत गूँजे हेमंत गूँजे, सर्व गूँजे सर्वज्ञ गूँजे, गूँजे राग मल्हार।
गूँज गूँज उठे पुष्टि गूँज, गूँज गूँज उठे कृष्ण गूँज, गूँज गूँज उठे राधा गूँज, गूँज गूँज उठे यमुना गूँज।
गूँज गूँज उठे गिरिराज गूँज, गूँज गूँज उठे वल्लभ गूँज, गूँज गूँज उठे विट्ठल गूँज, गूँज गूँज उठे वैष्णव गूँज।

बैठकजी से उठती गूँज सर्वत्र पुष्टिमार्ग सिद्धांत संस्कार की नीव सलामत, माधुर्य, प्रेम और सेवक की उद्घोषणा करते है, जिससे हर जीव स्व को आनन्द स्वरुप में परिवर्तन करने बार बार अपनी यात्रा प्रायोजित करते है और स्व को पुष्टि संस्कार में एकरूप हो कर जन्म जीवन श्रीप्रभु को न्योछावर करते है। धन्य धन्य भाग हमारे जो श्रीवल्लभ स्वरुप स्थली स्थली बिराजते है। **बैठकजी से अनेकों वैष्णव, अनेकों दास, अनेकों सेवक और अनेकों मनोरथी पुष्टि लीला की अनुभूति पायी, सदा जुड़े श्रीवल्लभ के पंथ - जो अष्टसखा कहेलाए - कीर्तन कीर्तन - भक्ति भक्ति गली गली लूटाए।** **रज रज पुष्टि, कण कण पुष्टि, बूँद बूँद पुष्टि, रंग रंग पुष्टि हर तरफ उड़ाए, हर कोई वैष्णव, हर कोई पुष्टि सेवक, हर कोई अनुयायी - वल्लभ वल्लभ गुण गाए, बैठक निकुंज विश्राम पाए, यमुना यमुना रसपान स्वीकारे, गिरिराज गिरिराज परिक्रमा सिधावे, श्रीनाथजी श्रीनाथजी लीला जगावे।** **" भगवद भकतानां कायवांग मनोभि: द्ददं ग्रहीत: रसात्मकत्वात् भकतानां आनंदरुपे स्रवति। स भक्तिरस इति उच्चते।" " आनंदार्थम् एव जीवस्य प्रवृति: आनद्श्च भगवति एव अस्ति न अन्यत्र।" " साक्षाद् उपयोग पर्यन्तम् हि विनियोग: वक्तव्य:।"** जन्म के प्रथम साँस से जीवन के अंतिम साँस में जीव अपने आपको मूल पूर्णत पुरुषोत्तम में एकात्म - एकैय कर सकता है। श्रीवल्लभाचार्यजी के पुष्टिमार्ग सिद्धांत संस्कार के अदभूत रहस्य है। **" Vibrant Pushti "**
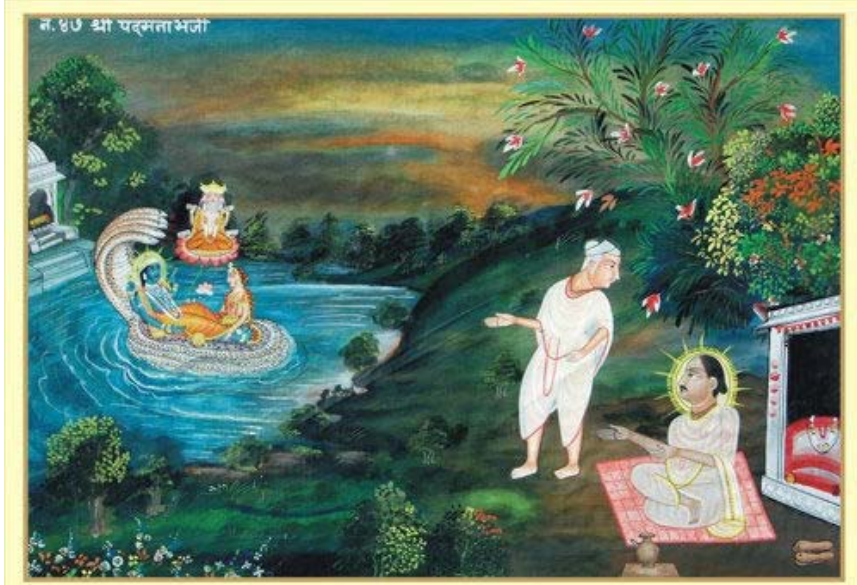
बैठक–47
श्रीपदम्नाभजी

इस तीर्थ में छोंकर वृक्ष के नीचे श्रीमहाप्रभुजी बिराजित है। बड़भागी श्रीदामोदरदासजी हरसानी को आचार्यप्रवर ने श्रीपद्मनाभ भगवान के स्वरूप का दर्शन यहां कराया है।

सप्तमचतुर्थदशी बैठकजी - जीव को जीवन जीने के लिए कहीं साधनों ली आवश्यकता रहती है, जैसे जल, वायु, अन्न, तेज बाकी साधनों को वो यंत्र, तंत्र, मंत्र और पुरुषार्थ से उत्पादित, सर्जन और व्यवस्था कर सकता है - जैसे वस्त्र, रहने की कुटियाँ, और आवश्यक वस्तुए, जिससे अपना निर्वाह और जीवन व्यतीत कर सकता है। जीवन योग्यता से व्यतीत करने उन्होने ही कहीं प्रकार की व्यवस्था, पद्धति, नीति नियमे, रीति रिवाज और सुविधाए प्रतिबद्ध रची, जिससे वह अपनी साधारण असाधारण क्रिया प्रक्रिया सुद्रड कर सके, जीवन का धर्म, मर्म और कर्म का आनंद पा सके और लूट सके। **सूक्ष्मता से बैठकजी का महात्मय जागृत कर रहा हूँ - स्थली जो स्व रचीत है, यह स्व रचीत में उनका ज्ञान, शिक्षा, धर्म, प्रखरता, सर्जनता, सिद्धि, विधि, निधि, योग्यता, विशिष्टता, निपुणता, गुणात्मकता और वैकल्पितता की आवश्यकता रहती है, जो उन्हें अपने आप ही शिक्षित करनी होती है। इसीलिए स्थली उनके जीवन का एक ऐसा लक्ष है की जिसकी स्थली योग्य उनका जीवन योग्य।** श्रीवल्लभाचार्यजी की श्रेष्ठता यहां ही प्रतिपादित होती है। उनका डग जहां जहां स्थिर हुए वहां वहां उन्होने असाधारण सृष्टि रची है। **बैठकजी ही ऐसा माधुर्य साधन है जो जीवन को मधुर और आनंदित कर सकती है, नही तो भटक भटक और भटक - अधूरप अधूरप और अधूरप, जो जीवन को अप्रिय कर देती है।** यज्ञ, तपस्या, शिक्षा और पुरुषार्थ करना हो तो स्थली की आवश्यकता अनिवार्य है। **श्रीवल्लभाचार्यजी का पथ, उदेश्य, सेवा, सिद्धांत, संस्कार और परिस्कृत स्थली से ही सिद्ध होती थी। बैठकजी ही सर्व श्रेष्ठ साधन निर्मित है जिससे संकल्प, संस्कार सिद्धांत पूर्ण हो सके। " तीर्थम् हि सर्वेषाम् पापम् दूरी करोति, तत् पापम् तीर्थे एव तिष्ठति। "** अदभूत श्रीवल्लभाचार्यजी अदभूत ! इतनी सूक्ष्मता से बैठकजी - स्थली के लिए ज्ञात करना, जीव जीवन के लिए योग्य है। **" Vibrant Pushti "**

अष्टचतुर्थदशी बैठकजी - बैठकजी कहां कहां है? बैठकजी जहां जहां श्रीवल्लभाचार्यजीने भागवत पारायण, पुष्टिमार्ग सिद्धांत संस्कार की ऊर्जा उठे, जहां पुष्टि मनोरथ, पुष्टि सत्संग, पुष्टि उत्सव, पुष्टि सेवा और पुष्टि माधुर्य का उत्स हो वो स्थली - बैठकजी। गहराई से अध्ययन करे - और श्रीवल्लभाचार्यजी के उदेश्य को टटोले तो बैठकजी घर घर है, श्रीवल्लभ घर घर बिराजे।

गृहे गृहे श्रीवल्लभ - गृहे गृहे श्रीयमुना
गृहे गृहे श्रीनाथजी - गृहे गृहे श्रीगिरिराज
गृहे गृहे श्रीविट्ठल - गृहे गृहे पुष्टि स्पंदन
गृहे गृहे व्रज - गृहे गृहे गोप गोपि
गृहे गृहे सेवा - गृहे गृहे आनंद

पुष्टिमार्ग सिद्धांत संस्कार का सर्जन श्रेष्ठ, शुद्ध और पवित्र सिद्धांत संस्कार से ऊर्जिता है।

गृहे गृहे बैठकजी - ओहह ! अनोखी धारा - अदभूत प्रज्ञा ! सर्वत्र आनंद - सर्वत्र परमानंद ! सर्वे में नंदनंदन सर्वे में पुष्टि वंदन ! निष्ठा - श्रद्धा - विश्वास - एकात्मता - प्रेम - पवित्रता सर्व जीवों में शिक्षित और सिंचित हो तो हर **जीव बैठकजी - शरीर बैठकजी - हर गृह बैठकजी - हर जीवन बैठकजी।** बैठकजी ऐसा सर्जन है जो स्व को पहचान सके, स्व को ऊर्जावान कर सके - स्व को भगवान में रूपांतर कर सके। अदभूत श्रीवल्लभाचार्यजी ! अदभूत ! आपको क्या कहे - **रॉम रॉम में पुष्टि स्पंदन उठ रहे है - आत्म में पुष्टि ऊर्जा उठ रही है - मन में पुष्टि सिद्धांत संस्कार की सकारात्मकता उठ रही है - नैनों में पुष्टि सचित्र भाव प्रकट हो रहे है - चारों ओर पुष्टि पुष्टि और पुष्टि। हे वल्लभ ! अनोखा जन्म अनोखा जीवन - जिस देखू तित पुष्टि ही पुष्टि।** **" एतेन परस्पर वरणम् उक्तम्, वरणत्व उक्त्या यथा कन्या स्व अभिमतम् एव स्व पतित्वेन वृणुते चरो वा, तादृशीम् एव कन्या स्व स्त्रीत्वेन तथा च भगवान् स्व दासत्वेन आत्मीयत्वेन अङ्गी करोति इति उच्यते, तथा च यथा तद् अनन्तरम् न अन्यत्र विनियोग: तस्या: तथा एव ऐतस्य अपि इति ज्ञापितं भवति ।"** मेरे प्रभु प्रणाम ! **" Vibrant Pushti "**
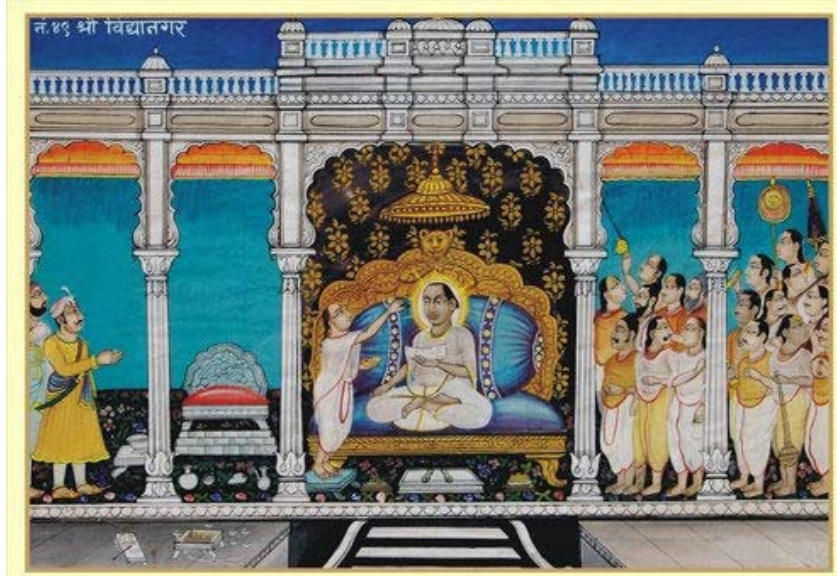
बैठक–49

श्री विद्यानगर

विद्यानगर में राजा कृष्णदेवराय की ऐतिहासिक " धर्मसभा " में भक्तिमार्गाब्ज मार्तण्ड श्री वल्लभ प्रभु ने विजय प्राप्त की थी। आपश्री का यहां " कनकाभिषेक " हुआ था और निम्नांकित विरुदावली सेवार्पित की गई थी :– " श्री वेदव्यास विष्णु स्वामी सम्प्रदाय समुद्धार सम्भृत श्री पुरुषोत्तम वदनावतार सर्वाम्नायसंचार वैष्णवानाय प्राचुर्यकार श्रीबिल्वमंगलाचार्य साम्प्रदायिकार्पित सम्राजासनाखण्ड भूमण्डलाचार्य जगद्गुरु महाप्रभुः।"

नवमचतुर्थदशी बैठकजी - श्रीवल्लभ जहां जहां पहुँचे - जहां जहां बिराजे -वहां वहां मूलत्व सिद्धांत प्राकट्य - संस्कार प्राकट्य - दूरितक्षय निवारण - मूलभूत जिज्ञासा और प्रश्न उद्धारक। जगत जीवन में असंख्य जिज्ञासा है - प्रश्न है। हर एक जिज्ञासा का सचोट स्पष्टीकरण - योग्य अनुसंधान विवरण, और सैद्धांतिक मार्गदर्शन। अर्थात **मनुष्य जन्म जीवन और पुरुषार्थ से जीव पुरुषोत्तम हो सकता है, महाप्रभु हो सकता है, वाक्पति हो सकता है, वैशवानर हो सकता है, आचार्य हो सकता है, सिद्धार्थ हो सकता है, भाग्य विधाता हो सकता है, कालपति हो सकता है। भगवान हो सकता है, परब्रह्म से एकात्म सकता है अर्थात रसो - वै - स का रस है जो रसो - वै - स से एक रस हो सकता है।** इसीलिए तो जीव अंश है जो अंशी से ही उत्स हुआ है। जो अंशी है वो सर्वथा अंश अपनी योग्यता से सर्वज्ञ हो कर सर्वे गुणधर्मो अपने में शिक्षित और सिद्ध कर सकता है। प्रणाम श्रीवल्लभ प्रणाम !
" धियः बुद्धिः प्रच उदायात् इति, तेन सर्व प्रेरकत्वम् आयाति, प्रकटत्वेन मूल पुरुषोत्तम स्वरुप पर्यन्तम्, च उद्यात् इति प्रेरयति फलसंबंधं करोति इति अर्थ "। " भगवति जीवैः नमनम् एव कर्तव्यम् न अधिकं शक्यम् इति सिद्धांतः। परम काष्ठापन्नं वस्तु नमस्यत्वेन निर्दिशति। रूपनाम विभेदेन यः क्रीड़ति, रूपनाम विभेदेन यः जगत्, रूपनाम विभेदेन यतः जगत इति। " जीव जीवन और जगत की सूक्ष्मता - जो जीव समझ ले तो जीव स्व अपने को श्रेष्ठ परिवर्तित कर सकता ही है। **" भगवान एव हि फलम् स यथा आविर्भवेद् भूवि । गुणस्वरुप भेदेन तथा तेषाम् फलम् भवेत। "** **" Vibrant Pushti "**

पंचमदशी बैठकजी - श्रीवल्लभाचार्यजी जगत परिक्रमा में डग भरते भरते अपनी ओरा से अनेक जीवों को पुष्टि जीव में परिवर्तित किया और सृष्टि में पुष्टि वातावरण प्रस्थापित करने यही जीवों को परिक्रमा की आज्ञा करी, जिससे एक से अनेक और अनेकों से असंख्य - सारी सृष्टि पुष्टि सिद्धांत संस्कार में पुष्ट हो जाय तो न कोई संदेह, न कोई संशय, न कोई रोग - भोग और वियोग रहे। उन्होने **अष्टसखा - अनेक परम भगवदीय वैष्णवों को ऐसी स्थली पर सैद्धांतिक पुष्टि परम श्रेष्ठ भगवदीय की उपाधि से योग्यता प्रदान कर पुष्टिमार्ग सिद्धांत संस्कार की ज्योत पुष्टि यज्ञमें प्रतिपाद कर दिया, जिससे स्थली स्थली कसबा कसबा, मोहल्ला मोहल्ला गाँव गाँव पुष्टिमार्ग सिद्धांत संस्कार से एकाकार हो गया। चारों ओर पुष्टि मंत्रोचार की गूँज गूँजने लगी** - " **जय श्री कृष्ण** " " **श्री कृष्ण शरणम् मम:** " । कहीं प्रकार के कीर्तन पद रचने लगे, कहीं प्रकार के भजन संगीत धून गाने लगे, कहीं प्रकार के सत्संग आयोजित करने लगे, कहीं प्रकार के मनोरथ संकल्प पूर्ण करने लगे, कहीं प्रकार के उत्सव प्रसंग रचने लगे और कहीं प्रकार के दर्शन सुशोभन लगे, उल्हास प्रकट ने लगे। जीव जीव आकर्षित होने लगे। श्रीवल्लभाचार्यजी से स्व आत्म जोड़ने स्व को धन्य करने लगे। **" ब्रह्म सम्बन्ध करणात् सर्वेषाम् देह जीवयो:।" " कृष्ण आश्रयम् इदम् स्तोत्रम् य: पठेत् कृष्ण सन्निधौ। तस्य आश्रय: भवेत् कृष्ण इति श्रीवल्लभ: ब्रवीत्।"** श्रेष्ठ श्रेष्ठ श्रेष्ठ - श्रीवल्लभ - श्रीवल्लभ - श्रीवल्लभ ! " मेरो तो आधार श्रीवल्लभ के चरणाविंद - पुष्टिजनों के तारणहार श्रीवल्लभ के मुखारविंद। " " दंडवत प्रणाम " **" Vibrant Pushti "**
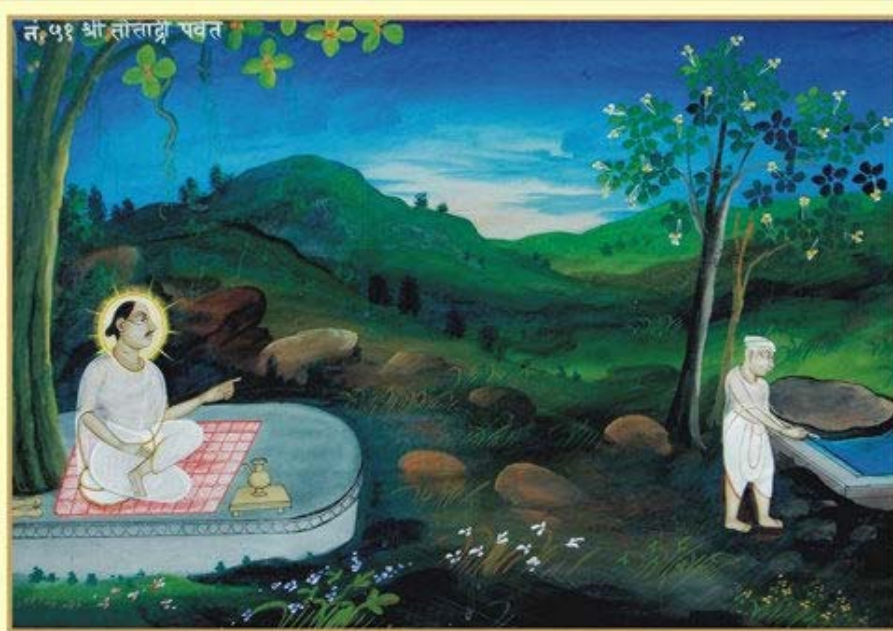
प्रथमपंचदशी बैठकजी - कहेते है - श्रीप्रभु जो भी करता है वह स्व प्रकट नही करता पर दूजे के सहारे से फल प्रतिपादन करता है। यह इतना श्रेष्ठ सिद्धांत है कर्म का - जो सदा न्यायिक और शुद्ध चक्र अविरत कार्यरत रहे। ऐसे हि श्रीवल्लभाचार्यजीने यही सिद्धांत को अपने हर अनुयायी में जागृत कर दिया - **जो अनुयायी परम भगवदीय, उनसे हुए हर सेवा कर्म से उनसे जुड़े हर भगवदीय योग्यता आधारित श्रीप्रभु की निकटता का पुष्टि स्पर्श, स्पंदन, सिद्धि, आनंद पाता रहता और अपना पुष्टिमार्ग सिद्धांत संस्कार जीवन का विनियोग करता रहता, जिससे उनकी गति, दिशा, श्रद्धा, विश्वास, तीव्रता और द्रढता का सिंचन की अनुभूति स्व अनुभवता रहता और अनेकों को जागृत करता रहता। जिससे न अहंकार, अभिमान, स्व कर्म निधि का गुमान, स्वार्थ का अवगुण का नाश होता है, और जीव शुद्ध, पवित्र और निष्ठावान सिंचित होता है। उन्हें न तो काल, दुराचार, धृष्टता का प्रभाव अपने में उद्भव होता है, जिससे सदा स्वस्थ, निरोगी, योगी, त्यागी और कर्मयोगी भोक्ता है।** यही तो पुष्टिमार्ग सिद्धांत संस्कार का उदेश्य और कर्मफलानिधान है। **बैठकजी के माध्यम से पुष्टि चरित्र की शिक्षण ऊर्जा - ज्योत ऐसी प्रकट भई जो गृहे गृहे सेवा - गृहे गृहे वैष्णव ! " भगवान फलरूपत्वान् न अत्र बाधक इष्यते। " " कालावशाद् एव अधिकारा निवृता न साधनै: कर्तु श्क्यंते । अवतीर्णों हि भगवान् सर्व मुक्ति अर्थम् इति प्रमेय बलेन एव फलिष्यति इति, स्व अधिकार अभावे अपि तत: फलम् भविष्यति इति अर्थ:। अत: अधिकारेण अनधिकारेण वा कृष्ण भजनम् कर्तव्यम् इति सिद्धम्। "** सरल सचोट सिद्धांत - जैसा किया ऐसा प्रोकता - जैसा पाया ऐसा भोक्ता **" Vibrant Pushti "**
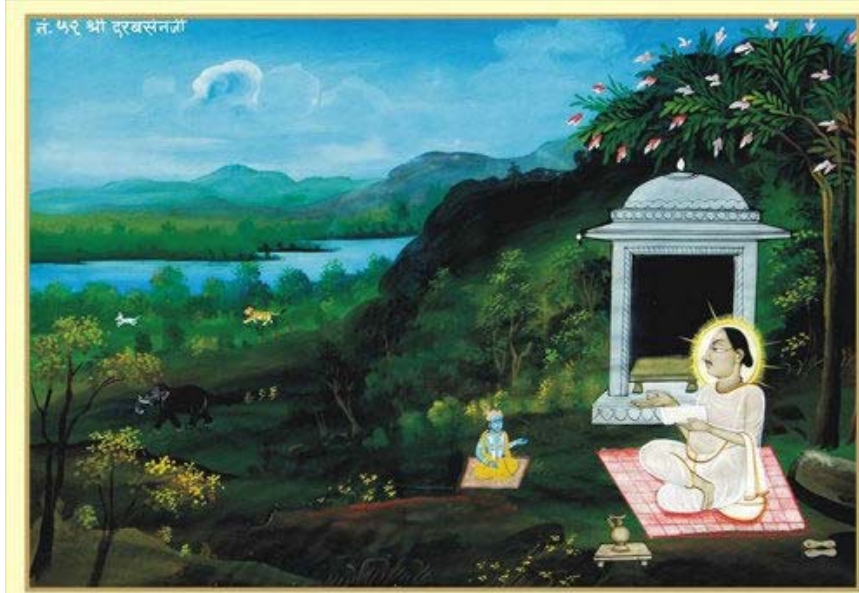
द्वितीयपंचदशी बैठकजी - सृष्टि पर कितने प्रकार के जीवों, मानव - दानव - देव - पशु (हिंसक - पालतु) - पंखी - पक्षी (भक्षक) - कीटक - जन्तु - जलचर - नभचर - वायुचर - भूमिचर - वनस्पति - भूत - प्रेत - पिशाच - द्रश्य - अद्रश्य आदि है। **हर जीव की विशिष्टता - हर जीव का जीवन, हर जीव की निधि, हर जीव का स्वभाव, प्रभाव और गुणधर्म। गहराई से अध्ययन करे तो कहीं पृथककरण का अभ्यास कर के जीव की विशिष्टता पहचान सकते है, यही विशिष्टता से जीव में परिवर्तन - आधि दैविक - आध्यात्मिक और भौतिक वैज्ञानिककरण, धर्मकरण, इच्छितकरण अर्थात वशीभूतकरण, शिक्षितकरण कर सकते है।** जो भक्त - संत - ऋषि मुनिओं - तपस्विओं - आचार्यो - योगिओं आमूल परिवर्तन कर सकते है। ऐसे परिवर्तनों से अचूक आनंद परमानंद प्रस्थापित कर ही सकते है। **सच - कैसे है हम और कैसा है ये जगत - परिवर्तन होते होते क्या से क्या हो गया और क्या से क्या हो जाएगा ? प्रेम - करुणा - पवित्रता - निखालसता - शुद्धता - विश्वनीयता - शिस्तता - परस्परता सर्वे में सिंचित कर योग्यता पाठवे तो श्रेष्ठता - परमोत्तमता जागृत हो और उनमें भी पुष्टिमार्ग सिद्धांत संस्कार परिवर्तन। ओहह - अहं ब्रह्मास्मि ! अदभूत अदभूत अदभूत ! अंश अंश में पुरुषोत्तम।** श्रीवल्लभाचार्यजी आपनु एकांत, आपनु चिंतन, आपनु अध्ययन, आपनु शिक्षण जीवों को पुष्टिजीव में रूपांतर करके स्व - स्वरूप ज्ञान प्रदान करता है। **" भगवत् कार्य: परमकाष्ठापन्न वस्तु कृति साध्य:। ताद्दश: अपि भगवद् रूप:। यथा पुरुषस्य कर्म करण आदौ सामर्थ्यम् तेन स्व सामर्थ्येन अन्य अनुपजीवनेन स्व आत्मप्रपंचं कृतवान् इति फलितम्। यथा घट आदिषु आमदशायाम् श्यामरुपेण आविर्भावे तथा व्यवहार:, पकवे रक्तत्व व्यवहार: तद् रुपेण आविर्भावात् तथा इति। "** श्रीवल्लभाचार्यजी आपकी पुरषोत्तमता जीवों के उद्धार का सामर्थ्य हो जाता है। **प्रणाम !** **" Vibrant Pushti "**
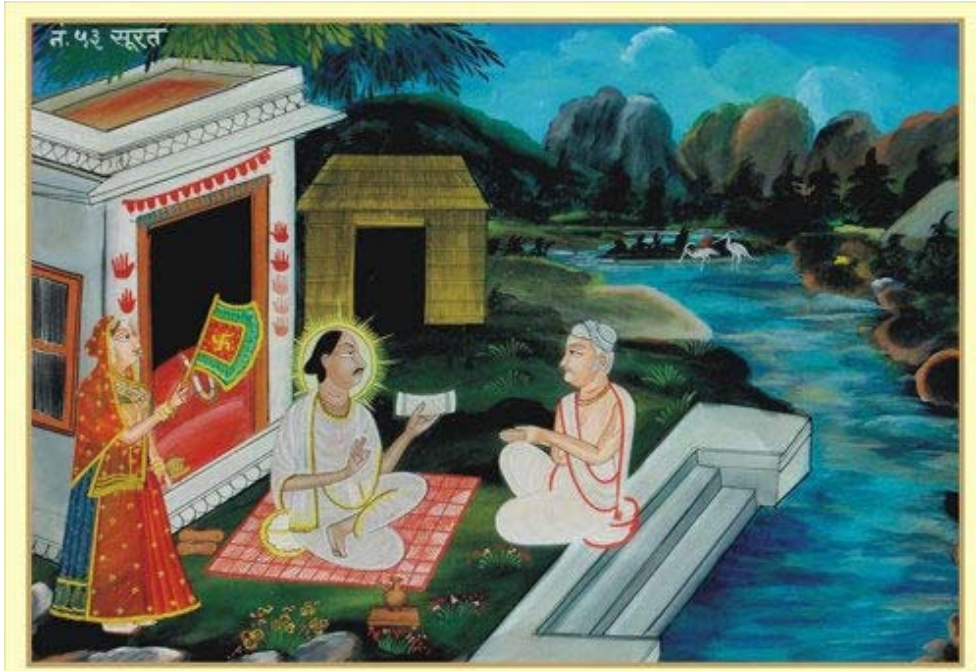
बैठक–53

श्री सूरत

सूर्य तनया श्री ताप्ती जी के किनारे अश्विनीकुमार आश्रम के पास सर्वलक्षण सम्पन्न श्रीमहाप्रभुजी की बैठक है। यहां आपश्री के श्रीमद् भागवत पारायण के समय श्री ताप्तीजी स्वंय उपस्थित रहकर सेवा करती थीं।

तृतीयपंचदशी बैठकजी - बैठ - बैठ - बैठकजी। बैठना - स्थिर बैठना - एकाग्रता से बैठना - शांत बैठना - सर्वे इंद्रियों को एक समन्वय में जोड़ कर बैठना। बिलकुल असाधारण क्रिया है, बिलकुल योगिक क्रिया है, बिलकुल आध्यात्मिक क्रिया है। जो व्यक्तित्व स्व को जान सकता है, समझ सकता है, पहचान सकता है। वो ही ऐसी स्थितिस्थापकता नियोजित कर सकता है, वो ही अपने ज्ञान, भाव, विज्ञान और प्रज्ञान का सर्वोत्तम पुरुषार्थ कर सकता है। **श्रीवल्लभाचार्यजी ने स्व को स्थितिप्रज्ञ शिक्षित कर दिया था, उनके हर विचार, हर क्रिया, हर द्रष्टि, हर उद्बोधन हर जीवों को योग्यता प्रदान करने के लिए सक्षम कर दिया था। जो जो स्थली पर वो बिराजते थे वो स्थली सदा मधुर हो जाती थी। वहां के हर प्रकार के जीवोंमें ऐसी श्रेष्ठता सिंचित होती थी - जिससे वो अपना मन, देह, द्रष्टि, क्रिया, स्वभाव और वर्तणुक में धैर्य, श्रद्धा, विश्वास, एकात्मता, पवित्रता, शुद्धता, प्रेम और करुणा प्रस्थापित हो जाती थी। अर्थात न क्रोध, न हिंसा, न कपट, न द्वैष, न द्वैत, न संदेह, न संशय, न दुष्टता, न घृणा, न आसक्ति, न अहंकार, न मोह ममता, न दोष, न विरोध, न अवरोध, न अंधश्रद्धा, न वैर, न दुष्टाचार, न दुराचार, न प्रवाह, न मर्यादा केवल एकता, पुष्टता, अद्वैतता, प्रेम और करुणा।** ऐसी स्थली उद्बोधित होती थी जहां सदा सत्संग, आत्मीयता, यज्ञ, उत्सव, सेवा, सरलता और आनंद। सर्वे अपने कार्य में श्रेष्ठ, उत्तम और सदाचार। **हमारी हिन्दू संस्कृति का मुख्य आधार यही शिष्टाचार से ही संस्कृत हुआ है। हिंदुस्थान की सारी रज, सारे जीव, सारे विचार, सारे संस्कार, सारे विध्या स्त्रोत्र, सारे पुरुषार्थ आयोजन आदि श्रेष्ठ मंत्र, तंत्र, यंत्र, शास्त्र ऐसे गुणातीतों से ही है। बैठकजी का महात्मय गोकुल, गोलोक धाम, गोवर्धन जैसा है। " Vibrant Pushti "**

बैठक–54

श्री भरूच

भृगु क्षेत्र में परम पवित्र श्रीनर्मदाजी के किनारे पर छोंकर वृक्ष के नीचे त्रिलोकीभूषण आचार्यश्री वल्लभ महाप्रभु बिराजित है। यहां आपश्री ने श्रीमद् भागवत सप्ताह किया है।

चतुर्थपंचदशी बैठकजी - कभी कभी ऐसी जिज्ञासा उठती है की जिससे विचार विमश अचंबित होता है। जिज्ञासा है - हिंदु संस्कृति आधारित हिंदुस्थान में भगवान के कहीं अवतार हुए - भगवान ने कहीं बार धर्म की संस्थापना की, जो यह संस्कृति की असाधारणता है। हाँ ! तो ऐसे बार बार अवतार क्यूँ? योग्यता और शास्त्रोक्त वेद अभ्यास - चिंतन - अध्ययन और स्व अनुभव से यह जिज्ञासा में ऐसी सत्यता और योग्यता समझे - **अवतार अर्थात स्व जागृतता - स्व योग्यता - स्व आध्यात्मिकता - स्व विनियोगता - स्व व्यवहारता - स्व निर्भरता - स्व श्रेष्ठता - स्व उत्तमता - स्व विध्यता - स्व पूर्णता - स्व तेजस्विता - स्व स्वस्थता - स्व अद्वैतता। जो काल, जो समय, जो संजोग, जो परिस्थिति में उठ कर जो अंधकार, मान्यता, अज्ञानता, अशुद्धता का मूल अंश ने अपने पुरुषार्थ से नष्ट करके सैद्धांतिक योग्यता और संस्कृति संस्कारों से धर्म संपादन से धर्म की संस्थापना प्रस्थापित हुई, वह मूल अंश को अवतार कहते है। जैसे भगवान वेद व्यास, नरसिंह, परशुराम, बुद्ध, राम, कृष्ण। हिंदु संस्कृति के सर्वे आचार्यो - आदि गुरु श्री शंकराचार्य, श्री रामानुजाचार्य, श्री माध्वाचार्य, श्री निम्बाकाचार्य और श्री वल्लभाचार्य - जिन्होने अवतार लीला आधारित - वेदोक्त सूत्रों आधारित हिंदु संस्कृति की नीव रख कर प्रमाणित कीया - सैद्धांतिक योग्यता - संस्कृति संस्कारों से ही जीवन उत्कृष्ट होता है।** आज भी मठ - मंदिर - हवेली - बैठकजी में सैद्धांतिक योग्यता और संस्कृति संस्कारों का शिक्षण - अध्ययन संस्कृत होते है। **" आनंद अनुभव:। स्वतंत्र भकतानाम् तु गोपिका आदि तुल्यानां सर्वै इंद्रियै: तथा अन्त:करणे: स्वरुपेण च आनंद अनुभव:। अत: भकतानां जीवन्मुक्त अपेक्षया, भगवद् कृपा सहित गृह आश्रम एव विशिष्यते। "**

" भक्तिमार्गेण भजनम् मूल भक्ति: एव इति पुरुषोत्तम भक्ति सिध्यर्थ प्राकट्य कथैव उक्ता सर्वत्र अवतारेषु। "

हे आचार्य! आप श्रेष्ठ हो, उत्तम हो, पुष्टिमार्ग सिद्धांत संस्कार संस्थापन के पुरुषार्थो से हमारे जैसे अज्ञानी जीवों में शिक्षण - संस्कार सिंचित से कृत कृत कर रहे हो, हम आपके कृतज्ञ है। **" Vibrant Pushti "**

बैठक–55

श्री मोरबी

महाराज मयूरध्वज की नगरी मोरबी में कुण्ड के उपर छोंकर वृक्ष के नीचे श्रीमदाचार्य चरण की बैठक है।अदेय दान दक्ष श्रीमहाप्रभुजी ने प्र0 भ0 श्रीबाला और बादा बन्धुओं को शरण में लिए है और श्रीमद् भागवत सप्ताह किया है।

पंचमपंचदशी बैठकजी - **हृदयस्थ, नयनस्थ, मनस्थ, आत्मस्थ, कर्णस्थ, कंठस्थ, हस्तस्थ, साँसस्थ, मस्तकस्थ, मगजस्थ, इंद्रियस्थ, कर्मस्थ, देहस्थ, तत्वस्थ, आंतरस्थ, बाह्यस्थ, पुरुषार्थस्थ, तनस्थ, धनस्थ, धर्मस्थ, जीवनस्थ, कालस्थ, रसस्थ, वाक्स्थ सदा पुष्टिमार्ग सिद्धांत संस्कार पुष्ट करे, यही ही हमारा संकल्प, ध्येय, दिशा, उदेश्य, हेतु, सिद्ध, पुरुषार्थ है।** श्रीवल्लभाचार्यजी एक एक बैठकजी से स्व को सिद्ध करते करते, खुद को संस्कृत करते करते जीवों के साथ जो अनुभव करते थे और कराते थे, यही लीला आधारित षोड्स ग्रंथ विरचितां श्रीवल्लभाचार्यजी का श्रेष्ठ प्रमाण है। एक एक रचना में सिद्धांत संस्कार से स्व से स्वरूप को जोड़ने, और जन्म - जीवन - ब्रहम - ब्रहमांड - जगत - जीव - ज्ञान - विज्ञान - भाव से सिद्ध कीया **" जीव स्व पुरुषार्थ से स्व सर्वस्थ को योग्य संस्कार से पुरुषोत्तम हो कर पूर्ण पुरुषोत्तम में एकात्म कर सकता है।"** तनुनवत्व से भौतिक देह को सूक्ष्म में रूपांतर कर के सूक्ष्म को परम अंशी में एकरूप कर सकता है। **" भक्तिमार्गे तु भगवान् स्वत: एव यदा भकतेषु सर्वम् संपादयति सर्वायत्वेन तदा भक्त: स्व अंगीकारम् सर्व आत्मना ज्ञात्वा स्तुति आदिषु स्व अधिकारम् जानाति तत: स्तौति। अथवा सर्वात्मना स्व अंगीकार ज्ञानेनआंतर आनंदे पूर्णे वहि: अपि सर्वेंद्रियेषु प्राकट्य समये वाचि स निर्गच्छन् स्तुतिरूप: भवति इति आनंदस्य एव अधिकार रूपत्वम्। अत एव पूर्वम् प्रभुवाक्यै: तस्मिन् सिद्धे जाते पश्चात् नीरूपिते इति अर्थ:।"** भौतिक, आध्यात्मिक और आत्मीय यह तीन प्रकार के जीवन में जीव को सिद्धांतोंब्ध क्रमांकित धोरण आधारित अपने को डग भरने है - अपनाना है। श्रीवल्लभाचार्यजी प्रस्थापित सर्वे पद्धति जीव को अनुकूलता, सरलता और समझते समझते स्वीकार करना है - अपनाना है। जिससे जीव अपने कर्म को समझ सके पहचान सके और अनुभव से निश्चित कर सके। श्रीवल्लभ ! श्रीवल्लभ! निराली रीत है आपकी जो पुष्टिमार्ग सिद्धांत संस्कार से हमारा जन्म और जीवन सफल हो जाय। **" दंडवत प्रणाम "** **" Vibrant Pushti "**
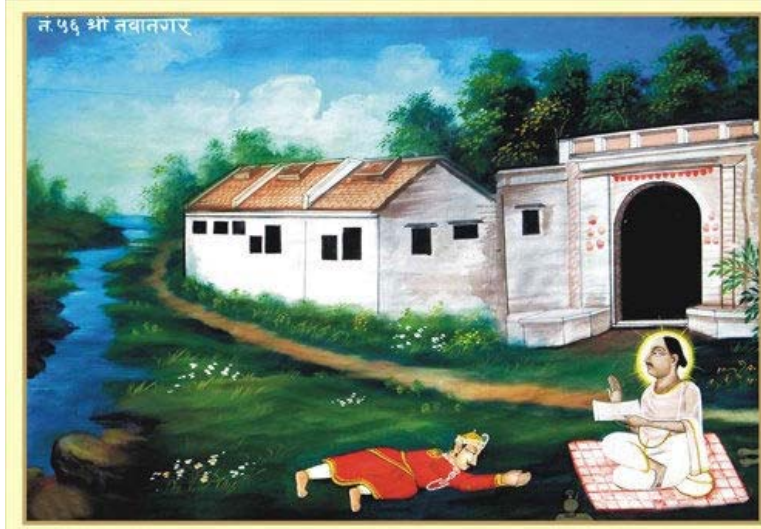
षष्टिपंचदशी बैठकजी - एक बार श्रीब्रह्माजी ब्रह्मांड की सैर करने निकले, विचरते विचरते उन्हें अति सुगंधित महक का अनुभव हुआ। उनके अंग अंग में मादकता, उतेजना और सुख की अनुभूति होने लगी, स्थिर हो कर वो महक में लीन होते गए और महक का मधुर अनुभव पाते गए। ब्रह्माजी सोचने लगे - मैंने तों ब्रह्मांड में ऐसी महक उत्पाई ही नही है, तों ये महक कैसी? तुरंत महक के मूल स्थान पर पहुँचने की गति निर्धारित करके, वो महक के मूल स्थान पर पहुँचे, चारों ओर द्रष्टि घुमाये तब उनकी नज़र पृथ्वी पर पहुँची। ओहह ! पृथ्वी से अलौकिक महक ! वो तुरंत वो स्थली पहुँचे, जो स्थली से महक उठती थी। अदभूत ! श्रेष्ठ ! ओहह ! सुंदर स्थली, सर्वे जीवों अपने में मस्त झुम रहे है और जीवन का आनंद लूट रहे है। वाह! ब्रह्माजी सोचने लगे मैंने तों कभी ऐसी स्थली और जीवों का निर्माण नही किया है फिर ये क्या है? अचंबित हो गए। तुरंत तपास करवाई तो पता चला यह कोई व्रजभूमि है और यहां कोई कृष्ण करके गोप बालक ने यह सृष्टि रची है। तुरंत वो स्थली पर पहुँचे, गोप बालक को देख कर स्तब्ध रह गए - अरे ! साक्षात श्री प्रभु ! तुरंत दंडवत प्रणाम कर के उनके सानिध्य में पहुँचे, श्रीप्रभु अपनी लीला में मग्न थे, ब्रह्माजी लीला की अनुभूति में अपने आपको भूल गए और आनंद परमानंद लूटने लगे। **श्रीवल्लभाचार्यजी जहां जहां पहुँचे वहां वहां ऐसी ही स्थली और अनुभूति का साक्षात्कार किया है। आज सर्वे स्थली बैठकजी में परिवर्तित है। बैठकजी की यही विशिष्टता वैष्णव अनुयायी प्राथमिकता से निभाते है, आज भी यही लीला और पुष्टिमार्ग सिद्धांत संस्कार प्रणाली शिक्षित है, शायद कोई भेद के कारण व्यवस्था में आमूल परिवर्तन होता है तो अवश्य पुष्टिमार्ग वैष्णव अनुयायीओं श्रीवल्लभाचार्यजी आज्ञा और प्रतिज्ञा नियमन प्रणाली से सुलझाते है, अगर कोई मालिकाना हक करते है तो अदालती नियमानुसार योग्य व्यवस्था प्रस्थापित करते है।**

" हरे: सेवया सर्वम् इति, भगवद् शास्त्रम् भगवत: मुखम् अग्नि:, स्वस्य वाक्इंद्रियम् अग्नि: चेद्, भगवन् मुखत्वम् आपध्यते। **" Vibrant Pushti "**

बैठक–57
श्री खम्भालिया

महाकारूणिक श्रीमहाप्रभुजी यहां कुण्ड के उपर छोंकर वृक्ष के नीचे बिराजित है। प0 भ0 श्रीकृष्णदासजी मेघन ने आपश्री के चरणोदक से प्रेत की मुक्ति की है। भगवदीयों की यह वाणी मननीय है :–

" चरणोदक लेत प्रेत ततक्षण तें मुक्त भये।
करूणामय नाथ सदा आनन्द निधि कंदे ।।"

सप्तमपंचदशी बैठकजी - श्रीवल्लभाचार्यजी की जगत परिक्रमा शायद हिंदुस्थान की ऐसी परिक्रमा थी, जिसमें जीव को सदा स्व को पहचान कर साक्षर होना। **साक्षर होने पुष्टिमार्ग सिद्धांत संस्कार को अपना कर जीव, देह, मन, चित्त, आत्मा, कर्म, पुरुषार्थ के बंधारण को पहचानते पहचानते व्यवहारिक, आध्यात्मिक और आत्मीय ज्ञान पा कर स्व को यही सब से जोड़ कर जीव - जीवन को सरल और सलामत करना। सरलता और सलामतता के लिए वैज्ञानिक, धार्मिक और ज्ञानवर्धक विद्या सिद्ध करना है।** जिससे **स्व जीव, स्व देह, स्व मन, स्व चित्त, स्व कर्म, स्व पुरुषार्थ, स्व आत्मा को समझ सकते है। जगत की हर संस्कृति का उदेश्य स्व को पहचान कर स्व सिद्ध किया वही श्रेष्ठ पुरुषोत्तम है। स्व जागृतता से स्व मूल तत्वों, स्व स्वभाव, स्व प्रकृति, स्व कृति, स्व सृष्टि, स्व ब्रह्म, स्व ब्रह्मांड, स्व अंश की पहचान होगी। यह स्व से ही जीवन आनंदमय में परिवर्तित होता है। जन्म से ही अनेक सांसारिक बंधनो, सामाजिक रीति रिवाजो, संप्रदाय मर्यादाओ, कौटुंबिक संबंधो से बंधे जीवन को स्वतंत्र करना है। यह स्वतंत्रता के लिए अनेकों प्रकार के परिवर्तन और नियमन को संचालित करना होता है, जो काल और संजोग की परिस्तिथी से उठते उठते स्व गति निर्धारित करनी होती है, यह गति शिक्षण, धर्म और योग्य व्यवहार के गुणधर्मो, सिद्धांत से ही संस्कृत होते है।** श्रीकृष्ण स्व ही एक द्रष्टांत है, जो श्रीवल्लभाचार्यजी ने स्व अपने जीवन में अपनाकर सिद्ध किया। जीव जीवन को योग्य करने ऐसे अनेकों सैद्धांतिक चारित्र्यों की आवश्यकता है। जिससे हममें निष्ठा, विश्वास और उत्साह जागे। श्रीआचार्यों ने जो जो प्रणाली प्रस्थापित रची है, यही सर्व श्रेष्ठ माध्यम है स्व को सिंचित करने के लिए। **" स्वतंत्र भकतानां तु गोपिकादि तुल्यानां सर्व इंद्रियै: तथा अन्त:करणे: स्वरुपेण च आनंद अनुभव:। " श्रीवल्लभ ! वाह ! आपको साष्टांग दंडवत प्रणाम। " Vibrant Pushti "**
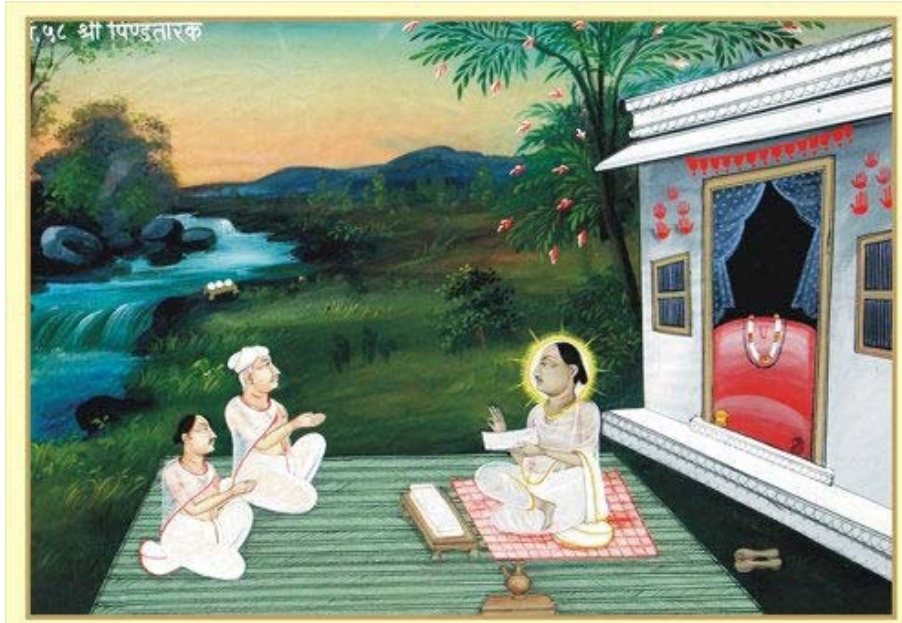
अष्टपंचदशी बैठकजी - जीव के अनेक प्रकार, जीव के स्वभाव गत अनेक प्रकार, जीव के मन से अनेक प्रकार, जीव के कर्म से अनेक प्रकार, जीव के धर्म से अनेक प्रकार, जीव के जाती से अनेक प्रकार, जीव के व्यवहार से अनेक प्रकार, जीव की गति से अनेक प्रकार, जीव की मति से अनेक प्रकार, जीव की वृति से अनेक प्रकार, जीव के संस्कार से अनेक प्रकार, जीव के बंधनो से अनेक प्रकार, जीव के गुणधर्मो से अनेक प्रकार, जीव के तत्वों से अनेक प्रकार, जीव के पुरुषार्थ से अनेक प्रकार, जीव की नीति से अनेक प्रकार, जीव की कृति से अनेक प्रकार, जीव की शुद्धि से अनेक प्रकार, जीव की पवित्रता से अनेक प्रकार, जीव के ज्ञान से अनेक प्रकार, जीव के भाव से अनेक प्रकार, जीव के साक्षर से अनेक प्रकार, जीव की सिद्धि से अनेक प्रकार, जीव की वृद्धि से अनेक प्रकार, जीव के अज्ञान से अनेक प्रकार, जीव के रंग से अनेक प्रकार, जीव के प्रदेश से अनेक प्रकार, जीव के रहेठाण से अनेक प्रकार, जीव के अन्न से अनेक प्रकार, जीव के सानिध्य से अनेक प्रकार, जीव के अहंकार से अनेक प्रकार। **अनेकों प्रकार के जीव - अनेकों प्रकार के जीवन - अनेकों प्रकार की मान्यता - अनेकों प्रकार के धर्म - अनेकों प्रकार के कर्म, आदि से योग्यता, उत्तमता, श्रेष्ठता प्रामाणिक सिद्धांतों से ही नियमन और संचालित होती है। यह बंधारण ऐसे चारित्र्यों ही साक्षरता आधारित - सिद्धि आधारित अनेकों शैक्षणिक और धार्मिक संगठनों का निर्माण करके जीवों को योग्य मार्गदर्शन शिक्षित करते है।** पुष्टिमार्ग सिद्धांत संस्कार श्रेष्ठ और पुरुषोत्तम आचार्य श्रीवल्लभ के साक्षर अध्ययन, संस्कार से निर्मित है। स्व चरित्र से ही वेदोक्त और शास्त्रोक्त सिद्धि जागृत करके अनेकों जीवों के उद्धार के लिए " पुष्टिमार्ग सिद्धांत संस्कार " को " श्रीकृष्ण चारित्र्य " अनुसंधान सिद्धि से प्रमाणित किया। जो स्व चरित्र से स्व का पार्दुभाव सिद्ध करके वैष्णव सनातन धर्म की स्थापना रची। जिसमें जीव सदा ज्ञानी - भक्तिमय और स्व चिंतन से स्व को पहचान कर स्व को स्व से एकात्म करे। **" Vibrant Pushti "**

नवमपंचदशी बैठकजी - मनुष्य जन्म जीवन के लिए क्या समझना श्रेष्ठ है? मनुष्य जन्म जीवन के लिए क्या करना उचित है? यह प्रश्न और जिज्ञासा अनेकों में उठती है - अनेकों सोचते है - अनेकों समझते - अपनाते अपना जन्म जीवन जागृत करते है, संवरते है, परिवर्तित करते है, सुधारते है, शिक्षित करते है, सुयोजित करते है, योग्य करते है। **श्रीवल्लभाचार्यजी का पार्दुभाव यही उदेश्य ही हुआ और उन्होने अपने जीवन की हर क्षण का उपयोग जीवों को परम भगवदीय विद्यते अर्थात विद्या - शिक्षा - ज्ञान - विज्ञान - सिद्धांत - संस्कार की विध्वता का ध्यास, न्यास, अभ्यास, व्यवहार और विश्वास संपादन करके, जन्म जीवन का महात्मय जीवंत करके जीव को अधिकारीक श्रेष्ठ और परमोत्तम सिद्ध करते है। जीवन का मूल रहस्य को विद्युत करके, जीवन के पुरुषार्थ को याज्ञिक करके, जीवन को माधुर्य आनंद में एकात्म करते है।** **यही ही श्रीवल्लभाचार्यजी के संस्थान, शास्त्र, ग्रंथ, मंत्र और पद्धति का मूल निधि है। स्व और स्व स्वरूप की सही पहचान कराके जीव को पुष्टि जीव में रूपांतर करते है। पुष्टि सेवा पद्धति, पुष्टिमार्ग सिद्धांत संस्कार, निधि स्वरूप हवेली दर्शन और मनोरथ, संगीत और राग आधारित कीर्तन, भजन और पद की रचनाएँ, काल ऋतु समन्वय त्योहार, तिथि काल संवर्धन प्रकृति सृष्टि आधारित धन धान्य उत्सव, आदि धर्म संस्कारों से जीवन आनंदमय, शुद्धमय, पवित्रमय और संस्कारमय हो जाता है। जीवन जीने की पद्धति में सदा निखालसता, कुशलता, सरलता शिक्षित होती है। बैठकजी और हवेली पुष्टिमार्ग सिद्धांत संस्कार का मुख्य केन्द्र है।** **" कलिकाल स्वभावत: सर्वोत्कृष्ट: स्व अल्प साधेनन अपि महाफलप्रद:। "** **" आनदों ब्रह्मवादे आकार समपर्क:। अत एव पुरुषेषु अपि सर्वान्तर आनंदोमयो निरुपति:। "** **" ये सात्विका देव्यां सम्पदि जाता विध्युपजीविन: सर्वदा तेषां भुक्ति भविष्यति ण अन्येषटमिति ज्ञापितम्। "** **" अतो भकतानां जीवन्मुत्त्म्यपेक्षया भगवद कृपासहित गृहाश्रम् एव विशिष्यते। "** **" तस्मात् स्वतंत्र भक्तयर्थम् सायुज्यार्थम् च सर्वथा भजनं मंत्रम्। "**

" Vibrant Pushti "
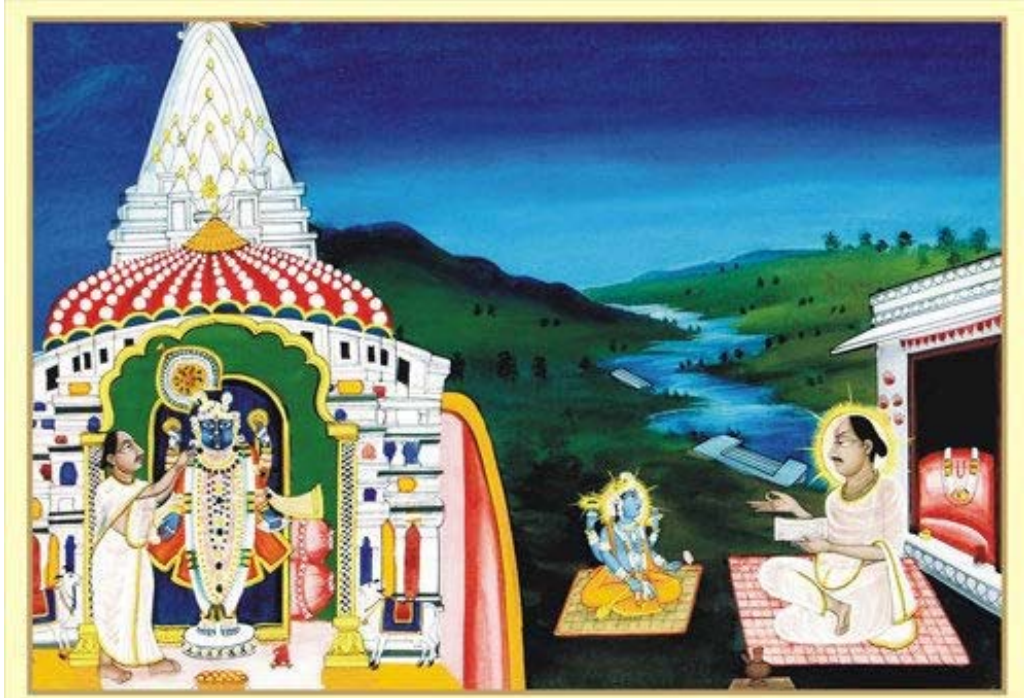
षष्ठदशी बैठकजी - द्वार - हमारे जगत का द्वार - नैन, हमारे विचार का द्वार - मन, हमारे जन्म का द्वार - तन, हमारे निर्वाह का द्वार - धन, हमारे जीवन का द्वार - संस्कार, हमारे धर्म का द्वार - आचार्य, हमारे ज्ञान का द्वार - विद्या, हमारे भाव का द्वार - वात्सल्य, हमारे आनंद का द्वार - पुरुषार्थ, हमारे स्व का द्वार - आत्मा। **" द्रष्टिस्तु या भगवन्तम् पश्यति, दिव्या ज्ञान द्रष्टिश्च्या तथा न अन्यथा तदर्शनम् इति अर्थ:। "** **" ज्ञान साध्यत्वम् धर्मयोग एव इति गतम्। " " संस्कार पक्षे वेद: मूलम्। " " क्रियारुपे धर्मे प्रविष्टो, धर्मी यज्ञ एक:। तथा ज्ञानरुपे धर्मे प्रविष्टो धर्मी ब्रह्म द्वितीय:। ज्ञान क्रिया उभययुत: कृष्ण: तृतीय इति त्रयो भेदा:। "** **" भक्तिमार्गे तु आरंभत एव परमानंद:। ज्ञानमार्गे तु अंतत: इति विशेष:। " " नित्या भगवद् रूपा भगवद् धर्मा:। "** श्रीवल्लभाचार्यजी की द्रष्टि सूक्ष्म और दीर्घ थी। जैसे जैसे उनकी उम्र बढ़ती गयी वैसे वैसे उन्होने परा अपरा विद्या समझ कर, **जीवन को योग्य दिशा सूचक करने जीव - जगत - सृष्टि - प्रकृति - संसार के अधिनियमों और विज्ञान के अधिनियमों को अपने जीवन से प्रमाणभूत कर लिया था, जिससे उनकी हर प्रस्तावना, संस्थापना, प्रतिपादनता, व्यवहारिकता, प्रस्थापितता सदा पुष्टि सिद्धांत संस्कारमय रचाई।** जिससे सामान्य - साधारण जीव को यह संस्थापना स्वीकार करने और अपनाने में अति सुगम रही। जीवों के स्वीकारने से अनुकूलता, संस्कारीथा, सरलता और आनंद का अनुभव करने लगे थे। न कोई बंधन, न कोई मर्यादा, न कोई ज़ोर, न कोई अनुमति - जो स्व की रचना है, उन्हे ही उत्कृष्ट करना - अर्थात **पंच महाभूत तत्वों को समानता से धरना। वाह! अदभूत श्रीवल्लभचर्याजी ! आपको सर्वज्ञ से कोटी कोटी नमन - वंदन - प्रणाम !** **" Vibrant Pushti "**

प्रथमषष्ठदशी बैठकजी - " व्रज " स्थली से हर हिंदुस्थानी की पहचान है, हर कोई व्रज रज को स्पर्श करने लालायित है, जो जो ने व्रज रज का स्पर्श किया है, वह बार बार व्रज रज छूने का संकल्प करते है, निश्चय करते है, वचन देते है, याचना करते है, प्रार्थना करते है, विनंती करते है।
श्रीवल्लभाचार्यजी ने पुष्टिमार्ग सिद्धांत संस्कार की स्थापना व्रज मंडल से क्यूँ की? १. पुष्टिमार्ग सिद्धांत संस्कार के परम इष्ट परब्रह्म पुरषोत्तम - श्री श्रीनाथजी का प्राकट्य - गोवर्धन पर्वत से है अर्थात श्री श्रीनाथजी का गोत्र - गोवर्धन है, जो प्राथमिक तपस्वी है। २. पुष्टिमार्ग का प्रथम सिद्धांत संस्कार - ब्रह्मसंबंध की आज्ञा - गोकुल धाम। ३. श्री श्रीनाथजी और श्रीवल्लभाचार्यजी का प्रथम मिलन - गिरिराजजी - मधुराष्टकम् की रचना। ४. श्री यमुना महाराणीजी का आदि आध्यात्मिक स्वरूप का प्रथम दर्शन - गोविंद घाट - श्री यमुनाष्टकम् की रचना। ५. प्रथम श्रीमद् भागवत सत्संग - प्रथम बैठकजी - गोकुल। ६. पुष्टिमार्ग सैद्धांतिक लीला - व्रज स्थली। व्रज व्रज और व्रज। श्रीवल्लभाचार्यजी ने व्रज रज का स्पर्श पाया - उन्होने अपनी सारी तन मात्राओं को व्रज कर दिया, सारे जीवन को व्रज कर दिया, सारी इंद्रियों को व्रज कर दिया, देह को व्रज कर के नूतन तनु कर दिया, स्वभाव को करुणा सभर व्रज कर दिया, सर्वे क्रिया को दासत्व कर दिया, अपने स्पंदन और ओरा को व्रज कर दिया। हर डग में व्रज - हर ठहर को व्रज, केवल तत सुख - तत सुख - तत सुख जो व्रज का गुणधर्म है। बैठकजी की हर स्थली उनके लिए व्रज है और स्थली के सर्वे जीव तत्वों व्रज वासी है। श्री भागवत पारायण यज्ञ में व्रज की लीला, व्रज के रंग, व्रज के उत्सव, व्रज के मनोरथ और व्रज के गुणधर्म लूटाते थे। व्रज रज से अपने आपको ऐसा कृतार्थ कर दिया था की स्व चरित्र व्रज से एकाकार हो गया था। षोडश ग्रंथ, सुबोधिनिजी, तत्वार्थ दीप निबंध आदि अनेक रचनाएँ की प्रेरणा व्रज स्थली से पायी और अनेकों टिकाएँ - सिद्धांत सत्संग निधि की प्रेरणा जगत परिक्रमा की बैठकजी से पायी। बैठकजी श्रीवल्लभाचार्यजी का व्रज साधन रहा जो पुष्टिमार्ग सिद्धांत संस्कार की ज्ञान गंगा यमुना को अविरत गति मिल गई। **" भक्ते: अपि स्व आश्रम धर्मसहित ज्ञान सहिताया एव तिरोधान नाशकत्वम् उक्तम् भवति। एषा भक्ति: माहात्म्यज्ञानपूर्वक परम स्नेहरुपा। तथा भृता सती भगवत् परिचर्यायुक्ता भवेत् स्वत: पुरुषार्थ सेवा चेत् सा भक्ति: स्वतंत्र इति उच्यते।"** श्री महाप्रभु ! अदभूत ! आपको हृदयस्थ प्रणाम। **" Vibrant Pushti "**

द्वितीयषष्ठदशी बैठकजी - श्री आचार्यों के धाम अनंत है, पर कहीं कहीं इनकी सीमा बांधी जाती है। श्री आचार्यों ने जो जो मठ, बैठकजी, गुरुकुल, आश्रम और धाम की रचना पद्धति रची ऐसी रचना उन्होने कहीं पार्दुभाव से सिंचित करके पृथ्वीलोक में ऐसे स्थली के माध्यम से अनेकों जीवों को श्रेष्ठ मार्गदर्शन और योग्यता सभर बनाए। ऐसे ऐसे पार्दुभाव से ही श्री आचार्यों अपनी सिद्धि अनुसार अनेकों धामों में प्रवेश पाते है, अनेकों धामों की रचना करते है जिससे जीवों को ऐसी लोकवत् लीला से समझ आए उन्हें कैसे जन्म - जीवन और कर्म से जीना है। यह जो धामों सामर्थ्य से भरे और पवित्र संस्कार से सिंचे होते है। जो जो जीव यह स्थली पर पहुँचता है या आकार्षाता है वो ही क्षण से वह श्रेष्ठ स्पंदनों से सिंचित होता जाता है, जैसे वो धाम या स्थली के वातावरण, रज, महक, बूंद और तेज को स्पर्शता है, उनमें पवित्र संस्कार नियोजित होने लगते है। यह स्थली पर सदा धर्म संस्थापन के आचार्य की लोकवत् लीला स्थली में रूपांतर हो जाती है और वह जीव उनमें डूबता जाता है - संवरता जाता है - शिक्षित होता जाता है - योग्य संस्कार सिद्ध होता जाता है। अति गहराई से अध्ययन करे तो अवश्य ऐसा अनुभव होता है की ऐसी स्थली में यही आचार्यों साक्षात बिराजते है और उनके तपोबल - ज्ञान - भक्ति से हम श्रेष्ठता की अनुभूति करते है और हम अपने आपको ऐसी स्थली के माध्यम से कृतार्थ कर रहे है। श्रीवल्लभाचार्यजी ने कहीं स्थली पर एक दिन - तीन दिन - सात दिन - पूर्ण माह - चातुर माह - षष्ठ माह और बारह माह ठहरे थे - हर स्थली पर एक ही सामर्थ्यता - एक ही समानता - एक ही पुष्टता - एक ही स्पर्शता - एक ही संपांदनता। बैठकजी जहां जहां है - उनकी मर्यादा - शिस्त - शुद्धता - पवित्रता निभानी ही हमारी संस्कारिता है। जिससे हम स्थली का अधिकार पा सके। पुष्टिमार्ग सिद्धांत संस्कार की पुष्ट भूमि हमारी श्रेष्ठता - सत्यता - सर्वोत्तमता - ज्ञान - भक्ति - सेवा और पुष्टियता का प्रमाण है। **" प्रमाणम् भगवद् वाक्यम् वाकयेन प्रवृत्त: साधनम् असाध्यन्नपि भगवता कृतार्थी क्रियते। प्रमेय परिज्ञानम् च फल अनुभवरूपं साधनं च फलाद् अपि अधिकम् फलम् च ज्ञानकर्मादि साध्येम्य: अपि अधिकम् इति।"** हे श्रीवल्लभाचार्य आपनो पार्दुभाव सदा हम पर आशीर्वाद बना रहे। **" Vibrant**

बैठक–63
श्रीनारायण सरोवर

श्री मार्कण्डेय आश्रम के समीप छोंकर वृक्ष के नीचे आचार्यश्री बिराजित है। नारायण सरोवर में से श्रीआदिनारायण भगवान चतुर्भुज स्वरूप प्रकटे हैं। यहां श्रीमहाप्रभुजी ने श्रीमद् भागवत सप्ताह किया है और प्र० भ० दामोदरदास हरसानी को यह बतलाया है कि " सरस्वती का उल्लंघन हम कभी नहीं करेंगे क्यूंकि सरस्वती भगवतवाणी का प्रवाह रूप है। "

तृतीयषष्ठदशी बैठकजी - हे श्री वल्लभ! अदभूत - बैठकजी से आपने जीवन की सर्व श्रेष्ठता प्रदान कर दि। अष्टसखा यह श्रीवल्लभाचार्यजी का अलौकिक और पुष्टिमार्ग सिद्धांत संस्कार की अमूल्य देन है। यह अष्टसखा का पार्दुभाव बैठकजी से हुआ है। अष्टसखा का जीवन चरित्र - अष्टसखा का ज्ञान - अष्टसखा का भाव - अष्टसखा की भक्ति - अष्टसखा का समर्पण - अष्टसखा की तनमयता, तत्परता, परस्परता, एकाग्रता, माधुर्यता - शिष्टता विशुद्ध और पवित्र थी, वह सदा समर्पित थे, उनकी हर रचना ही श्रीप्रभु की एकात्मता का परिचय देता है। श्रीवल्लभाचार्यजीने यह जीव तत्वों में पुष्टि सिद्धांत संस्कार के बीज तत्वों को पहचाना और उनका उछेर अर्थात संस्कार सिंचन ऐसी ही बैठकजी से ऐसे किया की उन्हें जीवन में दिव्य द्रष्टि और माधुर्यता प्राप्त हुई। वो सदा श्रीप्रभु की लीला का अनुभव एवं दर्शन एवं माधुर्य रस का पान करने लगे थे। **बैठकजी का महात्मय ऐसे पार्दुभाव से होता है। बैठकजी श्रीप्रभु की लीला की निकुंज - बैठकजी पुष्टिमार्गीय सिद्धांत संस्कार की नीव - बैठकजी जीवों के पुष्टि परिवर्तन की पाठशाला - बैठकजी परम भगवदीय की आश्रय स्थली - बैठकजी पुष्टिमार्ग सिद्धांत सेवा निधि का केन्द्र। हे आचार्य! आपके साक्षात्कार की परिस्कृति बैठकजी है, सर्व प्रकारके जीवों का रक्षण, शिक्षण और लक्षण यही स्थली से दिक्षित है। " सर्व तिरोभाव: तु भगवद् साक्षात्कारे। तदा न स्वप्न दर्शनम् । जागरणे अपि न देहादौ आत्मबुद्धि: किंतु सुषुप्तिवत् सर्वदा ब्रह्म आनंद अनुभव:। सर्वेषाम् एव भगवद् गुणानुवादे परम आनंद अनुभवात्। साधनम् च सुलभम् सर्वत्र सतां भगवद् गुण कीर्तनस्य नित्यत्वात्। समीचीना भगवद् चरित्र: उक्ति:, गूढ़ा गुप्ता। तेनैव हि भगवत् प्रकाश: स च दुर्लभ इति न सर्वमुक्ति:। भगवत् सेवया द्वयम् अपि प्राप्यत इति।"** हे जीवों के उद्धारक श्रीवल्लभाचार्यजी! आपको शत् शत् नमन! **" Vibrant Pushti "**

चतुर्थषष्ठदशी बैठकजी - जो जीव परम भगवदीय में परिवर्तन हो - यही बैठकजी की महत्ता, अर्थात बैठकजी स्व सदा पुष्टिमार्ग सिद्धांत संस्कार की पूर्णता से तैयार किया जाता है। मूल स्थानक जहां श्रीवल्लभाचार्यजी बिराजे - बिराजमान विग्रह को पुष्टिमार्ग प्रणाली से सेवा, उत्सव, मनोरथ और कहीं अनुष्ठान के लिए मुख्याजी और भीतरियाजीओ से संपन्न सेवक सेविकाए की उपस्थिती, गौ शाला, सामग्री भंडार गृह, अपरस, टीबारी, कमाल चॉक जैसे खंड, झारीजी और सामग्री पकाने के लिए अलग अलग भोजन खंड, फूल - पान - फल जैसी वनस्पतिओं के लिए खुल्ले चॉक और बाग, स्नान और शौच नित्य क्रिया के लिए स्नानागृह, स्त्री और पुरुष के लिए अलग अलग वस्त्र खंड, पुस्तकालय, शिक्षा खंड और सभा मंडप, सामग्री भंडार, उत्सव और मनोरथ के साधन रखने का खंड, श्रीविग्रह के वस्त्र और वस्त्र सेवा आदि के लिए दरजीगृह, वैष्णवों के लिए प्रसाद आदि के लिए भोजन कक्ष, वैष्णवों के लिए ठहरने की व्यवस्था - ऐसे कितने प्रकार के गृह और खंड से तैयार किया जाता है। यह सब तैयारी के लिए बैठकजी के मुख्याजी और वैष्णवों के साथ सहकार से ही योग्य व्यवस्था होती है। अगर यह व्यवस्था में थोडी भी तक्लीफ या अव्यवस्था पुष्टिमार्ग सिद्धांत संस्कार पद्धति को बहोत ही कठिनाई भुगतनी पडती है। **श्रीवल्लभाचार्यजी का मूल उदेश्य को सदा जागृत रखने और करने के लिए सदा उत्सुक और सेवकीय वैष्णवों का संगठन आवश्यक है, जिससे पुष्टिमार्गीय सेवा निधि व्यवस्था नीति नियमों आधारित शिस्तबद्ध रीति से संगठित होती रहे और आयोजित करती रहे।** **" नित्यं प्रीतियुक्त भक्ते हरि: प्रीत: सन् न उद्वेगम् प्रयच्छति इति अर्थ:। " " सेवायां वा कथायां वा यस्य आसक्ति: द्रढ़ा भवेत्। " " भावना साधनं यत्र फलम् च अपि तथा भवेत्। " " अत: केवल तीर्थ आदि आश्रयम् परित्यज्य यथा भगवति स्नेहो भवति तथा यत्नम् कुर्याद् इति आह। "** श्रीवल्लभ! श्रीवल्लभ! अति समझ - कौशल - दीर्घन्ता - अति धैर्य। **" वैष्णव सदा सेवक - सदा दास "** **" Vibrant Pushti "**

बैठक–65
श्री प्रभास क्षेत्र

प्रभु श्रीकृष्णचन्द्र के देहोत्सर्ग क्षेत्र में छोंकर वृक्ष तले गुफा में श्रीमहाप्रभुजी बिराजित हैं। आचार्यश्री ने यहां श्रीमद् भागवत सप्ताह पारायण किया है और प्रभास क्षेत्र की पंच तीर्थी परिक्रमा की है।

पंचमषष्ठदशी बैठकजी - बैठकजी व्यवस्था - श्रीवल्लभाचार्यजी जो जो स्थली पर पहुँचे वो स्थली कोई गाँव के जमीनदार या ग्राम पंचायत की होगी। वहां के रहवासी से सम्मलित हो कर ही यह बैठकजी का निर्माण और सेवा निधि की व्यवस्था करनी होती है, जो एक परिणामिक दस्तावेजो आधारित विश्वास व्यक्तिओं की व्यवस्थापक संगठन समिति संचालित करते है।

प्राथमिक

- व्यवस्थापक संगठन समिति

- व्यवस्थापक संगठन समिति का उदेश्य

- व्यवस्थापक संगठन समिति का बंधारण

- कायदाकीय परिणामिक दस्तावेजो

- व्यवस्थापक संगठन समिति कार्य पद्धति का दस्तावेज।

हर कर्मचारी व्यवसायिक जवाबदारी का दस्तावेज मुजब ही कार्यरत होगा, व्यवस्थापक संगठन समिति भी व्यवसायिक धोरण से संस्था संचालित करेगा। हर व्यवहार हिसाब के नीति नियमों आधारित रहेगा, ऐसी संस्था अर्थोपार्जन का उदेश्य बिना काम करेगी। पुष्टिमार्ग सिद्धांत संस्कार आधीन सेवा, अर्चना, उत्सव, मनोरथ और त्यौहार कार्यरत होगा, समिति में योग्य व्यक्ति ही सम्मलित होगे। **एक एक सभ्य निष्ठावान, विश्वासपात्र, सेवक अर्थात दासत्व वृत्ति, कर्मयोगी, मृदु भासित, योग्य निर्णयी और निखालस होगा। कोई कुल और सामाजिक नेतृत्व व्यक्तित्व का चयन नही होगा।** बैठकजी का प्राधान्य के लिए स्व न्योछावर व्यक्ति का संचालन पुष्टिमार्ग सिद्धांत संस्कार केन्द्र को श्रीवल्लभाचार्याजी का पथ सिद्धांत से ही यथार्थ लक्ष साधेगा। **"श्रीवल्लभाचार्यजी आशीर्वाद प्रदान करना" " दंडवत प्रणाम " " Vibrant Pushti "**

षष्ठषष्ठदशी बैठकजी - बैठकजी का एक प्रधान कार्य है - दीक्षा। यह दीक्षा को समझना अति आवश्यक है। पुष्टिमार्ग सिद्धांत संस्कार विधि प्रणाली दीक्षा अर्थात **" ब्रहमसंबंध "** । यह ब्रहमसंबंध को समझना अति आवश्यक है। **" ब्रहम सम्बन्ध करणात् सर्वेषाम् देह जीवयो: "।** श्रीवल्लभाचार्यजी ने कहा - ब्रहम सम्बन्ध करणात् अर्थात ब्रहम सम्बन्ध करना है। ब्रहम सम्बन्ध क्यूँ करना और कैसे करना? जो जीवने जन्म लिया, जो जीवने कोई भी जाती में लिया उन्हें ब्रहम सम्बन्ध करना ही है - क्यूंकी वो जीव मूल परमात्मा अर्थात मूल अंशी अर्थात मूल परब्रहम से अलग हुआ, दूर हुआ। यह अलग होना एक स्वाभाविक प्रक्रिया है, जिसमें हिंदु संस्कृति आधारित श्रीप्रभु अर्थात परमात्मा या अंशी की एक लीला है, जो दूर होना। यह अलग या दूर को निस्काष अर्थात **स्व को प्रज्वल्लित कर के परम परमात्मा - परब्रहम - अंशी में एक होना - विलीन होना - एकात्म होना। यह एक होना, विलीन होना, एकात्म होने के लिए ज्ञानब्ध - वैदिक - आध्यात्मिक - आत्मीय एक विधि से प्रारम्भ होता है - जो श्रीवल्लभाचार्यजी प्रणीत - " ब्रहम सम्बन्ध " यह ब्रहम सम्बन्ध से जीव को दीक्षित करना है, समझाना है, शिक्षित करना है - जीव तुझे ब्रहम सम्बन्ध का प्राथमिक डग भरके ब्रहम से जुडने के लिए नियमबद्ध आचरण करना है, जिससे स्व में जागृतता खिलेगी और स्व आत्मा तेजोमय होगा। ब्रहम सम्बन्ध ही एक ऐसी निधि है जो लौकिक से अलौकिक की ओर डग भरने का प्राथमिक आचरण है, जो ढ्रडता से निभाना है। ब्रहम सम्बन्ध करने का संकल्प, निधि में जुड़ना, निधि के बाद निभाते निभाते स्व को समझना यही ही जीव की उच्चता प्रमाणित होती है।** यह कोई सामान्य या साधारण निधि नहीं है, जो कोई भी व्यक्ति से जुड़ कर कर सकते है। श्रीआचार्य की भूमिका श्रेष्ठ और आवश्यक है, जो आचार्य सर्वोत्तम, सर्वोच्च और निर्मोही हो, तभी ब्रहम सम्बन्ध की असर और योग्यता है। **आचार्य की योग्यता ही मुख्यत्व है, कोई कुल, कोई सामाजिक श्रेष्ठ व्यक्ति आदि निरपेक्षित है।** आचार्य और शिष्य का सम्बन्ध जो आध्यात्मिक एवं आत्मीय हो। जो ऊर्जा आचार्य में विकसित है, जिससे अनेकों जन्मों की अशुद्धता, अपवित्रता, दुष्टता, पाप, दुराचार आदि का नष्ट हो और शुद्ध, पवित्र, सदाचार संस्कार का उदय हो। ब्रहम सम्बन्ध की सार्थकता यही है। ब्रहम सम्बन्ध की सत्यता यही है। बैठकजी और हवेली की महत्ता यही ही है। **" Vibrant Pushti "**

सप्तमषष्ठदशी बैठकजी - प्रयाग अर्थात ज्ञान + भक्ति और प्रेम का त्रिवेणी संगम। ज्ञान अर्थात सरस्वती - भक्ति अर्थात गंगा और प्रेम अर्थात यमुना। जल - भौतिक स्वरूप, जल का गुणधर्म है सदा स्मृति में रहना - याद रखना - सिद्धि और विद्याभासी। सृष्टि में जल ही एक श्रेष्ठ तत्व है जो सर्व तत्वों से निपुण। श्रीवल्लभाचार्यजी की हर बैठकजी कोई भी प्रकार के जल उपस्थित स्थली पर ही है क्यूंकी जल अति तीव्र स्मरणीय तत्व है जो सदीयों से उनमें रहती योग्यता और चेतनवंती कर्मनिष्ठा संग्रीह रहती है, जो कोई श्रेष्ठ आत्मीय जैविक व्यक्ति की उपस्थिती यह जल उन्हें अनेक प्रकार की सिद्धि और स्मरणीय शक्ति सिंचित करती है। श्रीवल्लभाचार्यजी की विशिष्टता की पारदर्शकता ऐसी स्थलीओ पर सिद्ध होती है। इसीलिए **उनका स्थली चयन शिक्षणलक्षी था, जहां जल, वनस्पति, शुद्ध धरती, तेजोमय वातावरण और मधुर वायु की गति सारे स्थली को पवित्र और शांती प्रदान करते है। श्रीवल्लभाचार्यजी का स्पर्श स्थली को नव चेतन करके जीवों को योग्य पुष्टिमार्ग सिद्धांत संस्कार से नवपल्लित करते थे। न मोह, न माया, न क्रोध, न द्वेष, न द्वैत, न कपट, न धृष्टता, न घृणा, न वैर, न भिन्नता, न अज्ञानता, न अंधकार, न दुष्टता, न विखवाद, न वादविवाद, न अहंकार, न विकार, न निंदा, न अविद्या, न दोष केवल सरलता, समानता, विद्वता और प्रेम। अदभूत! श्री आचार्य अदभूत! " आपका मार्गदर्शन सदा श्रेष्ठतम्। "**
" भक्तिमार्गीय संन्यास: तु साक्षात् पुष्टि पुष्टि श्रुतिरूपाणां रासमण्डल मण्डनानाम् स्वयम् एव उक्तम्। "
" निवेदिभि: समर्प्यैव सर्वम् कुर्याद् इति स्थिति:। " " एवम् सदा स्म कर्तव्यम् स्वयम् एव करिष्यति। प्रभु: सर्व समर्थ: हि तत: निश्र्चन्ततां व्रजेत्। " " आचार्यश्री वल्लभ आपकी कुशलता सारे जीवों की उद्धारणीय है।
" Vibrant Pushti "
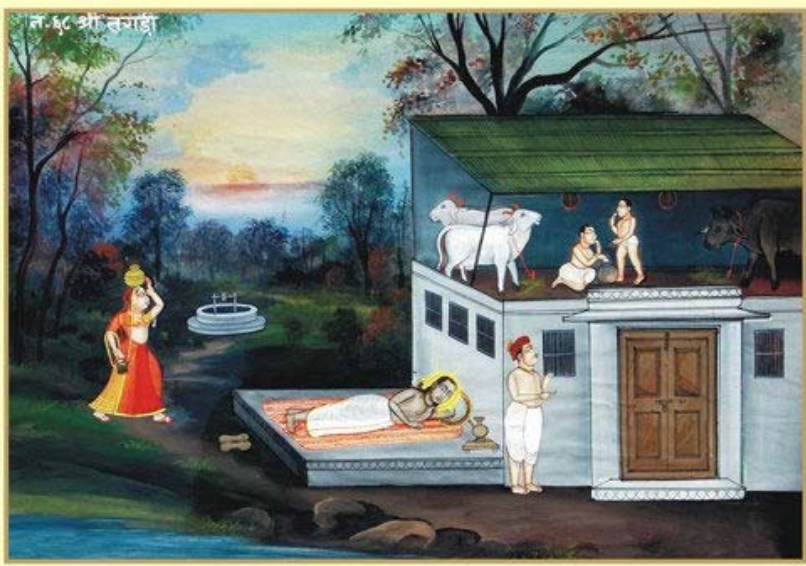
बैठक–68
श्री तगड़ी

कृपासिन्धु श्रीमहाप्रभुजी यहां एक भाग्यवान ब्राह्मण के घर के आगे एक चबूतरे पर बिराजे हैं। गृहस्वामी को अपने पुत्र द्वय में प्रभु श्रीकृष्ण और बलदाऊ का स्नेह प्रकट होने पर आपश्री ने अलौकिक लीला के दर्शन करवाये हैं। तगड़ी में श्रीमहाप्रभुजी ने श्रीमद् भागवत सप्ताह किया है।

अष्टषष्ठदशी बैठकजी - बैठकजी का विचार श्रीवल्लभाचार्यजी को कैसे और क्यूँ हुआ? अति गहराई से चिंतन करे तो अवश्य संकेत और समझ पाएंगे। मेरे ख्याल से बैठकजी का विचार श्रीवल्लभ को गृहस्थाश्रम से पाया होगा। **गृहस्थ जो सदा गृह को संस्कार युक्त, नीति सभर, संस्कृति नियामक और निस्वार्थ संवर्धन सिंचना होता है, जो गृह और गृहपति ऐसा ख्याल रख कर अपना जीवन घड़ता है वह अवश्य सुखी, आनंदी, पवित्र और विश्वसनीय संसार जीता है।** जगत परिक्रमा में श्रीवल्लभाचार्यजी ने निहाला संसारी व्यक्तिओं की जीवन पद्धति। **सरलता से जीते थे, निष्कपटता से रहते थे, साथ सहकार से जीवन व्यतीत करते थे पर उन्हें धर्म आचरण का ज्ञान, जो उन्हें दिशा और स्व पहचान की जागृतता शिक्षित कर स्व को और स्व के साथ जीते हर तत्वों को सलामत और समांतर करना आवश्यक है। जगत के कोई भी जीव सलामत और समांतर रहे तों केवल आनंद ही पाता है - प्रेम रस ही पीता है।** सूक्ष्मता से सोचे - सतयुग क्या है? सतयुग में सर्वे जीवों सलामत और समांतर थे इसलिए सर्वे जीवों शिक्षित, संस्कारी और आनंदी थे। आज जो भी हम शिक्षण, संस्कार, नीति नियमों समझने की कोशिश करते है, वह वही काल अर्थात सतयुग में ही रचे गए थे - आज हम सर्वे यही ही उदेश्य से जीवन और जीना अपनाले तों अचूक सतयुग ही प्रकट हो जाएगा। बैठकजी का संकल्प, सिद्ध, शिक्षण, संस्कार यही ही यथार्थता से ही स्वीकार किया है। गृह गृह बैठकजी जैसा धर्म संस्थापन हो जाये तो गृह गृह यशोदानंद - गृह गृह गोकुलानंद - गृह गृह परमानंद। बैठकजी का महात्मय ही जीवों का उद्धारण। जीव अपने स्वभाव, अपने विचार वर्तन, अपनी क्रिया से जब योग्यता पाठवे तो ही जीव - स्वभाव विजयो भवेत्, धर्म से आचरण करे तो ही जीव - श्रेष्ठ विचारशील और अपनी क्रिया में निष्कपटता दाखवे तो सदा सलामत - सदा समांतर। न कोई उच्च - नीच, अमीर - गरीब, ज्ञानी - अज्ञानी, धर्मी - अधर्मी, श्रेष्ठ - दुष्ट, अद्वैत - द्वैत। श्री आचार्य प्रणाम ! **" Vibrant Pushti "**
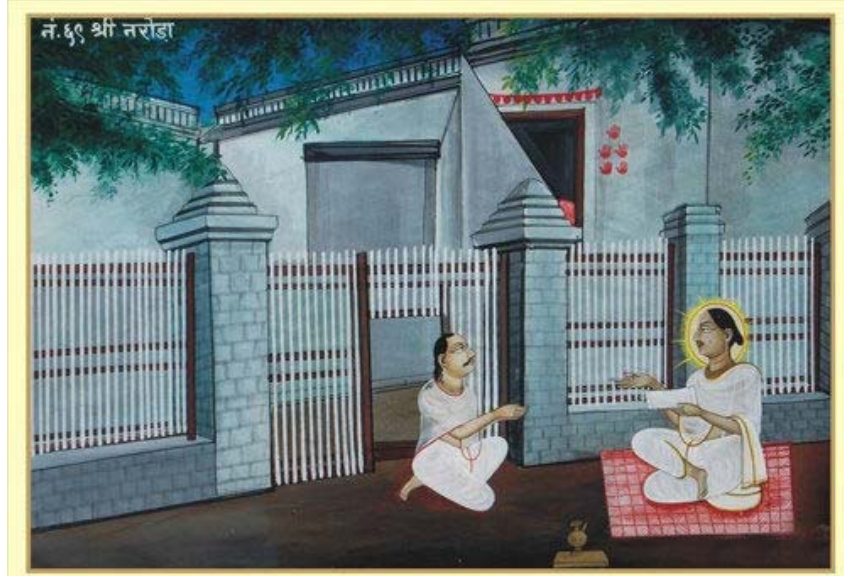
बैठक–69
श्री नरोड़ा

परम भगवतोत्तम श्रीगोपालदासजी के घर में श्रीमहाप्रभुजी बिराजित है। यहां श्रीमहाप्रभुजी ने श्रीमद् भागवत किया है और श्रीगोपालदासजी को स्वरूपानन्द का साक्षात अनुभव कराया है।

नवमषष्ठदशी बैठकजी - बैठकजी पर कहीं परिवर्तन, चमत्कार, अंधश्रद्धा भरेल मान्यता, भूत - प्रेत आदि भ्रमथी सामाजिक विडंबना दूर करना, किसिका दु:ख निवारना तो किसिका सुख संवारना ऐसी रूढ़िचुस्तता में पुष्टिमार्ग सिद्धांत संस्कार जागृत करना असाधारणता थी। श्रीवल्लभाचार्यजीने कठिन परिश्रम करके सैद्धांतिक जागृतता जगायी। वैदिक सूत्रो, स्व रचित मंत्रो और निधिओं से अज्ञान को भगाकर ज्ञान की गंगा बहायी। कितने प्रकार के मनुष्य - कितने प्रकार के स्वभाव - कितने प्रकार की मान्यता - कितने प्रकार के अर्थ - कितने प्रकार की समझ। ऐसे समय और जन जन से निपटना अति दुर्लभ था। **बैठकजी श्रीवलभाचार्यजी ने ऐसा साधन रचा की न कोई मान्यता - न कोई अंधश्रद्धा - न कोई चमत्कार - न कोई भेद, हर जीव अपने आपको पहचानने के लिए ऐसी स्थली उपयोगी और सरल हो गई। जीवों मे ज्ञान और आनंद की ऊर्मिओं का श्रेष्ठ माध्यम हो गया। कहीं कुटुंब, कहीं व्यक्तिओं, कहीं समूह बार बार बैठकजी को दंडवत प्रणाम करने अवश्य निश्चय करते है। बैठकजी पर मनोरथ, उत्सव, धार्मिक आयोजन, सत्संग, प्रवचन और भगवद् कथा का रसपान करते है। बैठकजी का सन्मान, सुंदरता, शुद्धता आदि व्यवस्था का अचूक ख्याल करते है तो उसका महात्म्य दैविक है। बैठकजी कोई व्यापारिक या व्यवसायिक संस्थान नही है, यह तो आध्यात्मिक, आत्मीय धर्म संस्थान है, जिसका बंधारण संस्कृति, संस्कार और पुरुषार्थ से रचा है - जीव का संकल्प, जीव का ध्येय, जीव का उदेश्य केवल ऐसी स्थली पर ही सिद्ध होता है।**

" भगवद् व्यतिरिक्ता: सर्व एव काल पर्यन्तम् सगुणा:। " " तै स्वभावत एव शुद्धि: संपाध्यत इति भोजने तृप्तिवत् न कामनाम् अपेक्षते। " " संस्कार पक्षे वेद: मूलम्, पृथक पक्षे आचार इति। " " भक्ति शब्दस्य प्रत्यय अर्थ: प्रेम। धातु अर्थ: सेवा। " भक्ति मार्गे तु आरंभत एव परमानंद:। ज्ञानमार्गे तु अंतत: इति विशेष:। " श्रीवल्लभाचार्यजी का दीर्घ जतन पुष्टिमार्ग संस्कार पथ को विश्राम के साथ धर्म अनुष्ठान भी होता है। **" Vibrant Pushti "**

बैठक–70
श्री गोधरा

षड़शास्त्र पारंगत प० भ० श्रीराणाव्यास के घर में श्रीमहाप्रभुजी विराजित है। यहां आपश्री ने " वेणुगीत " की सुबोधिनी कही है। काशी की विद्वत्सभा में पराजित होने पर व्यासजी जब गंगा में आत्महत्या करने जा रहे थे तब आचार्यश्री ने उन्हें ज्ञान देकर " चतुःश्लोकी " ग्रंथ पढ़ा कर पुनः विजयश्री दिलाई थी।

सप्तदशी बैठकजी - जो व्यक्तित्व स्व को वैष्णवता में परिवर्तन करते करते भगवदीय की कक्षा पर पहुंचता है, वह भगवदीय अपने नैन, मन, तन, धन और जीवन को थान करके द्रढ़ किया होता है की न मैं डग सकता हूं, न मैं चल हो सकता हूं, न मैं तुट सकता हूं, न मैं अस्थिर रह सकता हूं। अचल - अडग - अतुट और स्थिर ही मैं हूं। यही व्यक्तित्व बैठकजी पर बैठ सकता है। श्रीवल्लभाचार्यजी ने अपना चरित्र ऐसे गूँथा है की स्व स्थितिप्रज्ञ ही रहे। जो आत्मीय जीव स्थितिप्रज्ञ है उन्हें ही समझ है - जीवों के प्रकार और जीवों की पहचान, कौन आधिभौतिक जीव है - कौन आधिदैविक जीव है और कौन आध्यात्मिक जीव है? सत्व - रजस और तामस ऐसे स्वभाव के जीव है। **श्रीवल्लभाचार्यजी सत्व प्रकार के जीव थे - यह सत्व गुण के जो है - वह सदा निरपेक्षित, नि:संशय, नि:संदेह और निडर जीव है। जो सदा सत्य सिद्धांत संस्कार के लिए ही स्व को न्योछावर करेंगे।** बैठकजी की स्थली ही ऐसी है - **सर्वत्र न्योछावर - प्रकृति तु वैष्णव: - सृष्टि तु वैष्णव: - जगत तु वैष्णव:। श्रीवल्लभाचार्यजी की आंतर और बाह्य द्रष्टि ही पुष्टि श्रेष्ठ है - जीत देखूँ तीत वैष्णव।** बैठकजी की यही ही है सार्थकता - जो श्रीवल्लभाचार्यजीने बैठकजी के माध्यम से दीक्षित किया। **" प्रमाणम् भगवद् वाक्यम् वाक्येन प्रवृत: साधनम् असाधयन्नपि भगवता कृतार्थी क्रियते। प्रमेय परिज्ञानम् च फल अनुभवरूपं साधनं च फलाद् अपि अधिकम् फलम् च ज्ञानकर्मादि साध्येभ्य: अपि अधिकम् इति। अत एव अस्मिन् मार्गे पातभयम् न अस्ति, प्रमाण प्रवृतिम् आरभ्य भगवत: रक्षकत्वात्। तत्र स्व वाक्य अनुगतान् कथम् न मोचयेत्। "** " श्रीआचार्य! श्रेष्ठ। **" Vibrant Pushti "**
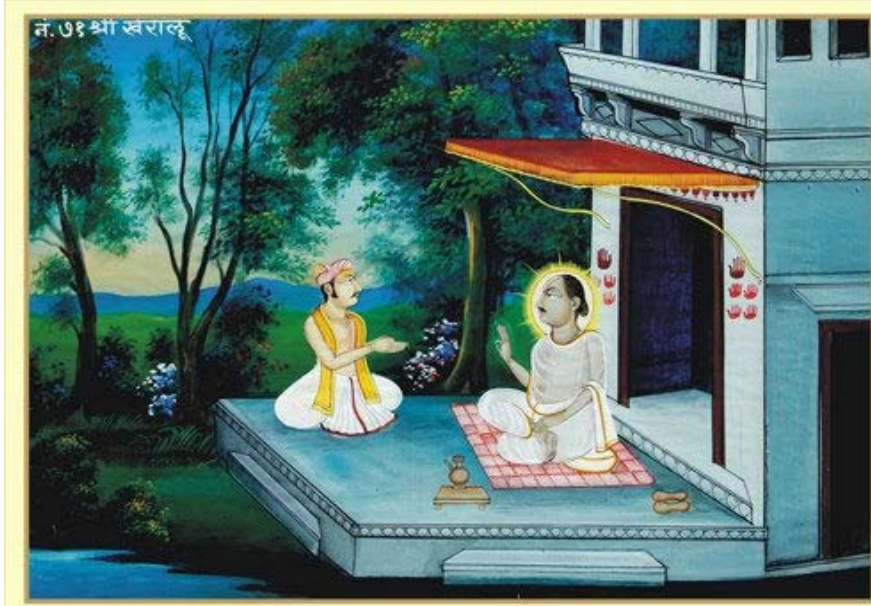
प्रथमसप्तदशी बैठकजी - रहस्य है बैठकजी का

प्रथम - श्रीवल्लभाचार्यजी की बैठक कभी भी कोई श्रीप्रभु हवेली या मंदिर के गर्भ गृहमें नही है।

द्वितीय - श्रीवल्लभाचार्यजी ने कभी श्रीप्रभु हवेली या मंदिर की सामग्री स्व निर्वाह के लिए नही ग्रहण किया है।

तृतीय - श्रीवल्लभाचार्यजी ने बैठकजी के लिए जो जो स्थली अपनायी है, वह हर स्थली भगवदीय ही थी।

चतुर्थ - श्रीवल्लभाचार्यजी की बैठक स्थली श्रीयमुनाजी का भाव - श्रीगिरिराजजी का भाव - श्रीअष्टसखा का भाव - श्रीवैष्णव भाव आधारित ही चयन करते थे।

पंचम - श्रीवल्लभाचार्यजी की बैठक स्थली कैसी भी विकट विस्तारमें हो, उन्हें तो केवल जीवों का उद्धारण हेतु ही सत्संग करना था। उन्हें जीव के प्रकारो से कोई आसक्ति नही थी, चाहे वो जलचर हो, नभचर हो - वायुचर हो या धरतीचर हो। उन्हें स्व ज्ञान तेज अनुसार विचरते गए और बैठकजी का माध्यम प्रदाप्त करते गए।

हे श्रेष्ठ जगद्गुरू आचार्य आपको नमन हो!

" अत: तीर्थे सेवा एव कर्तव्या । तत्र अपि तीर्थे देवता बुद्धि: तदा एव सेवा भवति। "

" भगवता प्रोक्तम् भागवतम् । न हि अन्य: भगवद् लीलाम् जानाति इति अभिप्रायेण आह। "

" सर्व तिरोभाव: तु भगवद् साक्षात्कारे। तदा न स्वप्न दर्शनम् । जागरणे अपि न देहादौ आत्मबुद्धि: किंतु सुषुप्तिवत् सर्वदा ब्रह्म आनंद अनुभव:। सर्वेषाम् एव भगवद् गुणानुवादे परम आनंद अनुभवात्। साधनम् च सुलभम् सतां भगवद् गुण कीर्तनस्य नित्यत्वात्। समीचीना भगवद् चरित्र: उक्ति:, गूढ़ा गुप्ता। तेनैव हि भगवद् प्रकाश: स च दुर्लभ इति न सर्वमुक्ति:। भगवत् सेवया द्व्यम् अपि प्राप्यत इति। पश्चात् भगवत् प्रसादे तद् उक्त प्रकारेण स्वेच्छया अपि सेवा भवति इति अर्थ:। " श्रीवल्लभाचार्यजी आपकी जय हो! आपकी कृपा हो! **" Vibrant Pushti "**

द्वितीयसप्तदशी बैठकजी - श्रीवल्लभाचार्यजीने बैठकजी से श्रीमद् भागवत पारायण का ही ज्ञान गंगा यमुना बहायी क्यूँ? **मनुष्य जीव का बंधारण ६४ अंगो से बना है। यह ६४ अंग को सदा योग्य और श्रेष्ठ रखने के लिए मनुष्य जीव को सदा तत्पर रहना है। मनुष्य जीव २६००० करोड न्यूरॉन्स से जुड़े है, यही न्यूरॉन्स को उत्तम करेंगे तो ही पुरुषोत्तम होंगे।** श्रीवल्लभाचार्यजी ने डग डग भरकर स्थली स्थली बैठकर स्व चरित्र से यही सर्वे अंग और न्यूरॉन्स को श्रेष्ठ, योग्य और कर्मयोगी किया है, तब ही उन्होने **बैठकजी, गृहसेवा, हवेली दर्शन, कीर्तन, मनोरथ, परिक्रमा, ब्रह्म सम्बन्ध, सिद्धांत मुकतावली, षोडश रचनाएँ, स्मरण मंत्र आदि की रचना करके जो पुष्टिमार्ग सिद्धांत संस्कार को प्रस्थापित किया,** जो सदा हम श्रीप्रभुमय हो, सदा संस्कार कर्मी हो, सदा योग्य व्यवहारिक हो, सदा शरणागत हो, सदा दास हो, सदा श्रीप्रभु लीलामय हो, सदा एकात्म हो। **बैठकजी की स्थली एक ऐसा माध्यम है, जो सदा पुष्टिमार्ग सिद्धांत संस्कार निधि का आदान प्रदान हो, जीव स्वतंत्रता से स्व को शिक्षित और दीक्षित कर सकता है।** बैठक के मुख्याजी का कर्तव्य है - जीव को सदा जागृत करके सदा पुष्टिमय करना - जिससे श्रीयमुनाजी अपनी कृपा से पुष्टिमय जीव को श्रीप्रभु के सानिध्य में पहुंचाए, जिससे पुष्टिमय जीव श्रीप्रभु की लीला का रस स्वादन करके, जन्म जीवन आनंदमय करता है। **श्रीमद् भागवत पारायण की गंगा यमुना बहाने का तात्पर्य यही है, जीव सदा श्रीप्रभु की लीला में डूबा हुआ रहे और अपना जीवन निर्वाह शुद्ध, पवित्र और विश्वसनीय व्यवहार से करता जाये। जिससे न नकारात्मक्ता - न अहंकार - न माया - न ममता - न दोष - न रोग - न अविद्या आदि उन्हें स्पर्श करे। जीव सदा स्व की पहचान करता करता आत्मविभोर हो जाये। " नित्यं प्रीतियुक्त भक्ते हरि: प्रीत: सन् न उद्वेगम् प्रयच्छति इति अर्थ:। " " दंडवत प्रणाम आचार्यश्री ! " " Vibrant Pushti "**
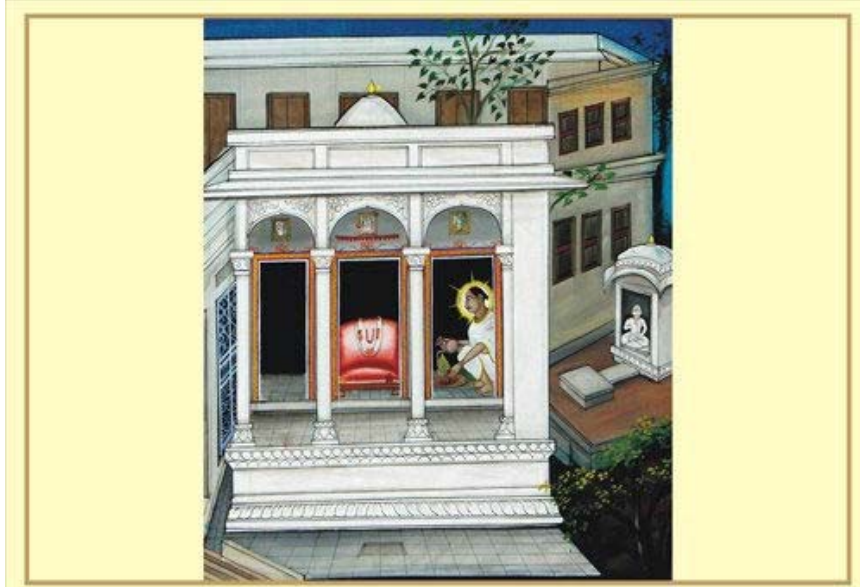
तृतीयसप्तदशी बैठकजी - बैठकजी अर्थात धाम। धाम का अर्थ है जहां शुद्धता - पवित्रता - सेवा - सत्संग और पुष्टि शिक्षण संस्कार ही हो। बैठकजी श्रेष्ठ धाम है। धाम में अविरत आनंद लूटाते है और लूटाता है। यहां जल, प्रसाद, कपडे और ठहरने के लिए सदाव्रत है। सदा शांति, माधुर्य और संस्कार ही पाते है। जो जीव सदा श्रीप्रभु स्मरण और सत्संग में लीन होता है उनके लिए यह स्थली है। यहां सदा स्व चेतना जागृत करने के लिए ही उपस्थिती रहती है, सेवा, पुरुषार्थ और समर्पण के लिए यह उत्तम स्थली है। यह स्थली सदा शुद्ध और पवित्र रखने का कर्तव्य हर जीव का है। जो संगठन समिति है, इसे अस्वच्छ, अपवित्र, धृष्टता आदरे तो उन्हें कहीं प्रकार के दोष और अपराध लगते है। सरल सी समझ है, जो श्रीप्रभु का धाम - प्रेमधाम को अघटित क्रियाओं से दूषित करें वह जीव की दुर्गति निश्चित है। **बैठकजी से न कभी कोई अपेक्षा, कोई स्वार्थवृत्ति, कोई दुष्ट प्रभाव, कोई अनैतिकता भरा व्यवहार, कोई भेंट या सामग्री का स्व उपयोग या उपभोग अपराध है। यह स्थली से कोई अर्थोपार्जन की व्यवस्था या क्रिया वर्जित है। इसमें न कोई आज्ञा या आशीर्वाद स्वीकार्य है।**

" वस्तुतः भगवत् प्रसादः प्रार्थनीयः। यतः संसारे दुर्लभम् एतत्। तेन एव अर्थात् भजनम् प्रार्थितम् भवति। "

" भगवद् प्रियत्वम् एव साध्यम् न अन्यत्। तेन एव सर्व सिद्धिः इति भावः। "

" भक्तिमार्गे तु भगवान स्वतः एव यदा भक्तेषु सर्वम् संपादयति स्वीयत्वेन तदा भक्तः स्व अंगीकारम् सर्व आत्मना ज्ञात्वा स्तुति आदिषु स्व अधिकारम् जानाति ततः स्तौति। अथवा सर्वात्म्ना स्व अंगीकार ज्ञानेनआंतर आनंदे पूर्णे वहिः अपि सर्वेंद्रियेषु प्राकट्य समये वाचि स निर्गच्छन् स्तुतिरूपः भवति इति आनंदस्य एव अधिकार रूपत्वम्। अत एव पूर्वम् प्रभुवाक्यैः तस्मिन् सिद्धे जाते प्रश्चात् स्तुतिः भक्तिमार्गे मतेति पश्चात् निरुपिते इति अर्थः। " " श्रीवल्लभ! श्रीवल्लभ श्रीवल्लभ " " Vibrant Pushti "
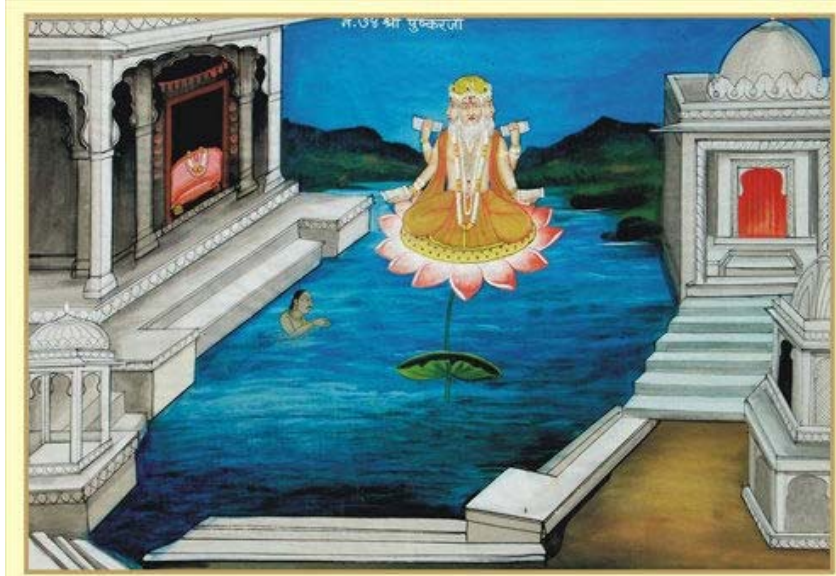
चतुर्थसप्तदशी बैठकजी - बैठकजी पर आज भी अविरत श्रीमद् भागवत का सत्संग की गंगा यमुना बहती है, आज भी यहां कोई कोई भगवदीय को श्रीवल्लभाचार्यजी के सूर सुनाई देते ही। आज भी यहां नित्य लीला के दर्शन कोई कोई भगवदीय को होता है। यह कोई चमत्कारी या साधारणता से केवल कहने की बात नहीं है, कोई मान्यता आधारित श्रद्धा या अंधश्रद्धा की रीत नहीं है, पर साक्षात्कार है। **जो जो व्यक्ति सौराष्ट्र की बैठकजी के परिक्रमा करते है उन्होने अवश्य श्रीगुंसाईजी की एक बैठक - बरड़िया गाँव। यहां जो भी परम भगवदीय माताजी रहते थे उन्हें श्रीप्रभु की सेवा में श्रीगुंसाईजी साक्षात मदद करने पहुँचते थे, उनकी नित्य जीवनी क्रममें कोई तकलीफ हो तो श्रीगुंसाईजी मदद करते थे। अर्थात यह परम भगवदीय के सेवा चक्षु खुल गए थे - जैसे अष्टसखा परम भगवदीय श्री सूरदासजी के दोनों दिव्य चक्षु से अविरत श्रीवल्लभाचार्यजी और श्रीश्रीनाथजी के दर्शन लीला की अनुभूति करते रहते थे। कोई भी व्यक्ति जो स्व तन मात्राओं को अपनी भक्ति स्वरूप से खोल दिए होते है, उन्हें अवश्य ऐसी लीला की अनुभूति होती है - यह कोई चमत्कार नहीं पर साक्षात्कार है, जो जीव ने स्व समर्पण से सिद्ध किए होते है। ऐसे कितने द्रष्टांत है हमारी भक्ति सृष्टि में - मीराबाई - एकनाथ - तुकाराम - नरसिंह महेता आदि कहीं ऐसे परम भगवदीय थे, जिन्हें कहीं भी कैसे भी श्रीप्रभु का साक्षात्कार होता था। उनकी चिनमय शक्ति खुल गयी थी।**

" यदि भगवान् महतीम् कृपाम् कुर्यात् तदा तदैव भक्तिम् अपि दत्वा स्वयम् प्रकटीभूय परम मुक्तिम् अपि दध्यात् परम् तु एवं रुपैव यत: कृपा अत: तथैव आसेत्यर्थ:। " अर्थात श्रीवल्लभाचार्यजी की कोई भी बैठकजी पर श्रीआचार्य साक्षात बिराज कर आज भी परम भगवदीय जीव का उद्धार करते है, यह ज्ञान आज के कहीं प्रकार के बन बैठे कुलाधि पति को अवश्य समझ में आए। **हे श्रीवल्लभ! आज की अंधी नगरी में आपको बैच कर सोदा करने वाले कुल कुल के लोगों को सदबुद्धि प्रदान करके सदा हम पर आपकी कृपा बरसे ! नहीं तो पुष्टिमार्ग सिद्धांत संस्कार का मार्ग व्यापार न हो जाय और कहीं परम भगवदीय भटकते ही रहे। " जय श्री कृष्ण " " Vibrant Pushti "**
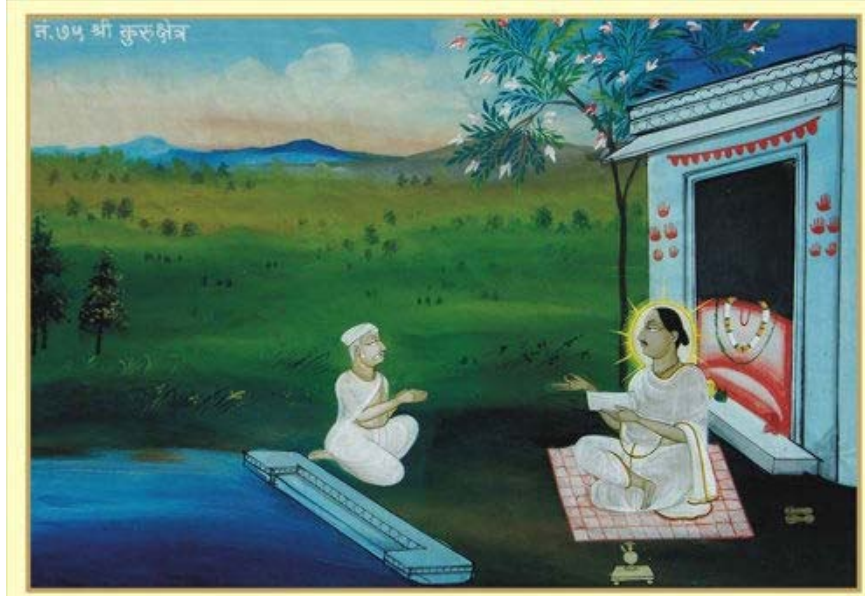
पंचमसप्तदशी बैठकजी - श्रीवल्लभाचार्यजी ने अपना पूरा सातत्य बैठकजी की सानिध्य में लूटा दिया। सच हम इतने भाग्यशाली है की हमें ऐसी श्रेष्ठता का आशीर्वाद मिला और स्व को उत्कृष्ट करने का सैद्धांतिक मार्गदर्शन मिला। बैठकजी के सानिध्य में पहुँचने के लिए जब भी संकल्प करते है, तबसे अपने अंग में, मन में पुष्टि सेवा की लहर उठती है। जैसे जैसे उनके नजदीक जाते है वैसे वैसे हमारे तन मन में पुष्टिभाव उत्कंठित होता है, हमारी पहुँचने की उत्कंठा तीव्र होती जाती है और मन पुकारता रहता है - कितनी देर! कितनी देर!। जैसे बैठकजी की धजाजी या हवेली का दर्शन होते है, पाँव दौड़ने के लिए बेकाबू हो जाते है और हस्त सेवा करने के लिए व्याकुल हो जाते है। पहुँचते ही पुष्टि पथ रज छूते ही द्रष्टि में श्रीवल्लभाचार्यजी का मुखारविंद प्रकट हो जाता है, मन में दर्शन से मिलने की आतुरता वेग पकड़ती है। जैसे नैन में श्रीवल्लभाचार्यजी का विग्रह निहालते है - **हे श्री वल्लभ! हे श्री आचार्य! हे मेरे परम उद्धारक! जन्म जीवन पुष्टेश्वर! दंडवत प्रणाम! आपके सानिध्य में आपकी कृपा से पहुँचा हूँ, मेरा स्वीकार करना! मुझे पुष्टिमार्ग सिद्धांत संस्कार से शुद्ध और पवित्र करना! मेरे जीवन में स्व स्वार्थ से घटित हुई दूषित चेष्ठा, कार्य, विचार का क्षय करके योग्य संस्कार सिंचन करके सदा के लिए नष्ट करना। हे गुरुवर प्रिय आचार्य! आपका सेवक, शिष्य या अनुयायी को क्षमा करना।** **" एवं प्राणशरीररूपम् कर्मत्वेन ध्येयत्वेन प्राप्यत्वेन च व्यपदिशति, न च भजनीय रूप अकथने तादशं फलम् सिध्यति इति। " " गुरुरूप तादश रूपम् नि:श्वसित वेद: उद्रमजनकं स्मृत्वा, भगवान् पुरुषोत्तम: वाकयानि उक्तवान् स्मृतिरूपाणि। " " पुरुषस्य ब्रह्मत्वं नि:मन्दिग्धम् एव इषदानन्द तिरोभावेन ब्रह्म अक्षरम् उच्यते। प्रकट आनन्द: पुरुष इति। ब्रह्मविद् आप्नोति परम् इति अत्रैव तथा निर्णयात्। तस्माद् अद्रश्यत्वादि गुणक: परमात्मैव। "** सरल, शुद्ध और पवित्र।**" Vibrant Pushti "**
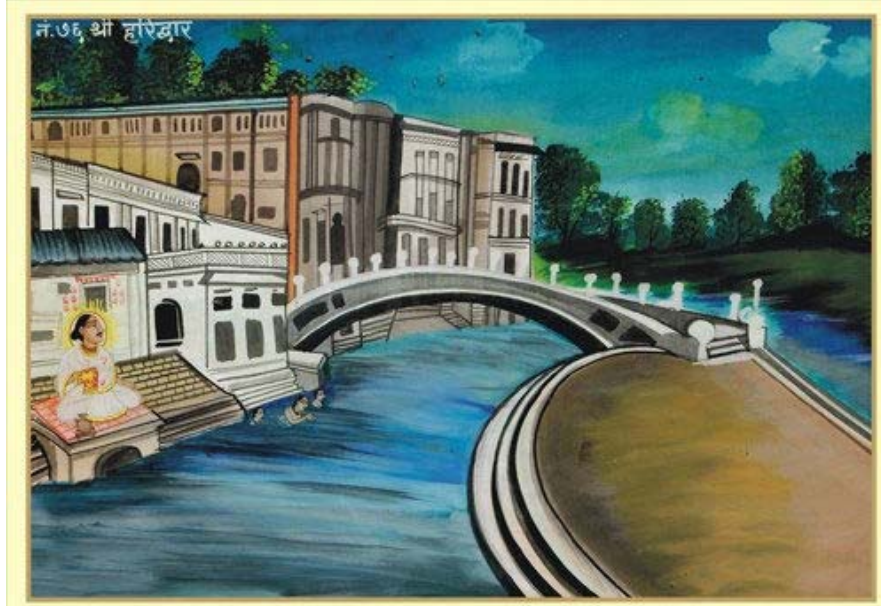
षष्टसप्तदशी बैठकजी - बैठकजी और गंगा की तट पर - अदभूत! **जैसे प्रयागराज में ज्ञान, भक्ति और प्रेम का संगम होता है, ऐसा यहां ज्ञान, भक्ति और प्रेम का समन्वय सिद्धांत, संस्कार और पुरुषार्थ से होता है।** हिंदु संस्कृति का श्रेष्ठ समन्वय यहां ही होते है। इसीलिए तो **गंगा पतित पावनी और श्रीवल्लभाचार्यजी जीव उद्धारक। एक दूरित का क्षय करके पवित्रता भर दे तो दूजा पुष्टि प्रीत से योग्यता भर दे। यही दोनों का मिलन की प्रतिपादक्ता प्रकृति, सृष्टि, जगत और ब्रह्मांड को `सूर्य की तरह तेजोमय और निरपेक्ष कर देते है। जिससे जीवों में अदभूत ऊर्जा प्रदान होती है, जो ऊर्जा जीवों में उत्साह, उमंग और आनन्द भर कर जीवन की सार्थकता को यथार्थ करने का बल सिंचन करती है। श्रीवल्लभाचार्यजी और गंगाजी में आनन्द की अतिरेकता बढ़ जाती है और अपना भौतिक स्वरूप की सिद्धि सिद्ध हो जाती है। ओहह अलौकिक! यह स्थली सामर्थ्यवान और उद्धारक है। बैठकजी की यह महिमा देवताओं, असुरों, दानवों, गणों, आधिपतिओं, मानवों और अनेक जीवों को आकर्षित करती है। बैठकजी की पूर्णता यहां सिद्ध होती है। " जीवस्य हि चैतन्यं गुण: स सर्व शरीर व्यापी। प्रभाया गुणत्वमेव; स्पर्श अनुपलाभात् उद्गत औष्ण्यवत्। " " जीवेड्पि देह सम्बन्धकृत:, सम्बन्ध: च आध्यासिक: भगवद् कृत: च आध्यासिक: हि ज्ञानात् निवर्तते, द्वितियो भगवतैव। न्यास: अपि देह सम्बन्ध एव। " " रमणीय अनुष्ठातृणाम् रमणीय शरीर प्राप्ति: एव बोध्यते। " " शरीरम् अर्थम् एव देवै; तत्र तत्र होम: कृत:। " " भगवद् निर्मितत्वात् स्वप्नस्थस्य अपि सत्यत्वम्। " " सर्वत्र लौकिकम् प्रतिषेधति अलौकिकम् विधत्ते इति युक्त्या निर्णय:। "
हे वल्लभाचार्यजी! डग डग भर कर डग डग में जीवों के उद्धार के लिए स्व को समर्पित किया, डग डग भर कर परब्रहम प्रति स्व निष्ठा समर्पित कर दि। धन्य हो मेरे आचार्य! दंडवत प्रणाम स्वीकार हो! " Vibrant Pushti "**
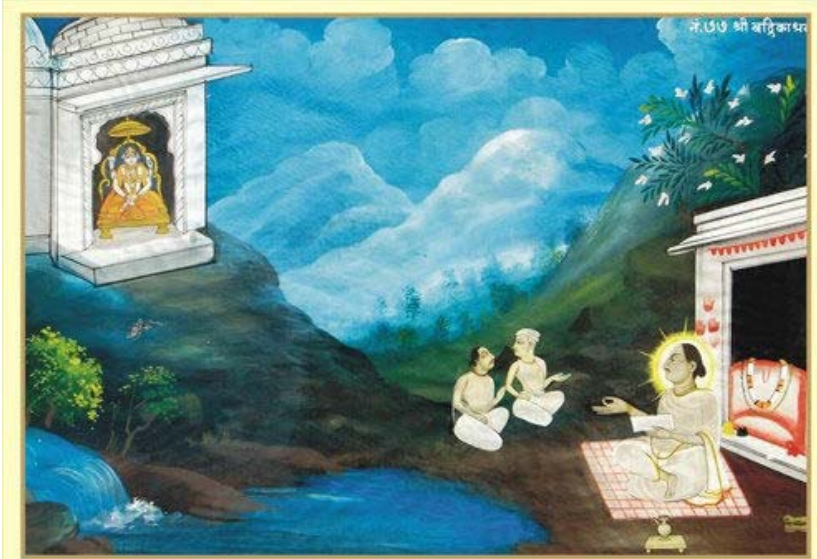
सप्तमसप्तदशी बैठकजी - बैठकजी - अदभूत साधन श्रीवल्लभाचार्यजी ने प्रस्थापित किया है। गहराई भरा यह साधन हमें क्या से क्या बना देता है, क्या से क्या परिवर्तन कर देता है, क्या से क्या युक्त कर देता है। आज का समय आधारित तो बैठकजी निराला और औचित्य भरा है। जीवन की प्राथमिकता से समझे तो पैसा से श्रेष्ठ स्वयोग्यता है। **स्वयोग्यता से ही जीव सर्वथा पा सकता है, कर सकता है। श्रीवल्लभाचार्यजी ने यह स्वयोग्यता के लिए बैठकजी का माध्यम पूर्णता से योग्य है - यथार्थ है - श्रेष्ठ है - उत्तम है। जीवन के हर काल में - हर क्षण में १. उत्साहत २. निश्चयात ३. दर्जात ४. तत्कर्मप्रवक्तनात ५. संगत्यगात और ६. शताब्दिते। यह छह जीवन वर्धनम् कदम है, जो भरते जाये तो स्व संवरते जाये - जीवन मधुर बनाते जाये।**

१. उत्साहत - सैद्धांतिक रूप से जो कार्य करने का तय किया उनमें पूर्ण रूप से उत्साह भर दो।

२. निश्चयात - जो निश्चय किया उनमें अडग रहो।

३. दर्जात - जो कार्य में उत्साह भरा, निश्चय किया, वह कार्य में खुद का दर्जा क्या? यह प्राथमिकता से तय करो।

४. तत्कर्मप्रवक्तनात - संगठन कर्म या क्रिया तय की वो कर्म या क्रिया को योग्यता पूर्वक समझ कर उनका विवरण करो - विश्लेषण करो। जिससे जो भी संगठन में है उन्हे मूल कर्म या क्रिया का उदेश्य समझ में हो।

५. संगत्यगात - संगठन कर्म या कार्य तय किया है, सर्व सभ्य निखालस पूर्वक स्व समझ और जवाबदारी पूर्वक चोककस समय मर्यादा में ही सिद्ध करना होता है।

६. शताब्दिते - जो कर्म या कार्य निश्चय किया है वह कार्य अविरत तय की हुई सैद्धांतिक प्रणाली में सदा होना ही चाहिए। - श्रीवल्लभाचार्यजी ने यही षष्ट कदम अपने जीवन में सदा कर्मसात किया। बैठकजी की प्राथमिक प्रारम्भिकता यही अपने आंतर स्फुरणा से ही है।

जो ऊपर दिए जीवन वर्धनम् कदम क्षण क्षण भरते ही जाना है तो ज्ञान वर्धनम् - भक्ति वर्धनम् - भाव वर्धनम् और अर्थोपार्जन वर्धनम् में श्रेष्ठ है। निश्चित ही स्वभाव विजयो भवेत। " Vibrant Pushti "
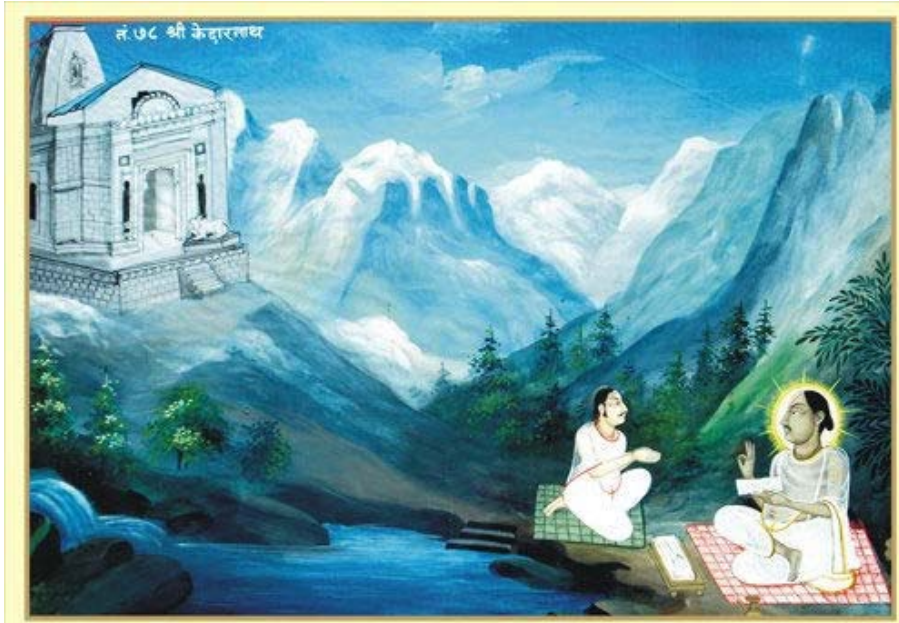
बैठक–78

श्री केदारनाथ

ज्योतिर्लिंग श्री केदारनाथ की बस्ती में केदार कुण्ड पर श्रीमहाप्रभुजी की बैठक है। आनन्द मूर्ति श्रीमहाप्रभुजी ने यहाँ श्रीमद् भागवत पारायण किया है। कथा श्रवण करने हेतु नित्य योगेश्वर के स्वरूप में श्री केदारनाथ पधारते थे।

अष्टसप्तदशी बैठकजी - बैठकजी संरक्षण - स्व संरक्षण। श्रीवल्लभाचार्यजी की सर्व पुष्टिमार्ग सिद्धांत संस्कार निधि स्व बंधारणीय और स्व रचित है। अर्थात जो भी उन्होने प्रस्थापित किया वह सर्वे शासकीय दस्तावेज़ अनुसार और प्रजालक्षी नीति नियमों आधीन ही किया है। न किसिका दान लिया है, न किसिका सेवाकीय उपयोग और उपभोग किया है। सर्वथा जीवों उद्धारक और सामाजिक उत्थान पुरुषार्थ से ही किया है। न तो उनकी कोई मिलकत, धन दौलत या पैसा, आभूषण थे। वो तो सदा अपने सेवक का निर्वाह के लिए जो कोई भेंट स्वीकारते थे वो उनही को दे देते थे। यही विलक्षणा ही उन्हें जगद्गुरू की उपाधि से दीक्षित करते थे, यही निष्ठा से ही तो पुष्टिमार्ग सिद्धांत संस्कार को गति देते थे। इसीलिए पुष्टिमार्ग का संरक्षण अपने आप होता था और सर्वे आनन्द अनुभवते थे। बैठकजी यह सिद्धांत संस्कार की प्रमाणित स्थली है। बैठकजी पर न कभी दोष, न कभी व्यभिचार, न कभी अपराध, न कभी अध्याहार, न कभी व्यथा परिश्रम, न कभी कोई प्रजल्प। सर्वथा बैठकजी पुष्टिमार्ग की श्रेष्ठ नीव है। श्रीवल्लभाचार्यजी ने उन्हे अपने श्रमजलाणु से सिंचा है - बांधा है - सुशोभन किया है - कृत कृत किया है। हमें सर्वे बैठकजी का संरक्षण करना है - यही हमारी गुरु दक्षिणा है - यही से हम सिद्ध कर सकते है की हमारा गुरु एवं आचार्य केवल और केवल श्रीवल्लभाचार्यजी है और हम उनके पुष्टिमार्ग सिद्धांत संस्कार के अनुयायी है।

" अज्ञान व्यवधानम् ज्ञान प्रशंसा अर्थम् उकत्वा, ज्ञान अनन्तरम् संसार सम्बन्ध अभावाय सेतुत्वम् वदति। पापब्धि तरणार्थम्। य: च तरति, तद गता: च दोषा गच्छन्ति इति च। अत: संसार फलयो: मध्ये विद्यमानत्वात् तीर्णस्यैव फल श्रवणात् फलरूपम् वस्तु किश्चिद् अन्यद् अस्ति इति ज्ञायते। निधित्वेन फलवचनम् अवान्तर फलपरम् भविष्यति। " श्रीआचार्य आप हमें सदा सलामत और सुरक्षित रखते हो और रहने की विधि भी शिक्षित करते हो।

नवमसप्तदशी बैठकजी - बैठकजी के प्रधान सेवक श्रीवल्लभाचार्यजी स्व है। स्व पाठी से सिंचित किया, स्व पाठी से निर्मित किया, स्व पाठी से साक्षर किया, स्व पाठी से पुष्टि ज्योत जगाई, स्व पाठी से जगत समर्पिताई। प्रधान सेवक से उनके निकट कहीं जीवों शरणागते, यह शरणागत जीवों से ही पुष्टि सृष्टि का पार्दुभाव हुआ। प्रधान सेवक से कहीं पुष्टिमार्ग सिद्धांत संस्कार योग्य सेवक भए - जैसे अष्टसखा - ८४ वैष्णव - २५२ वैष्णव और ऐसे कहीं अगिनत सेवकों है जिससे पुष्टिमार्ग सिद्धांत संस्कार की धारा " कृपाजलधिसंश्रिते मम मन: सुखं भवाय। " हर एक को स्पर्शती स्पर्शती माधुर्य भरती, संस्कार सिंचती आनन्द लूटा रही है। बैठकजी श्रेष्ठ और सर्वोपरि साधन है हमारा जीवन कृत कृत करने, योग्य संपादन करने, योग्य शिक्षा पाने, योग्य स्व को जागृत करने। कहीं ऐसे द्रष्टांत है - दामोदर हरसानिजी - जिससे पुष्टिमार्ग प्रकट भयो। श्रीवल्लभाचार्यजी प्रथम बैठकजी से ये वाक्य उच्चारते है " हे दमला! तेरे लिए पुष्टिमार्ग प्रकट भयो " । जो आज हम सर्व के लिए यही वाक्य का स्पर्श हमारा उद्धारक बनता है। - सूरदासजी - आज उनकी समाधि से हमें पुष्टि सृष्टि की गूँज सुनाई देती है और कहीं सिद्धांतो सिखाती है ज्ञान भक्ति की अटूट धारा - प्रेम, विरह, वात्सल्य, भाव, स्वतता, माधुर्य, निडर, समर्पण, शरणागत आदि जो उनके कीर्तन में सदा प्रदीप्त है। - कृष्णदास मेघन - अटूट सेवा भाव, अटूट सेवक भाव, अटूट तत्सुख भाव, अटूट मंजरी भाव, अटूट न्योछावर भाव, अटूट आज्ञा भाव। अदभूत! हे सेवकों आप सर्व श्रेष्ठ हो! आपको मेरा दंडवत प्रणाम स्वीकार्य हो! आपके चरित्र से जो पुष्टि रस पिया - जो सदा लूटाऊंगा - न्योछावर करूंगा - समर्पण करूंगा।

" Vibrant Pushti "

अष्टदशी बैठकजी - बैठकजी से एक एक चरित्र जागते है, उठते है। जहां जहां भी बैठकजी है वहां वहां समाज के कहीं वर्ग और वर्ण जागृत होते गए। **जीव में भरे हुए अज्ञात दोष, अज्ञात रोग और अज्ञात भोग को पहचान कर सदा के लिए उन्हे नष्ट करने की योग्य स्थली - बैठकजी।** **जहां जीव मंद गति से पहुंच कर स्व चिंतन, स्व साधना, स्व धर्म, स्व कर्म, स्व देह, स्व आत्म, स्व मन और स्व जीवन को पहचान कर स्व में स्वस्थता प्रतिपादित करता है। जिससे दोष, रोग और भोग का निवारण होता है। मन को संवारना, तन को संवारना, द्रष्टि को संवारना और धर्म सिद्धांत संस्कार को धरना यही तो श्रेष्ठता है जन्म जीवन की। बैठकजी ज्ञानवर्धक, भक्तिवर्धक और आनंदवर्धक स्थली है। जहां जीवन के हर प्रश्न का उत्तर है, हर जिज्ञासा की आपूर्ति है। जन्म जीवन की कठिनाई का मूल और उनका निवारण यही स्थली से पाते है। जीवन को धन्य करने का मूल यही ही बिराजते है। जीव में प्रेम का अखूट भंडार है - यह भंडार को स्व गुरु या स्व आचार्य मार्गदर्शक ऐसी ही स्थली पर बिराज कर मार्गदर्शन करते है। बैठकजी अमूल्य है - असामान्य है - असाधारण है।**

जग में यही बैठकजी पर " गुरु गोविंद दोनों मिले, करे स्व उद्धार यही है बैठकजी की पहचान "

" साष्टांग दंडवत प्रणाम " मेरे वल्लभ - मेरे श्रीनाथ - मेरी यमुना - मेरे गिरिराज "

" पर उत्कर्ष असहनम् मत्सरो दोष:। भगवद् साक्षात्कारे तु अनन्त: सायुज्ये वा शान्त परमानंद "

श्रीप्रभु मेरे अवगुण चित न धरो, मुझे अपनी शरण में ले लो। " Vibrant Pushti "
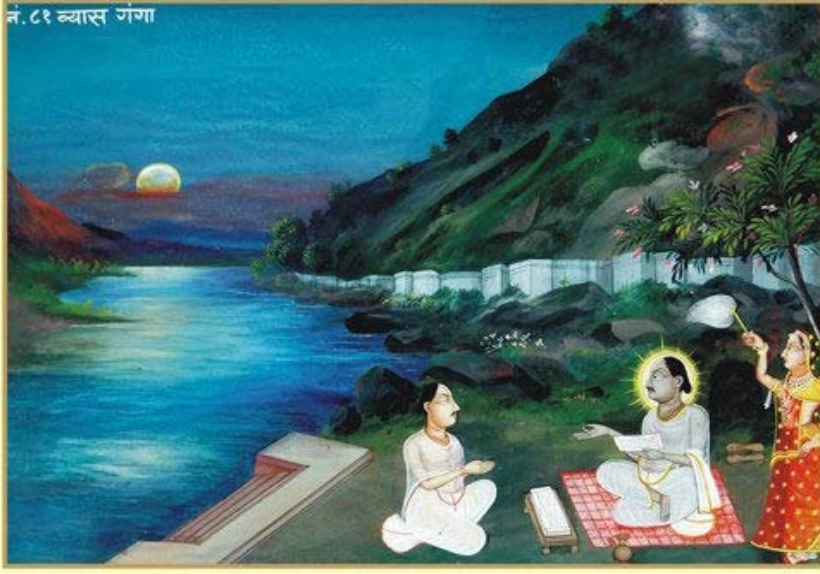
बैठक–81

श्री व्यास गंगा

श्री वेदव्यासजी के जन्म स्थान व्यासगंगा के तट पर श्रीमहाप्रभुजी की बैठक छोंकर वृक्ष के नीचे है। सघन वृक्षावली की कुंज में आचार्यश्री ने श्रीमद् भागवत सप्ताह किया है। श्रीगंगाजी आधिदैविक स्वरूप से स्वयं कथा श्रवण करने को पधारती थीं।

प्रथमअष्टदशी बैठकजी - श्रीआचार्यजी डग भरते भरते और अपने शिष्यों के साथ चलते चलते ऐसी ही रमणीय स्थली पर ठहरते जो श्रीवल्लभाचार्यजी को अवश्य समझ आवे की यह स्थली और स्थली पर आवास करते जीवों में पुष्टि तत्वों के गुण है। यही जीवों में पुष्टिमार्ग सिद्धांत संस्कार का सिंचन आवश्यक है, यही आत्मीय अनुसंधान के माध्यम से ठहरते थे। श्रीवल्लभाचार्य कहीं जीवों को ऐसे पहचानते थे जैसे अनेकों जन्म से उनसे जुड़े हुए है - सूरदासजी, दामोदर हरसानिजी, काश्मीरी भट्टजी आदि कहीं जो परिक्रमा मार्ग पर आते ही उन्हें पुकारते थे। **बैठकजी का माध्यम से ऐसे शिष्य को वो स्व पहचान कराके, उनमें छूपी हुई योग्यता दर्शा कर पुष्टिमार्ग सिद्धांत संस्कार निधि से उन्हें मूल क्रिया और दिशा पर केन्द्रित करते थे। यही केंद्रितता का पाठ सीखा कर योग्य मार्गदर्शन की आज्ञा दे कर, यही स्थली से अनेकों जीवों के उद्धारक होने का आशीर्वाद प्रदान करते थे। योग्य शिक्षा - योग्य मार्गदर्शन - योग्य आज्ञा - योग्य आशीर्वाद से ही वो जगत उद्धारक थे। न कोई वंश परंपरागतता - न कोई जीव भेद भाव - न कोई स्व अपेक्षा - न कोई स्व रुचि - जीव की स्व नियामकता - जीव की स्व संस्थापकता और जीव अपनी आंतरिक - बाह्य काबेलियत आधारित ही पुष्टिमार्ग सिद्धांत संस्कार निधि का संचालन करता था। बैठकजी से योग्य शिष्य को ऐसे ही संस्कार प्रदान करते थे - पुष्टिमार्ग स्वीकार्य जीव में विश्वास, पवित्रता और स्व जागृतता की अनुभूति होती थी। जीव स्व ही विशुद्ध लीला का अनुभव करते थे। यही ही श्रीवल्लभाचार्यजी की उच्चता और उत्तमता थी जो द्वैत और अद्वैत की योग्यता जीवोंमें शिक्षित करते थे। जिससे जगत में जीव स्व को अद्वैत समझ कर, स्व पराकाष्ठा से सर्वे जीव तत्वों में समांतरता का परिवर्तन होने पुष्टिमार्ग सिद्धांत संस्कार मुक्तावली से दीक्षित करते थे। श्रीवल्लभाचार्यजी सरल सामान्यता - साधारणता - निर्मोही - नि:संशय - नि:संदेह निरपेक्ष जीवन निर्वाहता - स्व अभ्यास, स्व पुरुषार्थ, स्व पुष्टि जीवन, स्व जागृतता, स्व से परम स्व में एकाकार होते थे। अदभूत! पूर्ण सैद्धांतिक, पूर्ण नैतिक, पूर्ण सात्विक, पूर्ण आध्यात्मिक, पूर्ण धार्मिक, पूर्ण स्वस्तिक, पूर्ण वैदिक, पूर्ण शैक्षणिक, पूर्ण अलौकिक। " Vibrant Pushti "**
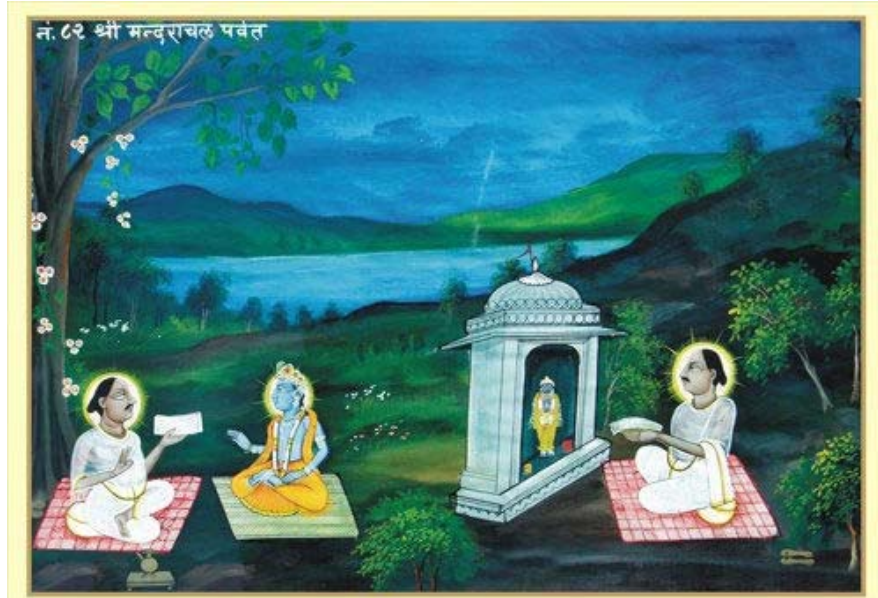
द्वितीयअष्टदशी बैठकजी - बैठकजी - पाठशाला, बैठकजी - विसामो, बैठकजी - कल्पवृक्ष, बैठकजी - निकुंज, बैठकजी - आँचल, बैठकजी - मंझील, बैठकजी - ऋग्णालय, बैठकजी - मधुरालय, बैठकजी - कृतज्ञालय, बैठकजी - कृपालय, बैठकजी - घट, बैठकजी - निर्भयालय, बैठकजी - ऊर्जालय, बैठकजी - बौद्धालय, बैठकजी - करुणालय, बैठकजी - श्रीप्रभुद्वार, बैठकजी - धर्मद्वार, बैठकजी - व्रजद्वार, बैठकजी - न्यायालय, बैठकजी - गोकुल, बैठकजी - वैष्णवालय, बैठकजी - नित्यालय, बैठकजी - संरक्षणालय, बैठकजी - धर्मालय, बैठकजी - विरहालय।

श्रीवल्लभाचार्यजी का एक एक डग या कदम से अनेकों जीव का उद्धारक मार्ग प्रस्थापित होता था, एक डग एक भगवदीय वैष्णव की जागृति। **चलते चलते वायु स्पर्शता, चलते चलते धरती रज स्पर्शती, चलते चलते कीटक जीव स्पर्शते, चलते चलते वनस्पति स्पर्शते, चलते चलते स्पंदन स्पर्शते, चलते चलते स्वर स्पर्शते, चलते चलते बूंद स्पर्शती, चलते चलते आकाशी शुष्कता स्पर्शती, चलते चलते सूर्य किरण स्पर्शते, चलते चलते चन्द्र शीतलता स्पर्शती, चलते चलते ऊष्मा स्पर्शती, चलते चलते ऊर्जा स्पर्शती, चलते चलते विचार स्पर्शता, चलते चलते ख्याल स्पर्शता, चलते चलते क्रिया स्पर्शती, चलते चलते महक स्पर्शती, चलते चलते रंग स्पर्शता, चलते चलते संग स्पर्शता, चलते चलते भाव स्पर्शता, चलते चलते ज्ञान स्पर्शता, चलते चलते विज्ञान स्पर्शता, चलते चलते सिद्धांत स्पर्शता, चलते चलते द्रष्टि स्पर्शती, चलते चलते द्रश्य स्पर्शता, चलते चलते अन्न स्पर्शता, चलते चलते फल स्पर्शता, चलते चलते रस स्पर्शता, चलते चलते विकार स्पर्शता, चलते चलते अहंकार स्पर्शता, चलते चलते अक्षर स्पर्शता, चलते चलते क्षर स्पर्शता, चलते चलते रोग स्पर्शता, चलते चलते योग स्पर्शता, आदि स्पर्श। क्या समझते है हम? श्रीवल्लभाचार्यजी के स्पर्श से हर स्पर्श एक स्थली में परिवर्तित हो जाता है - जो बैठकजी के स्वरूप में बंधारणीय होता है।** श्रीवल्लभ! श्रीवल्लभ! श्रीवल्लभ! श्रेष्ठ! **" Vibrant Pushti "**

बैठक–83

श्री अडेल

अडेल में श्रीमहाप्रभुजी स्थायीरूप से बिराजे हैं। यहाँ आपश्री के मातृचरण इलम्मागारूजी को स्वयं श्रीनवनीतप्रियजी ने ब्रह्म–सम्बन्ध कराया है। लालन को भेंट स्वरूप माताजी ने मोती की माला अर्पित की थी।
(यह माला आज भी नाथद्वारा में श्रीनवनीतप्रियजी को धराते हैं।)

तृतीयअष्टदशी बैठकजी -

श्रीवल्लभ तरसत नैन तेरे दर्शन काज
ऑ ऑ तरसत नैन वल्लभ दर्शन काज
पुष्टिमार्ग सिद्धांत संस्कार अपनाया
ब्रहम सम्बन्ध स्वीकारा जीवन काज
बुझे मेरे जनम जनम की प्यास
श्रीवल्लभ तरसत नैन तेरे दर्शन काज

पुष्टिमार्ग का मैं हूँ वियोगी
भटकू निरंतर तेरे चरण काज
ले ले शरण हे अष्टसखा नाथ
विनती स्वीकारो अधम की रखियो लाज
श्रीवल्लभ तरसत नैन तेरे दर्शन काज

गुरु बिन आचरण कैसे जगाऊँ
दीजों दान पुष्टि स्मरण पाऊँ
ज्ञान ध्यान भक्ति पर वल्लभ राज
हाथ पकड कर बिठावो पास
श्रीवल्लभ तरसत नैन तेरे दर्शन काज

हे वाक्पतिमेरा जन्म उजालो आप !
मुझे दर्शन भिक्षा दे दो आज, दे दो आज
श्रीवल्लभ तरसत नैन तेरे दर्शन काज

" Vibrant Pushti "

चतुर्थअष्टदशी बैठकजी - **स्थली स्थली और स्थली। स्थली का अर्थ है स्थिर और स्थिर का अर्थ है बैठकजी। जन्म धारा कहीं अनुसंधानो से, कहीं कर्मो के फलों से। यह जन्म - अनुसंधान - फल जानना है, समझना है और स्व ध्येय पर चलना है। यह कैसे जाने? यह कैसे पहचाने?** शास्त्र कहते है - **मनुष्य जन्म कहीं जन्मो के फलों के बाद जीव पाता है और यह मनुष्य जन्म से ही जीव सार्थकता, यथार्ता पाता है।** क्यूंकी उन्हें कहीं प्रकारके साधन आवलंबन होते है, यह साधनों उनके कर्म अनुसंधान गति, शिक्षा और अध्ययन से आध्यात्मिक, आधिदैविक और आधिभौतिक मिलता है। इतना तो तय ही है की जो कुछ भी करता है वह स्व ही करता है, चाहे उन्हें अनेकों साथ मिले, अनेकों माध्यम मिले, अनेकों अद्रश्य शक्ति मिले, अनेकों निधि मिले। जैसे उन्हें ऐसे अनेकों मिलते है वैसे अनेकों के कर्म फल दोष आदि सर्व मिलते ही है, अर्थात चक्र है और चक्र में रहना है और चक्रव्युह से बाहर निकालना है। **बैठकजी एक अलौकिक आध्यात्मिक, आधिदैविक और आधिभौतिक साधन है जो मनुष्य स्व योग्यता से उपयोग करके स्व को स्व से एकात्म कर सकता है।** **ऐसी कहीं बातें, रीतें, सूत्रों, मंत्रों, अध्ययनों, सिद्धिओ, चरित्रों शास्त्रों में है हमारे अनुसंधानो के लिए और फलों का विवरण है हमारी शिक्षा और समझ के किए। पर काल का प्रवाह से ऐसे अनुसंधानों को बार बार अनुसंधान में रखना आवश्यकता से ज्यादा वर्तमान में जीना और संवरना है। ऐसा ऐसा और ऐसा तो सुनकर खुद नादुरस्त हो गए।** **बैठकजी इतना श्रेष्ठ और सरल साधन है की ऐसे कहीं मार्मिक प्रश्नों के उत्तर सरलता से मिलते है। हाँ! बैठकजी का बंधारण ही ऐसा है की हमें केवल और केवल योग्यता ही प्रदान हो। बैठकजी हमें आध्यात्मिक, आधिदैविक और आधिभौतिक सिद्धांतों से सिंचित करके हमें जीवन के श्रेष्ठ संस्कारों से दीक्षित कर हमें योग्य मनुष्य में परिवर्तन करते है। बैठकजी शिष्य, अनुयायी, भक्त, पुष्टि भगवदीय में परिवर्तन करके मनुष्य जन्म जीवन को सफल करता है।** **" Vibrant Pushti "**

पुष्टिमार्ग सिद्धांत संस्कार - श्रीवल्लभाचार्यजीने अपने जीवन की प्राकट्य क्षण से तृतीय लोक पहुँचने तक उन्होने सारा पुरुषार्थ अपने आंतरिक उत्साह से आरंभ किया और अपने आपको तीव्र उत्साह ज्योति स्वरूप में परिवर्तन करके जगत को सिद्ध कर दिया की स्व आतम ज्योति को पुष्टि स्वरूप से अद्वैतता सिद्ध कर सकते है। स्व को आनन्द स्वरूप सिद्ध कर सकते है। बैठकजी के माध्यम से ८४ जीवन सिद्धांत - जो हर प्रकार के जीव को योग्य मार्गदर्शन और श्रेष्ठतम् दिशा पथ स्वीकार कर सकता है।

१. **उत्साह** - उत्तम उत्साह सर्वे मानव जीव का प्राकृत भाव है, जब कोई योग्य संकल्प करते ही, उनमें आंतरिक जोश उत्स होता है, यह जोश ही उन्हें पूर्णता की ओर पहुंचाता है। जैसे सूरज कितनी उत्साह से सवेरे उगता है, सारा दिन अपनी उत्तमता से निपटाता है, पंखी सुबह कलरव करते करते आनंद उमंग भर देता है वैसे हम भी अपनेमें उत्साह का उत्स करके जीवन पथ का योग्य संकल्प करके पुष्टिपथ पर चलना ही है।

२. **निश्चय** - जगत में जीते जीते जो जो अनुभव होते जाते है, यही अनुभव आधारित निर्णयात्मक बल जागता है, यही बल से जीवन में विश्वास भरा व्यक्तव्य अपने में उजागर करते है, जो निश्चित रूप में द्रढ़ होता है। यह निश्चितता अपने नैन, मन, तन और कर्म में प्रगाढ़ता की शक्ति तीव्र करती है और हम योग्य निर्णय लेने या करने के लिए काबिल होते है। यही काबेलियत ही जीवन को उत्साह उमंग में भर देती है।

३. **धैर्य** - समय - काल - परिवर्तन आधारित हर कोई परिवर्तित हो जाते है। जो जीव का परिवर्तन सैद्धांतिक हो वह जीव में समय - काल और परिवर्तन समझने की क्षमता है। यह क्षमता अनुभव और धैर्यता से ही स्थिर होती है। स्व जीवन को कृतार्थ करने धैर्यता योग्य संकल्प - निश्चय करने महत्तम समय सूचकता है। उत्तम - द्रढ़ - सफल निर्णय शक्ति इससे ही प्रदान होती है।

४. **तत्पर** - सही संकल्प, सही निश्चय, सही पद्धति का सुयोजन करके संकल्प को सही समय पर गति देना बहोत आवश्यक है, यह गति ही संकल्प को क्रिया में परिवर्तन करती है। इसके लिए स्व को आंतरिक और बाह्य तत्परता अपनानी पड़ती है। तत्परता ही एक ऐसा जोश है जो निर्धारित समय में पूर्णता की ओर पहुचाने आधी आशा बांध देता है।

५. **संग** - संग अर्थात साथ। कोई भी प्रकार की क्रिया में संग होता ही है, बिना संग नही ठाम अर्थात संग के बिना हम सफल या शांतता नही पा सकते है। संग भी योग्य, तत्परता सभर, निश्चयी और योग्य समझ प्रमाणित होना अति आवश्यक है। संग से ही रंग - संग से ही पूर्णता निश्चिंत है। संग का चयन धैर्यता से करना होता है, यही हमारी कुशलता है।

६. **सत्संग** - संग सत्य भरा, योग्य चयनी, नि:स्वार्थी, नि:संशयी, पवित्र और जोश भरा होना चाहिए, जो हमें आवश्यकता पर योग्य साथ दे, ज्ञान दे, समय सूचकता प्रदान करे, शुद्ध आचारी सूर से सूर मिलाये, प्रणय का रंग उड़ाये, आश्वासन का सहारा निभाए, श्रेष्ठता का बीज निरुपाए।

७. **जिज्ञासा** - जिज्ञासा अर्थात आंतरिक उतेजना, उत्कंठा। प्रबल जिज्ञासा क्रिया को समांतर गति प्रदान करता है, अलग अलग प्रकार के मार्ग चयन का माध्यम प्रदान करता है। जिज्ञासा से हमारे में उठती शक्ति को योग्य गति मिलती है। सकारात्मकता की ऊर्जा सिंचित करता है। जिज्ञासा से ही संग - सत्संगी हमारी तरफ आकर्षित होते है।

८. **प्रखरता** - स्व जागृतता, स्व निश्चयता, स्व धैर्यता, स्व तत्परता, स्व कुशलता, स्व जिज्ञासा ही अपने संकल्प को योग्य मात्रा में गति प्रदान करता है। लिखित स्व गुण ही एक ऐसी ऊर्जा प्रजवल्लित करती है, जो आसपास उठने वाली नकारात्मक्ता को नष्ट कर देती है। सद्गुणों की समन्वयी ऊर्जा ज्योत में प्रजवल्लित हो कर प्रखर रूप से क्रिया को योग्य स्वरूप निर्मित करके श्रेष्ठ पूर्णता प्रदान करती है।

उत्तम पूर्णता की ओर कदम से कदम बढ़ाने हमें -

९. **ज्ञान** - ज्ञान पाना अनिवार्य है। बिना ज्ञान नही संधान। गुरु बिना ज्ञान नही - स्व जागृतता बिना धर्म नही। ज्ञान अर्चित कर स्व में जागृतता का बीज बों सकते है। यही बीज को सद्‌गुणों से सिंचित कर सत ऊर्जा प्रस्थापित कर सकते है। जो ऊर्जा को ज्योत और ज्योत को प्रखर ज्ञानाग्नि, भावाग्नि, प्रेमाग्नि में ऊर्जित कर सकते है। जो सदा सत्यता का पर्चम लहराता है।

१०. **संयम** - ज्ञान से ही हममें सत्य निर्णय करने की क्षमता जागती है, यह निर्णय में संयमता रखनी - वर्तनी योग्य आवश्यकता है। अति उत्साह, अति धैर्यता, अति तत्परता, अति संगठन, अति सत्संग, अति जिज्ञासा, अति प्रखरता मनुष्य को अति अंध विश्वास में अस्थिर कर देता है। अति से समांतर मात्रा में सुयोजित करने संयमता श्रेष्ठ अवरोधक अर्थात मर्यादा, नियमन, पद्‌धति का बंधारण नियोजित करती है, जिससे सर्व कदम अविचलित मात्रा में ही बढ़े।

११. **निस्पृहता** - जीवन की बहती धारा में योग्य पद्‌धति प्रमाणित कदम से कदम बढ़ाते है, यह कदम का आविस्कार निस्पृहता से ही पूर्ण होता है। बिना निस्पृहता न कोई कदम बढ़ सकता है - न कोई पूर्णता पा सकते है। इसके लिए ज्ञान अर्चित करते समय और संयम नियोजित करते समय निस्पृहता की पूर्ण मात्रा जीवन की मधुरता ही संपादित करती है। यह सर्वथा प्राथमिक है। जो हर कदम कदम पर यह गुण की अनिवार्यता है ही।

१२. **एकाग्रता** - अनेकों से एक - कुछ भी सोचो, कुछ भी करो जो अनेकों विचार - अनेकों क्रिया साथ साथ होगी तो कोई भी विचार या क्रिया सार्थक नही होगी, हैरान और समय बिगड़ेगा वो अलग। इसीलिए सबकुछ केन्द्रित करके एक ही निश्चय पर होंगे तो अवश्य सफलता पायेंगे - ऐसे ही जीवन में एकाग्रता से जो भी निश्चय करेंगे वो निश्चय पार ही पड़ेगा।

१३. **त्याग** - त्याग का अर्थ है सैद्‌धांतिक से छोडना। त्याग का अनेकों अर्थ करके विपरीत परिणाम लाते है। त्याग अर्थात त्यजना - त्यज जो अनर्थ करता है, जो अयोग्य परिवर्तन करता है, जो अयोग्यता का उत्स करता है। जिससे हैरान - परेशान और दु:खी होते है, उसका त्यज करना। उत्तमता के लिए त्याग अनिवार्य है। सैद्‌धांतिक त्याग हमें केवल श्रेष्ठता ही प्रदान करता है।

१४. **योग्यता पूर्वक ही संवरना है - संभलना है और उत्तमता पानी ही है** तो सुबह उठते ही नया आयोजन, प्रयोजन, नियोजन अपना संकल्प - निश्चय आधारित ही योग्यता है। सुबह जितनी मधुर इतना हमारा स्व अस्थ मधुर। खुद में सुख की अनुभूति का संचार - जो बीत गया वो कल था आज तो सुनहरा अवसर है, जो मुझमें नया जोश, नयी प्रेरणा, नया उमंग, नयी व्यवस्था और नया सुझाव, नया संकेत आदि नया और सुनहरा ही होता है।

१५. **अपना स्व मूल्यांकन** समय समय करने से स्व के विचार, क्रिया, आयोजन की यथार्ता समझ आती है, जिससे भविष्य की नीति, पद्‌धति व्यवस्थित करने की सरलता पाते है। जीवन की हर पहेलु में यही पद्‌धति को आधार स्थंभ निरुपे तो अवश्य कहीं सफलता के मार्ग अपने आप खुल जाते है।

१६. **आत्म विश्वास** - खुद को सैद्‌धांतिक धारा से इतने द्रढ़ बनावो की कोई भी संजोग, परिस्थिति आये सदा सावधान और अडग रहना ही श्रेष्ठ लाक्षणिक्ता है, जगत चाहे जो समझे, जो जाने, जो कहे, जो आलोके पर निश्चित सिद्‌धांत से नही ही डगू। जो मैंने संस्कार पाये है, जो शिक्षा ग्रहि है, जो पुरुषार्थ सिद्‌धे है तो अचल ही रहूँगा - यह आत्म विश्वास सदा श्रेष्ठता के मार्ग पर ही आरूढ करता है।

१७. **सकारात्मक्ता** - कहींओं के मुख से सुने है - जूठे जग को कौन न जाने? ओहह! जूठा जग अर्थात मैं जूठा - क्यूंकी यही जगत में मैं जिंदा हूँ। जग जूठा नही - मान्यता अपनी जूठी है, अर्थ अपना जूठा है, वृत्ति हमारी जूठी है तो जग कैसे जूठा? अर्थात स्व को निखालस बनावो, जो सही है वो है, जो सैद्‌धांतिक है वो है, जो संस्कारी है वो है, जितनी सत्यता स्व संस्कार में उतना ही पुरुषार्थ स्व व्यवहार में। उतनी ही पहचान स्व चरित्र में।

१८॰ **उदेश्य** - जन्म - जीवन और स्व स्वरूप का उदेश्य! स्व के विचार, क्रिया, कर्म, सिद्धि, उपाधि, संस्कार की पहचान स्व जीवन का लक्ष - उदेश्य - हेतु पर आवलंबित है। हर जीव का उदेश्य अवश्य है - जो समझ गया तो उदेश्य संवरता जाएगा - जो न समझा उनका उदेश्य अनिर्णायक से भटकता दूर चूर हो जाएगा। उदेश्य ही जीव जीवन का मुख्य महत्वाकांक्षा है। जो जीवन का पथ, दिशा और कक्षा तय करता है।

१९॰ **स्व मूल्यांकन** - क्षण क्षण का मूल्यांकन हमें सदा सतेज और दिशा सूचक करेंगे। इसीलिए हर विचार, हर कार्य, हर पद्धति, हर निर्णय, हर कक्षा, हर सफलता का मूल्यांकन अति आवश्यक है। इससे प्रेरित होती हर कड़ी हमारे उदेश्य को जकड़ कर रखती है, जो हमें श्रेष्ठता की ओर पहुंचाती है।

२०॰ **भूतकाल** - नयी क्षण नया सूरज उगाती है। जो क्षण गयी उनसे सावधानी से समझ कर नयी क्षण को उत्साह से भर ने स्व को सदा तैयार रखो। अनुसंधान आवकार्य है पर स्वीकार्य वर्तमान और भविष्य का सूरज ही है, यह सूरज हमारी स्व नीति, निधि, विधि से ही आकृत होती है। जिससे भूतकाल योग्य साथी की भांति वर्तमान और भविष्य को उत्तम करने साथ निभाता है।

२१॰ **उत्कृट** - उत्साह और कृति दोनों का समन्वय अर्थात उत्कृट। क्रिया की भूमिका में सिद्धांत है, पद्धति है, उदेश्य है, निधि है इनमें उत्साह का माधुर्य भर दे तो क्रिया पुरुषार्थ में परिवर्तित हो जाती है। क्षण क्षण उत्कृष्ट न कदी निकट आये कष्ट।

२२॰ **हम मनुष्य है अर्थात असाधारण है सामान्य नही**। यह निश्चय अवश्य हममें जिज्ञासा का अखूट भंडार भर देगी, जो घड़ी घड़ी हमें नयी धारा, नये किरण, नये विचार, नये आधारभूत साधनों, नयी तको से हमें न थकावट, न रुकावट, न अवरोधक, न विरोधक मिलेंगे, केवल शोधक, बोधक और साधक ही मिलेंगे। जो हमें असाधारण ही शिक्षित करेगा।

२३॰ **समाज** - समाज अर्थात क्या - लोगों का समूह ! चोककस, पर कैसे लोगों का समूह? जो समूह में योग्यता हो, जो समूह में प्रतिभा हो, जो समूह में सकारात्मक्ता हो, जो समूह में एकता हो, जो समूह में सक्षमता हो, जो समूह में विश्वास हो, जो समूह में ज्ञान - भाव और धर्म हो, जो समूह मे साथ निभाने की सुरक्षा हो, जो समूह में साक्षरता हो, जो समूह में विज्ञान हो, जो समूह में स्वीकारता हो, जो समूह निरपेक्षित हो।

२४॰ **प्राधान्यता** - योग्य संकल्प - योग्य आयोजन - योग्य संगठन - योग्य निर्णय - योग्य दिशा - योग्य शिस्त अचूक उन्हें अनुक्रमित प्राधान्य अंकित करो। विलंबों न करिष्यति - नकारात्मक्ता, अराजकता, अव्यवस्था, अधूरप ज्ञान, अर्धसत्य, अवलोकन, असैद्धांतिक, आक्रोश युक्त आदि को तुरंत ही दूर करो।

२५॰ **निष्ठा** - संकल्प - क्रिया - आयोजन - व्यवस्था - संगठन प्रत्ये निष्ठा अनिवार्य है। निष्ठा से ही उत्साह, उमंग, उत्कृष्टता, सकारात्मक्ता और निर्णय शक्ति मात्रा की अधिकता का संचार होगा जो सदा सफलता ही सिद्ध करती है। निष्ठा से ही विश्वास, आदर, सन्मान मिलेगा।

२६॰ **प्रतिसाद** - जीवन अकेले नही जीते है और जी सकते है। कोई न कोई साथ द्रश्य या अद्रश्य अवश्य होगा ही। यह साथ से सदा अपना मूल्यांकन अचूक मांगो। यह गुण स्व को योग्य मार्गदर्शन कर सकता है। प्रतिसाद स्व के लिए इतना बोधक है - जो स्व में जागता अहंकार - अर्धसत्य - अराजकता - अव्यवहारता - नकारात्मक्ता को नष्ट कर देगा।

२७॰ **स्वाध्याय** - स्व अध्याय अर्थात स्व को सदा अध्ययन में जागृत रखना। अध्ययन में जागृत करना अर्थात स्व में इतनी निपुणता साक्षर करना। स्वाध्याय एक ऐसा माध्यम है मनुष्य जीवन का जो मनुष्य को सदा माधुर्य ही अर्पण करता है। स्व को स्वस्थ - स्व को साक्षर - स्व को आध्यात्मिक - स्व को सैद्धांतिक - स्व को विकसित - स्व को पुलकित - स्व को दर्शित - स्व को अप्राकृत सिद्ध करना स्वाध्याय है।

२८॰ **विवेक** - विवेक अर्थात विशेष एकात्मता। जो भी व्यक्ति अपने संस्कार से, अपने सिद्धांत से, अपने ज्ञान से, अपने सन्मान से, अपने आत्म तत्व से, अपनी कक्षा से, अपने प्रेम से, अपनी विश्वसनीयता से, अपने पुरुषार्थ से, अपनी सिद्धि से, अपने गुणातीत से कोई भी व्यक्ति को समर्पण प्रदान करे वो विवेकी है, श्रेष्ठ है, उत्तम है।

२९. **संस्कार** - संस्कार अर्थात संस्कृत - साक्षर - संरक्षण - सर्जन - समर्पण - सुश्रुत - संशोधन - समांतर - सलामत - संपूर्ण - समृद्ध - संवर्धन - सत्य - समन्वय - सम्बन्ध - समकक्ष - स्वस्थ - स्वाध्याय - स्पष्ट - समाप्त - सुशील - सुचरित्र - शुभ - सद्गुण - सकर्षण - स्मरण - स्वीकृत - स्वमान - सभान - स्वरूप - सत्कर्म - स्वरूपानुसंधान - स्वयं - स्वतंत्र - सचेत - संवेदना - संवाद - सारांश - सर्वोत्तम - सौभाग्य - सुंदर - सुमधुर।

३०. **मृदु वचन** - सरल वचन - स्वच्छ वचन - समझ वचन अर्थात अपने अधर से जो बात भी निकली, स्फुरि, बही, कही, यह स्वर - यह शब्द - यह शब्दावली मधुरता जगाए तो अवश्य समझना हम जीते है, हम अमर है, हम मधुर है। जीने आये है - मारने नही - कुछ जगाने आये है - काटने नही - प्रेम लूटाने आये है - तोड़ने नही।

३१. **आदर्श** - आदर्श अर्थात जो मैंने विकसित किया है स्व को उनका चरित्र्य है - जो मैंने धरा है स्व उनका धर्म बंधारण है - जो मैंने सिंचा है स्व उनका संस्कार है। जो मैंने किया है स्व उनका पुरुषार्थ है। अर्थात जो चारित्र्य श्री कृष्ण का है - जो धर्म श्री वल्लभ का है - जो संस्कार श्री गिरिराजजी का है।

३२. **सिद्धांत** - सिद्धांत अर्थात जो संस्कृत है - जो सिद्ध है - जो सत्य है - जो साक्षर है - जो न्यायी है - जो निर्मल है - जो निर्दोष है - जो नि:हंकार है - जो नि:संशय है - जो निर्लेप है - जो सार्थक है - जो यथार्थ है - जो आधार है - जो मूलत्व है - जो पूर्ण है - जो नि:शेष है - जो विश्वास है - जो श्रद्धा है - जो शुद्ध है - जो पवित्र है।

३३. **मानव अर्थात हम मन से है इसीलिए मानव**। मन - मन कहां से? नही पता - तन कहां से माता पिता से, आत्म कहां से? नही पता। अर्थात पता है केवल देह शरीर - तन जो स्थूल है और जो अस्थूल है सूक्ष्म है वो नही पता - क्यूँ? - अज्ञान - अहंकार - अविद्या। जो सूक्ष्म पहचानने के लिए तो हम जन्म धरे, पुरुषार्थ करे। जैसे श्रीराम - श्रीकृष्ण। जो मानव तन धरे - करें लीलाएं न्यारी एक जीवन आदर्श कहेलाए एक प्रेमानंद कहेलाए।

३४. **करुणा** - क्रिया का ऋण - जो क्रिया का ऋण चुकाए वो है करुणामय - चैतन्य महाप्रभु, मीराबाई, तुकाराम, एकनाथ, शबरी, गंगा, बुद्ध, राम, राधा, कृष्ण, युधिस्थिर, शंकराचार्य। विचलित जगत के अविचलित आत्माएं - करुणा करुणा बहायी - जो व्रज भूमि कहलाई। एक अयोध्या - एक व्रज जहां सदा प्रेम रस लूटाई।

३५. **उमदा** - जो व्यक्तित्व कोई भी प्रत्ये दयालु के साथ साथ परोपकारी हो। न कोई खेवना, न कोई अवहेलना, न कोई मान, न कोई सन्मान परंतु सर्वे ने मान - सर्वे को सन्मान - सर्वे को उपकार - सर्वे को क्षमा - सर्वे केवल मन वांछित सुख पाये चाहे उन्हें कष्ट हो या न हो। जीवन जीने का मूल सिद्धांत यही ही है।

३६. **सक्षम** - स्व को सदा सक्षम अर्थात शिक्षित पाओ। कोई भी संजोग, परिस्थिति, योग, घटित, अघटित हो सदा के लिए तैयार - चाहे सुख हो या दु:ख हो। न कोई मानसिक तनाव - जीवन जीते है तो कुछ भी हो जी लेंगे बिना अस्थिर। न तो कोई से तकलीफ - न खुद से तकलीफ। समय की बहती धारा में कोई ऐसा तरंग तो कोई ऐसा तरंग, हर तरंग में समृद्ध - हर रंग में धैर्य - हर संग में उत्साह।

३७. **भद्र** - भद्र अर्थात योग्य वर्तन। न कभी तिरस्कार - न कभी कटुता - न कभी दोषित - न कभी क्रोधित। सदा मायालु - दयालु - निरालु। सदा मुस्कुराता मुखड़ा - आनंद जगाता मुखड़ा - उत्साह उत्स करता मुखड़ा - क्षमा देता हुआ मुखड़ा अर्थात - अंग अंग सौम्यता - सभ्यता।

३८. **पूजनीय** - नन्हासा हो - छोटासा हो - निम्नता हो - अयोग्यता हो - बड़ा हो - वडील हो - सहधर हो - शिक्षित हो - अशिक्षित हो - गरीब हो - तवंगर हो - रोगी हो - निरोगी हो - सुंदर हो - कुरूप हो - दुर्जन हो - सज्जन हो - स्वार्थी हो - नि:स्वार्थी हो - योग्य हो - लायक हो - सद्गुणी हो - अविवेकी हो - विवेकी हो - लंपट हो - कपटी हो - निर्लज्ज हो - लज्जित हो, जो भी हो - सदा विवेक पूर्ण - शिस्त पूर्ण वचन और व्यवहार करना ही स्व की योग्यता और विशिष्टता है। हर कोई को पूजनीय समझना - स्व की श्रेष्ठ चेष्टा है।

३९. **प्रभावशाली** - अपने कर्म, अपने सूचन, अपने विचार और अपने वचन से हम मृदु और प्रमाणिक हो तो हर कोई को स्व से आनंद मिलेगा - सुख मिलेगा - शुकुन मिलेगा - प्रणाम मिलेगा - रुतवा मिलेगा। जो भी कहा - जो भी किया - जो भी समयसूचकता में योग्य परिस्मृति परिणाम अवश्य एकता सभर वातावरण स्व को उच्चता

प्रदान करेगा और एक ऐसा प्रभाव बिखरेगा की सदा स्वीकार्य।

४०. **अधिकता** - अधिकता अर्थात स्व में और स्व की वैविध प्रवृति। जीवन के और जीवन में आनंद लूटने की और लूटाने की जो जो प्रवृति हो वो करने की ही। शिक्षा हो - खेल हो - धर्मी हो - उत्सवी हो - सुशोभन हो - रंगीन हो - ज्ञान हो - विज्ञान हो - भाव हो - बंधारणीय हो - संस्कार हो - संस्कृति हो - शासकीय हो - सामाजिक हो - नाट्य तरंग हो - संगीत सरगमी हो - साहसीय हो - व्यवहारिक हो - आध्यात्मिक हो - युद्धीय हो। सदा योद्धा।

४१. **यशस्वी** - नीति - नियम - शिस्त - सत्य - विश्वास - नि:कपट - नि:स्वार्थ - निरपेक्षित सिद्धांतों से ही स्व को क्रियाशील करना मनुष्य जीवन की श्रेष्ठता है - उत्तमता है। कहीं प्रकार के व्यक्तित्व साथ साथ जीते है, हर व्यक्ति में कहीं प्रकार के विचार और क्रिया करने की जो स्वतंत्रता है, यही स्वतंत्रता में स्व को समय और सामने है वो व्यक्ति और व्यक्ति समूहको समझ और पहचान कर श्रेष्ठ निधि पूर्णत करे - वो यशस्वी है।

४२. **नियमित** - समय बद्ध - नीति बद्ध - नियम बद्ध - संयम बद्ध - सूचन बद्ध - आयोजन बद्ध - रीति बद्ध - पद्धति बद्ध - वचन बद्ध - कर्म बद्ध - वर्तणुक बद्ध - शिक्षा बद्ध - ज्ञान बद्ध - भाव बद्ध - व्यवहार बद्ध कुशल हो तो सदा बलिहारी - सदा कृतधारी - मनुहारी - संगदुलारी - विद्याधारी - कर्मधारी - पालनहारी - स्नेहधारी - यशधारी - विवेकधारी - समृद्धधारी - विश्वासधारी - प्रेमनिहारी - धर्मधारी - धैर्यधारी।

४३. **सत्कार** - सत्कार अर्थात सत को आकार देने वाले। विचार, क्रिया और आयोजन जो हम सदा सत के सिद्धांतो आधारित ही आदरे तो उनमें से सदा सत ही उत्कृष्ट - प्रकट - उत्पन्न - अंकुरित - स्फुर्ण होता है जो वो ही विचार और क्रिया को सत का ही आकार प्रदान करेगा। स्व को सत्कार पूर्ण संस्कृत करे तो सर्वत्र सुखाकार - मधुराकार - संस्काराकार - आनंदाकार - धर्माकार - निराकार। अदभूत !

४४. **महानुभाव** - ॐ सह नाववतु । सह नौ भुनक्तु । सह वीर्यं करवावहै । तेजस्वि नावधीतमस्तु मा विद्विषावहै । ॐ शान्तिः शान्तिः शान्तिः ॥ मनुष्य जीवन की इतनी श्रेष्ठ और उत्तम सूत्र रचना है यह जिसमें जीवन का सर्व सिद्धांत - मूल्य - नियम - संयमन सिंचित हो गए। जो मनुष्य ने अपनाया वो भावो के भाव महानुभाव - वो ज्ञानो के ज्ञान ज्ञानदाता - वो धर्मो के धर्म धर्मदाता।

४५. **शीलयुक्त** - शील का अर्थ सदा शुद्ध - पवित्र - विश्वास - सत्याग्रही - धर्मग्राही - संस्कारग्रही - सदाचार व्यक्तित्व। जो सदा गतिशील - प्रगतिशील - शीलसंरक्षक - धर्मरक्षक - सत्यरक्षक - जीवनरक्षक - स्वरक्षक - संस्कृतिरक्षक व्यक्ति। यह जीवन का मंच - पृथ्वी अर्थात धरती अर्थात भूमि मंच ऐसा प्रदान किया है की हम कोई भी शीलयुक्त गति - प्रगति स्व पुरुषार्थ से कर सकते है।

४६. **द्रढ़ता से आश्वस्त** - योग्य विचार निधिवत् कार्य सुद्रढ आयोजन हमें सदा स्वस्थ रखता है। न कोई रोग - भोग और योग। चाहे कैसी भी विडंबना समय के भरमार पर आए - कौटुंबिक भरमार पर आए - सामाजिक भरमार पर आए - धार्मिक भरमार पर आए - संस्कार भरमार पर आए - संस्कृति भरमार पर आए - संरक्षण भरमार पर आए। न कोई डर, न कोई असुरक्षित, न कोई अराजकता, न कोई वेदना, न कोई स्पृहता, न कोई द्वेष, न कोई कपट, न कोई हानीकर्ता, न कोई विघ्नसंतोषी हमारा कुछ बिगाड़ सकता है - न कोई नुकसान पहुंचा सकता है या हैरान और कनडगत कर सकता है।

४७. **तारक** - जीवन सागर - भव सागर में यह जीव शरीर नैया को पार उतारना ही यह जन्म जीवन और स्व आत्मा की महत्ता है। हमें मरजीवा, तरवैया, खेवैया, नाविक, मांझी, रखवैया होना है। न कभी डूबना है जीवन की मझधार में - पार उतरना है या उतारना है स्व प्रेम की कस्ती को।

४८. **अधिकार युक्त** - कुटुंब में जीते हो, समाज में जीते हो, विस्तार में जीते हो, कस्बे में जीते हो स्व का संबंध, स्व का व्यवहार, स्व का साथ सर्वे के साथ योग्यता पूर्वक होना है, क्यूंकी कुटुंब से - समाज से - विस्तार से - कस्बे से ही जीवन जीना सीखना है - जीवन को घड़ना है - जीवन को संवारना है। यह संवरते संवरते स्व को योग्य अधिकारी बनाना है, जिससे स्व में कौटुंबिक, सामाजिक और राजतीक व्यवस्था और नीति नियमों की समझ से स्व को योग्य निर्णय करके कुटुंब, समाज और राज्य को समृद्ध करना है।

४९॰ **सामर्थ्यवान** - जीवन की विद्या में निपुणता लाने के लिए सर्वथा से शिक्षा, संस्कार और आयोजन सीखना अति आवश्यक है, जिससे स्व को स्वावलंबी होते हुये कुटुंब, समाज का मार्गदर्शक और मददगार होना है। समय सूचकता, संस्कार सिंचन, शिक्षा समझ, अर्थोपार्जन व्यवस्था, सामाजिक व्यवस्था आदि में स्व को विशिष्टता से अपना गौरव, अपना कर्तव्य, अपना सामर्थ्य प्रस्थापित करना है। जिससे हर व्यक्ति योग्य दिशा और दशा में जीवन ध्येय सिंचित कर सके।

५०॰ **स्वच्छ** - अपने आपको हर तरह से स्वच्छ होना है। स्व शरीर से, स्व विचार से, स्व कार्य से, स्व सूचन से, स्व वर्तणुक से, स्व माध्यम से, स्व पहेनावा से, स्व चलन से, स्व साधनों से, स्व द्रष्टि से, स्व वचन से, स्व कला से, स्व व्यवहार से, स्व धर्म से। जीतने सुघढ और सुबोध इतने योग्य और विशिष्ट। स्वच्छता से निरोगी, तंदुरस्त, सुंगधित, आकर्षक और प्रभावशाली होते है।

५१॰ **मौन** - जीवन की यह समृद्ध और असरकारक भाषा है, जो स्व को और सामने वालेको कहीं तरह का उत्तर, वचन, समझ, निर्णय अपने आप ही पता चल जाता है। इतना श्रेष्ठ संकेत है की सरलता से और योग्यता से स्व को पहचान जाता है और समक्ष जो है वो क्या कह रहा है वो सैद्धांतिक रूप से ख्याल आ जाता है। मौन से आंतरिक शक्ति बढ़ती है और खिलती है। स्व को माधुर्य प्रदान कर्ता है।

५२॰ **सहानुभूति** - सामाजिक प्राणी होने नाते हमें प्रकृति और प्राकृतिक जीव जन्य के साथ साथ जीवन जीते है अर्थात वो भी हमारा ऐसा साथी है जो सदा हमें योग्य वातावरण - योग्य आबोहवा - योग्य वायु - जल प्रदान करने से हमें स्वस्थता मिल सकती है। इससे सभी जीव जन्य की संभाल और रक्षण करना हमारा कर्तव्य है।
साथ साथ जीते मानुषिओं जो कौटुंबिक, सामाजिक आर्थिक, मानसिक और शारीरिक नादुरस्त परिस्थिति में उन्हें संरक्षण देना हमारा कर्तव्य है, जो सदा निभाना है।

५३॰ **टीका, निंदा, नकारात्मक्ता से सदा दूर रहना** है, यही वर्तन स्व, स्व कुटुंब और समाज को अयोग्य दिशा और दशा में परिवर्तित करता है। यह ऐसा दूषण है जो सदा अहंकारयुक्त स्वभाव, विचार और क्रिया की ओर प्रेरित करता है, जिससे भारी नुकसान भुगतना पड़ता है और संबंध विच्छेद होता है, कटुता फैलती है।

५४॰ **आभार व्यक्त करना है** - जब भी कोई भी व्यक्ति, साथी, स्नेही, सामाजिक से कोई स्व उपयोगी, उपकारी, मदद, सहकार प्राप्त तो अवश्य वह व्यक्ति का आभार अवश्य सत्कारो। जो सकारात्मक्ता के साथ साथ एकता का भी संबंध बांधता है जो सदा के लिए योग्यता की ओर प्रयाण करता है, आनंदित संगठन प्रस्थापित करता है।

५५॰ **स्व प्रेम को बनाये रखो** - स्व को प्रेमात्मक बनावो, जिससे जीवन सुखमय और प्रिय होगा। स्व प्रेम से जीवन के हर पहेलु पर विचार, संगठन क्रिया, सकारात्मक सुझाव स्व को आनंदमय रचता है, जिससे कविता, लेख, वार्ता, इतिहास सकारात्मक अनुसंधानो से भर देता है।

५६॰ **निखालस** - सदा निखालसता अपनावो, जो स्व की पहचान श्रेष्ठता से होती है। निखालस ही एक ऐसा माध्यम है जो सदा योग्य समझ, योग्य निर्णय, योग्य संबंध जोड़ सकता है। निखालस ही ऐसा माध्यम है जो स्व को दीर्घद्रष्टि प्रदान करती है, स्व को योग्य शिक्षात्मक शिक्षित कर सकती है।

५७॰ **नियमबद्ध नीति में उदारता अपनावो** - नियम रचना आवश्यक है, जिससे अचूक निभाना ही है - अपनाना भी है - क्रियात्मक करवाना भी है, पर समय, संजोग और स्वभाव आधीन कभी कभी इनमें सुधार और बदलाव करना भी आवश्यक है। शिस्त आधारित नियम का पालन करना ही है पर यही नियम में कभी स्व और समय परिस्थिति से बदलाव की आवश्यकता है तो अचूक त्वरित बदलाव करके समय और स्व का संरक्षण करना ही है।

५८॰ **फूल** - जीवन जीना है तो खुले आसमान की तरह - न कोई कलंक, न कोई आरोप, न कोई अपराध, न कोई अवरोध, न कोई विरोध, न कोई फरियाद, न कोई अपेक्षा, न कोई आशा, न कोई निराशा, न कोई इच्छा, न कोई जीजीविषा, जीवन को संवरना है तो फूलों की तरह - जो खिला तो महकता - सुंदर सा - रूप सा - रंग सा - मुस्कुराता - गाता - डोलता - मधुर सा जो आखरी शरणागति श्रीप्रभु चरण में, श्रीप्रभु शरण में, श्रीप्रभु के अंग पर!

कितना मधुर, उत्तम और श्रेष्ठ जन्म - जीवन - और समर्पण।

५९. **मजबूर** - जीना है जिंदादिली से - कौन डराएँ - कौन दबाएँ - कौन तिरस्कारे - कौन धूतकारे - कौन तरछोड़े - कौन निशाशे - कौन याचे - कौन धमकाएँ - कौन भगाएँ - कौन दुभाएं, कौन हैराने, कौन घुमाएं, कौन लूटाए, कौन बरबादे, कौन दु:खाएँ, कौन लूभाएं, आदि......... पर स्व ही ऐसे तैयार, शिक्षित, योग्य, विश्वनीय हो तो कैसी मजबूरी?

६०. **प्रकृतिमय** - स्व तत्व प्राकृत - स्व जगत प्राकृत - स्व जीवन प्राकृत - स्व क्रिया प्राकृत - स्व पुरुषार्थ प्राकृत - स्व आनंद - स्व प्राकृत जीवों से जीतेजीतेजीवन साधन, शरीर साधन, काल साधन और स्व चित्त साधनों से स्व की पहचान कर के जीते जीते स्व स्व में एकात्म होना है।

६१. **क्षमा** - क्षमा अर्थात अदभूत करुणा - क्षमा अर्थात श्रेष्ठ स्व योग्यता - क्षमा अर्थात उत्तम आत्मीयता। क्षमा केवल असाधारण व्यक्तित्व ही समझ सकते है - प्रदान कर सकते है। जो उत्तम सामर्थ्यवान हो, उत्तम कर्मनिष्ठ हो, उत्तम सुसंगत हो, उत्तम आंतरिक स्वस्थ हो, उत्तम प्रेमी हो, श्रेष्ठ समर्पित हो। क्षमा के पात्र की पहचान अवश्य आवशयक है। क्षमा उन्हें ही मिल सकती है जो क्षमा के काबिल हो, क्षमा से उनमें अचूक परिवर्तन, जागृतता, स्वीकार्य और सत्यता का परिणाम आवश्यक है।

६२. **अनिंदनीय** - डग डग पग पग यह व्यवहार कुशलता हम अपनाते है हमारी सलामती के लिए। पर परनिंदा से हम मार खाते है, हारते है, बरबाद होते है। शायद ऐसा समझे की निंदा से सुख मिलता है, निंदा से आनंद मिलता है, तो ये बहोत बड़ी गलती है, मान्यता है, समझ है। निंदा से खुद मरते है और ओरों को भी मारते है। निंदा से लोई सुख - लाभ - शुकुन - खुशी मिले ऐसा कोई संस्कार नहीं है। जो अनिंदनीय सदा सुखी-आनंदी।

६३. **सदा विश्वासत्मक** - कोई भी व्यक्ति कुछ भी कहें - धैर्य से सुनो और विश्वासत्मक स्वीकार्य बहोत ही उत्तमता प्रदान करती है। सूक्ष्म से भी हम नकारात्मक विश्वास स्वीकारेंगे - समय - काल - मान्यता - अज्ञानता - असमंजसता - अधूरूपता - अशिक्षितता - अव्यवहारता हमें नष्ट कर देगी। सदा विश्वासत्मक से ही सुनो और अपनावों और स्वीकार करो, अवश्य हमें आनंद ही मिलेगा।

६४. **आजकाल अपनी आसपास, निकट नकारात्मक्ता का अति क्रमण कहीं प्रकार से है** - अफवा फैलाना - असत्य विवरण - अयोग्य अहेवाल - झूठा सत्य समझाना - स्व स्वार्थ के लिए कुछ भी करना - भ्रमित वाक्यो की जाल में फसाना - स्व को धुत्कारना - तपास तपास और तपास करते ही रहना - न कोई स्व उच्चारित वचन स्वीकारना - घुमाना और घुमना। न समय की परवाह न संबंध की परवाह - न जवाबदारी की परवाह न स्व मूल्यों की परवाह। ऐसे समय - व्यक्ति और व्यवहार से दूर रहना।

६५. **संरक्षण** - संरक्षण अर्थात स्व का रक्षण द्वेष, दूषण, दुसंग, दुराचार, रोगी, भोगी, लंपट, दुष्ट, दोषी, द्रोही, विरोधी, विक्षेप, ध्वंदी, घमंडी, निष्ठुर, विकृत, अविश्वासु, झूठ, निशाशी, दंभी, दुराग्रही, अधर्मी, अभिमानी, असंतोषी, अवैध, व्यभिचारी, गृहफूटी, गृहटूटी, विघ्नसंतोषी, अविवेकी, अपकीर्ति, दुष्टवचनीय, लोभी, धूर्त, नालायक, वैशि, लूटारु, चोर, प्रलोभनी, स्वार्थी, मूर्ख, असत्य, निम्न, निच, निर्लज्ज, संशयी, संदेही, क्रूर, विश्वासघाती, आडंबरी, संस्कारविहीन आदि व्यक्तियों से स्व स्वरक्षण अति आवश्यक है।

६६. **मूल्य** - मूल्य अर्थात किम्मत - ऋण - आविस्कार - अर्थोपार्जन व्यवहार - मोल - लागत - वेतन - पूंजी आदि, को कौन समझते है, हिसाब लगाते है, गणना करते है। यह एक ऐसा माध्यम है जो सही हिसाब - गणना लगाए तो अचूक वो सदा के लिए तवंगर है। आज जहां भी देखो, व्यवहारो कौन हिसाब लगाता है? गणना गिनते है? समय और तक आधारित मूल्य आंकते है और स्व को होशियार समझ कर एक दूसरे को लूटते है। यह तो केवल बरबादी का ही रास्ता है। इसीलिए तो सब बरबाद है। ज्यादा पैसा आने से ऐसा नहीं समझ सकते है की हमने सही किया! सही में तो हमने सर्व का नुकशान किया और सर्वे को बरबाद होने प्रेरित किया। ज्यादा लिया उन्हें ज्यादा चुकाना ही है - शायद कभी कोई प्रकार बदल जाय - पर ऋण अदा तो करना ही है और पड़ेगा।

६७. **बातें बनाना छोड़ना ही है** - बोलते ही रहना बोलते ही रहना बोलते ही रहना ! पता नहीं लोग सुनते है या नही? जहां सही जीवन होता है, जहां एक दूजे को समझते जीते है, वहां अचूक सुनते ज्यादा होंगे और मौन ज्यादा रहेंगे। नही बोलना एक उत्तम लक्षण है। बातें ज्यादा वो ही करते है जो अज्ञानी है - अधूरे है - अभण है। जो अपनी निम्न उपलब्धियों को तीव्रता से प्रदर्शित करें वो घमंडी, अहंकारी, अभिमानी, दिशाहिन है। जो ज्यादा बोलते बोलते स्व को योग्य सिद्ध करने की मूर्खता करते है।

६८. **उपलब्धियां आकर्षित करें** - जो भी करें उनमें सिद्धांत होगा, उनमें ज्ञान होगा, उनमें आयोजन होगा, उनमें कला होगी, उनमें विद्या होगी, उनमें निस्वार्थ होगा, उनमें साथ होगा, उनमें महेनत होगी, उनमें विश्वास होगा, उनमें उत्साह होगा, उनमें योग्य भूमिका होगी, उनमें एकाग्रता होगी, उनमें साधन उपयोगिता होगी, उनमें पुरुषार्थ होगा तो अवश्य श्रेष्ठता पाएंगे। यही श्रेष्ठता हर एक के लिए मार्गदर्शन हो - यही ही उत्तमता - योग्यता है जो उपलब्धियों में परिवर्तन होती है।

६९. **निरुपाधिक कर्म** - अदभूत ! जीवन का मूल सिद्धांत। जगत में कोई भी कर्म उपाधिक है और हर कोई जो भी कर्म करते है, उनका फल या मूल या उपाधि उन्हें अवश्य मिलेगी ही। भक्त - संत - महात्मा - आचार्य यह सर्वे जीवात्मा निष्कर्मी है। वो जो भी कुछ करते है बिना कोई फल, अपेक्षा, इच्छा, आशा, खेवना करते ही रहते है करते ही रहते है। जैसे सूरज किरण - बादल बरसात - नदी जल - समीर वायु - धरती धान्य - आकाश उत्कर्ष। ऐसे ही कर्म भक्त सेवा से, संत उपदेश से, महात्मा पुरुषार्थ से, आचार्य शिक्षा से निरुपाधिक कर्म करते है।

७०. **आंतरिक खुशी जीवन में औषधि उत्पादन करती है** - अकल्पनीय ! हाँ ! सच ! स्व को स्व खुशी - स्व आनंद से भर दो। यह स्व खुशी जागृत होती है स्व स्थिरता से और स्व स्थिरता जागृत करनी है योग्य जीवन पथ संकल्प - निश्चय और संस्कार से। सामान्यतः जीवन बिना संकल्प - निश्चय और संस्कार से बहोत भरे है - जो हम इन्हें सुख समझते है - पर सैद्धांतिक रूप से वह दु:ख है, अज्ञान है।

७१. **सेवा** - सेवा का अर्थ अनोखा और अलौकिक है। सेवा अर्थात निस्वार्थ - सेवा अर्थात निसंदेह - सेवा अर्थात निसंशय - सेवा अर्थात निर्गुण - सेवा अर्थात स्व समर्पण - सेवा अर्थात स्व साधना - सेवा अर्थात स्व चिंतन - सेवा अर्थात स्व निरीक्षण - सेवा अर्थात स्व परीक्षण - सेवा अर्थात स्व शिक्षण - सेवा अर्थात स्व संस्कार - सेवा अर्थात स्व शुद्धि - सेवा अर्थात स्व सिद्धि - सेवा अर्थात स्वाध्याय।

७२. **स्व को प्रदूषित होने से बचावो** - पदूषण - कितने प्रकार के - अनगिनत। अरे ! क्यूँ अनगिनत? जीव जीवन में प्रवेशता है - जीव जगत में जन्म धरता है - केवल प्रदूषण से। जो भी देखो - जहां भी देखो - जिन्हें भी देखो वह अशुद्ध है, अपवित्र है। तो जो भी उनसे उत्पन्न होगा वह अवश्य प्रदूषित ही होंगे। स्व को प्रदूषित विहीन करना है तो अवश्य आंतर और बाह्य शुद्धि करनी ही पड़ेगी। यह आंतर और बाह्य शुद्धि योग्य शिक्षण और संस्कार से ही शिक्षित होते है।

७३. **भविष्य को जानने की नही, चुनने की चेष्टा करें** - भविष्य अर्थात क्या? आपको पता है भविष्य का अर्थ - नही। भविष्य का अर्थ असंगत है - अनिश्चित है - अनिर्णीत है - अनिर्मित है - अकारण है। मान्यता से जो माने भविष्य का अर्थ परंतु सैद्धांतिक और सत्य आधारित भविष्य का अर्थ केवल एक आकांक्षा है - एक आशा है - एक आधार है - एक आश्वाषन है - एक झंखना है - एक खेवना है - एक स्वप्न है। जो शायद पा सके उन्हें क्यूँ स्वीकारना, जो शायद सिद्ध हो सके उनके पीछे क्यूँ दौड़ना। सही में तो स्व को ऐसा धरना - जागृत करना - शिक्षित करना - संस्कृत करना - साक्षर करना जिससे स्व जो चुने वो पा सकु - वो स्वीकार कर सकु - वो उपयोग कर सकु - वो उपभोग कर सकु - वो लूटा सकु।

७४. **खड़े न रहो सदा के लिए योग्य उम्मीद करते करते दौड़ो** - जो थंभ गया वो मर गया। हमारी द्रष्टि, विचारधारा, कर्मधारा को ऐसे विकषित करो जिससे हम योग्यता पूर्वक दौड़ते रहे। यह द्रष्टि स्व शिक्षण और संस्कार से ही उत्तेजित होती है। जो उम्मीद पा ली - वही उम्मीद में सामाजिक मूल्यों की योग्यता घड़ने की -

शिक्षित करने की - सेवा करने की - संस्कार भरने की उम्मीद सम्मलित कर दो। जीवन मधुर हो जाएगा।

७५. **मान्यता को तोड़ - जीवन सत्यता को पकड़ो** - समाज की रूढ़िचुस्तता, धर्म के बंधनो - नियमों, कुटुंब की अंधश्रद्धा और मान्यताओं, असहिष्णु रीति रिवाजो, बाधाओं और टोटकाओं आदि सिद्धांत विरुद्ध - अस्वीकार - अमान्य मानसिक, शारीरक, धार्मिक और सामाजिक अनुसंधान बंधनो को तोड़ना ही पड़ेगा और जो सत्य और सिद्धांत रहित है उन्हें अपनाना और स्वीकारना ही हमारी उत्तमता है।

७६. **अपने भीतर ही उलझनों को सुलझाये** - समान्यत आज के जीवन में उलझनों को इतनी अहेमियत देते है - जिसकी ज्यादा उलझनें वह व्यक्ति महान - उत्तम - श्रेष्ठ। उनसे ही हर बात का सलाह मशवहरा करना, वो ही योग्य मार्गदर्शन कर सकते है या उलझन सुलझा सकते है। सिद्धांत से ये योग्य नही है - सही में स्व उलझन स्व को ही सुलझानि है - यही योग्य है। प्राथमिक तो उलझन कैसे? अपने विचार से - मन से - चिंतन से - ज्ञान से - भाव से - शिक्षा से - समय से स्थिति से - साथ से - कुटुंब से - अज्ञान से - असमंजस से - रोग से - विरोध से - स्वभाव से आदि। स्व ही सुलझा सकता है - गहराई से सोचे की मुझसे उलझन - मेरी उलझन सिर्फ मुझसे ही सुलझ सकती है। न कोई मार्गदर्शन कर सकता है, सूचन कर सकता है। स्व को शिक्षित करना ही हर उलझनों की सुलझन है।

७७. **जीवन में क्या पाना है, स्वयं ही निर्धारित कर सकते है** - जीते जीते बढ़ते बढ़ते हम अपने आपको कहीं तरह से काबिल और योग्य समझने लगते है, यही समझ से अपनी अंदर कहीं प्रकार के आयोजन, इच्छा, ध्येय, लक्ष, स्वप्न, संकल्प आदि तय करते है। यह हर तय स्व के आयोजन, शिक्षा, स्व उपयोगिता, स्व संचालन, स्व निरीक्षण, स्व निरूपण, स्व उत्तेजना, स्व पुरुषार्थ, स्व अनुभव से ही निर्धारित कर सकते है। दूसरे के आयोजन, लक्ष, विचार और पुरुषार्थ से स्व कुछ नही पाते है।

७८. **स्व शरीर की पूर्ण क्षमता को जागृत करो** - शरीर हम क्या जानते है यह साधन को? सच कहें शरीर को जानना अति आवश्यक है, क्यूंकी इनसे ही हम हमारी यात्रा पूर्ण कर सकते है। बिना शरीर हम कुछ नही कार सकते है। शरीर के हर अंग, हर इंद्रियाँ, हर कोष अति महत्वपूर्ण है। जीव विज्ञान - शरीर विज्ञान नही पढ़ें है पर शरीर तो है। शरीर की आंतरिक और बाह्य क्षमता अदभूत और अलौकिक है - जिससे हम सर्व हांसील कर सकते है। बिना शरीर कुछ भी नही है हम।

७९. **सफलता के लिए सदा समान रहना है** - जहां जहां द्रष्टि पड़े आपकी - न कोई समान होगा - न कोई सफल होगा, क्यूँ? देखलों - अनुभवो - अपनालो - प्रमाण लो! हाँ ! नही है कोई - क्यूंकी असमानता की मात्र अधिक है। यह असमानता अनेकों प्रकार की है - जो स्व से ही है। यह असमानता केवल समान गुणों - समान सिद्धांतों - समान क्रियाओ - समान धर्म धारणा - योग्य शिक्षण और संस्कार से ही नष्ट होती है। नही तो पल पल - क्षण क्षण - विचार विचार - क्रिया क्रिया - धारण धारण असमानता ही उठती है।

८०. **सदा स्वतंत्र हो** - आज हम कितने परतंत्र है - साधनो से परतंत्र, साथीओ से परतंत्र, कुटुंब से परतंत्र, समाज से परतंत्र, जगत से परतंत्र, क्रिया से परतंत्र, विचार से परतंत्र, शिक्षा से परतंत्र, विद्या से परतंत्र, अर्थोपार्जन से परतंत्र, ज्ञान से परतंत्र। हम सदा परतंत्र है और आदि है। कभी भी स्वतंत्र रहने की कल्पना नही कर सकते है। स्वतंत्र का अर्थ ही हमने उलटपुलट कर दिया है - तो स्वतंत्र रहे कैसे? स्वतंत्र रहने के लिए स्व को जागृत करना ही करना है। स्व की जागृतता के बिना हमारा कोई तंत्र योग्य चलेगा भी नही और चला पायेंगे भी नही। स्वतंत्र के लिए स्व अध्ययन, स्व संपर्क, स्व संबंध, स्व कृति, स्व ज्ञान, स्व भान आवश्यक है।

८१. **अपने जीवन में दैव पुरुष उत्पन्न करें** - जीवन को ऐसे सिद्धांत और संस्कार से घड़ो की बहेते जीवन में सदा पौरुष्य जागृत हो। पौरुष्य अर्थात शोर्य - उत्साह - कला - विद्वता - संगीत - रंग - स्वररागिनी - दिव्यता - पारंगतता - निपुणता - मधुरता - विश्वसनियंता - वचनसार्थकता - साक्षरता - प्रगति - शिस्तता - विशिष्टता - वैविध्यता - कुशलता - कौशल्य - रूपता - स्वरूपता सिद्ध करें। जब भी हम आनंदित रहते है हम दैव पुरुष उत्पन्न करते है और जब भी हम घृणा, द्वेष, क्रोध, कपट में रहते है - करते है हम असुर अर्थात राक्षस उत्पन्न

करते है।

८२. **यह शरीर अपना है उन्हें सदा शुद्ध और पवित्र रखने की कोशिश करें** - हाँ! बहोत ही गहरी बात है यह, हम अपना शरीर को शुद्ध और पवित्र कब रखते हो? कभी नही। क्यूँ - हमें समझ ही नही शुद्धता और पवित्रता क्या है? जन्म से ही शुरू होती है दवा - दारू ० बड़े होते होते होते शुरू होती है कौटुंबिक असाध्य मानसिक रोग ० युवान होते ही शुरू होती है भरण पोषण का दबाव ० और थोड़े बड़े होते है गृह गृहस्थ का दबाव - जोड़ दिये जगत के हर रोग अपने शरीर में जितनी दवाएं है - सोच लें - हम तंदुरस्त कब है और थे? क्यूंकी न मन तंदुरस्त न तन तंदुरस्त न धन तंदुरस्त तो जीवन तंदुरस्त कैसे? तो जीना ही क्यूँ?
यह नकारात्मक्ता नही है पर जागृतता है। सूक्ष्मता से अध्ययन करो - चिंतन करो - स्व को शांत कर के सोचो - सच में हम क्या क्या कर रहे है? जब तक स्व को बलवान नही करोगे तो हर परेशानी आयेगी, स्व को शिक्षित - अभ्रमित - स्थिर - समझदार - योग्य करना ही है।
८३. **कर्मकांड** - कर्म को श्रेष्ठता से शिक्षित करें उन्हें कर्मकांड कहते है। आज यह कर्मकांड अंधश्रद्धा से भरा, दुर्व्यवहार से भरा, डर से भरा, क्षोभ से भरा है। सही में कर्मकांड श्रद्धा को बुलंद करता है - व्यवहार को शुद्ध करता है - निडर बनाता है - उत्साह से ऊर्जित करता है। कर्मकांड की भूमिका और व्यवस्था जीवन को क्षेमकुशल, मधुर और दिशासूचक है। जीवन को आनंदित, ऊर्जावान, धैर्यवान, पौरुष्यवान करने का माध्यम है।
८४. **कृपा** - जीव की स्वतंत्रता केवल कृपा से होती है। कृपा ही मूल है, कृपा ही सार है। कृपा पाने का माध्यम क्या है?
पुरुषार्थ अर्थात कृपा। सामान्यत कृपा को हम कैसे कैसे माध्यम से अर्थ करते है
१. आशीर्वाद से
२. दर्शन से
३. स्पर्श से
४. द्रष्टि से
५. वचन से
६. याद से
७. ज्ञान से
८. भाव से
९. स्मरण से
१०. विद्या से
११. साथ से
१२. मदद से
१३. इच्छित क्रिया सम्पन्न से
१४. प्रसाद से
१५. आमंत्रण से
१६. गृह पधरामणी से
१७. सन्मान से
१८. आज्ञा से
१९. सम्बन्ध से
२०. अपनाने से
२१. स्व सुख की अनुभूति से

२२. चरण रज से

२३. चरण स्पर्श से

२४. सेवा से

२५. मेवा से

२६. ऐसे कहीं मान्यता भरे सुख को हम कृपा मानते है।

पर

सत्य से

यह कृपा का अनुभव या समझ कैसे होगी?

सत्संग में जाएंगे - दर्शन करने जाएंगे - प्रसाद पाएंगे - भजन करेंगे तो हम कहेंगे उनकी कृपा है - बाकी मेरा मन तो, मेरा तन तो, मेरा धन तो, मेरा जीवन तो...... ओहह कितनी बड़ी दुर्बलता।

२७. जिनकी कृपा बिना कोई गति नही

कृपा - कृ का अर्थ कर्म, पा का अर्थ पाना - कर्म पाना अर्थात कृपा। कर्म नही तो प्राप्ति नही अर्थात बिना क्रिया नही कृपा।

कृपा अर्थात करुणा - जो अहेतुक सेवा करे उन्हें कृपा प्राप्त होती है और उनमें करुणा जागती है।

सकारात्मक स्पंदन पुष्टि
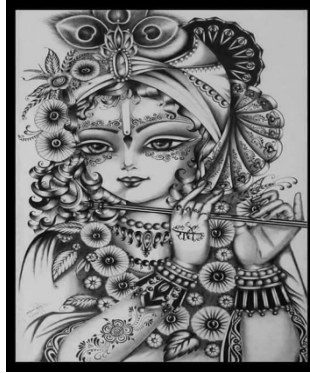
"Vibrant Pushti"
Inspiration of vibration creating by experience of
life, environment, real situation and fundamental elements

"Vibrant Pushti"
53, Subhash Park, Sangam Char Rasta
Harni Road, City: Vadodara - 390006
State: Gujarat, Country: India
Email: vibrantpushti@gmail.com

" जय श्री कृष्ण "